

D.El.Ed.

DIPLOMA IN
ELEMENTARY EDUCATION

प्रारंभिक शिक्षा में पत्रोपाधि

(डी.एल.एड.)

हिंदी भाषा शिक्षण

द्वितीय वर्ष



राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
छत्तीसगढ़, रायपुर

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक ¹[संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की स्वतंत्रता,

प्रतिष्ठा और अवसर की समता

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और ²[राष्ट्र की एकता

और अखंडता] सुनिश्चित करने वाली बंधुता

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को एतद्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "राष्ट्र की एकता" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

प्रारंभिक शिक्षा में पत्रोपाधि (डी.एल.एड.)

Diploma in Elementary Education (D.El.Ed.)

हिन्दी शिक्षण स्तर-2

द्वितीय वर्ष

प्रकाशन वर्ष-2021



राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्,
छत्तीसगढ़, रायपुर



प्रकाशन वर्ष—2021

हिन्दी भाषा शिक्षण स्तर—2

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

डी. राहुल वेंकट I.A.S.

संचालक

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर

पाठ्य सामग्री समन्वय

डेकेश्वर प्रसाद वर्मा

विषय संयोजक

डेकेश्वर प्रसाद वर्मा

डॉ. विद्यावती चन्द्राकर

विशेष सहयोग

आर.एस. बघेल

पाठ्य सामग्री संकलन एवं लेखन

एकलव्य भोपाल, अजीम प्रेमजी फाउण्डेशन बैंगलुरु,

छत्तीसगढ़ शिक्षा संदर्भ केन्द्र रायपुर, विद्या भवन सोसाईटी उदयपुर,

लैंग्वेज लर्निंग फाउंडेशन, नई दिल्ली

आवरण एवं लेआउट

सुधीर कुमार वैष्णव, हिमांशु वर्मा

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर उन सभी लेखकों/प्रकाशकों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता है जिनकी रचनाएँ/आलेख इस पुस्तक में समाहित हैं।

प्राक्कथन

विद्यालय में अध्ययनरत बच्चे भविष्य में राष्ट्र का स्वरूप व दिशा निर्धारण करते हैं तथा विद्यालय शिक्षक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में किसी अन्य विकासात्मक प्रसास की तरह समाज की बदलती आवश्यकताओं और मांगों को पूरा करने के लिए निरन्तर प्रयासरत रहते हैं।

“शिक्षा बिना बोझ के” यशपाल समिति की रिपोर्ट (1993) के अनुसार शिक्षकों की तैयारी के अपर्याप्त अवसर से स्कूल में अध्ययन-अध्यापन की गुणवत्ता प्रभावित होती है तथा कोटारी आयोग (64-66) से भी स्पष्ट है कि शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए शिक्षकों को बतौर पेशेवर तैयार करना अत्यंत जरूरी है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 में भी शिक्षकों की बदलती भूमिका को रेखांकित किया गया है। आज एक शिक्षक के लिए जरूरी है कि वह बच्चों को जाने, समझे, कक्षा में उनके व्यवहार को समझे, उनके सीखने के लिए उपयुक्त माहौल तैयार करें, उनके लिए उपयुक्त सामग्री व गतिविधियों का चुनाव करे, बच्चों की जिज्ञासा को बनाए रखें उन्हें अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करें उनके अनुभवों का सम्मान करें। तात्पर्य यह कि आज की जटिल परिस्थितियों में शिक्षकों की भूमिका कहीं अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण व महत्वपूर्ण हो गई है।

इसी परिप्रेक्ष्य में शिक्षक-शिक्षा को और कारगर बनाने की आवश्यकता है। शिक्षक-शिक्षा में आमूल-चूल परिवर्तन की आवश्यकता बताते हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 में शिक्षकों की भूमिका के संबंध में कहा गया है “सीखने-सिखाने की परिस्थितियों में उत्साहवर्धक सहयोगी तथा सीखने को सहज बनाने वाले बनें जो अपने विद्यार्थियों को उनकी प्रतिभाओं की खोज में, उनकी शारीरिक तथा बौद्धिक क्षमताओं को पूर्णता तक जानने में, उनमें अपेक्षित सामाजिक तथा मानवीय मूल्यों व चरित्र के विकास में तथा जिम्मेदार नागरिकों की भूमिका निभाने में समर्थ बनाएँ।”

प्रश्न यह है कि शिक्षक को तैयार कैसे किया जाए? बेहतर होगा कि विद्यालय में आने के पूर्व ही उसकी बेहतर तैयारी हो, इसके लिए उसे विद्यालय के अनुभव दिए जाएँ। इसीलिए शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम व विषयवस्तु को पुनः देखने की जरूरत महसूस हुई, और डी.एल.एड. के पाठ्यक्रम में बदलाव किया गया है।

पाठ्यसामग्री का लक्ष्य शिक्षा की समझ, विषयों की समझ, बच्चों के सीखने के तरीके की समझ, समाज व शिक्षा का संबंध जैसे पहलुओं पर केन्द्रित है। पाठ्यक्रम में शिक्षण के तरीकों पर जोर देने के स्थान पर विषय की समझ को महत्व दिया गया है। साथ ही शिक्षा के दार्शनिक पहलू को समझने, पाठ्यचर्या के आधारों को पहचानने और बच्चों की पृष्ठभूमि में विविधता व उनके सीखने के तरीकों को समझने की शुरुआत की गई है।

चयनित पाठ्यसामग्री में कुछ लेखक/प्रकाशकों की पाठ्य सामग्री प्रशिक्षार्थियों के हित को ध्यान में रखकर उनके मूल स्वरूप को लिया गया है। कहीं-कहीं स्वरूप में परिवर्तन भी किया गया है, कुछ सामग्री अंग्रेजी की पुस्तकों से ली गई है। हमारा प्रयास यह है कि प्रबुद्ध लेखकों की लेखनी का लाभ हमारे भावी शिक्षकों को मिल सके। इग्नू और एन.सी.ई.आर.टी. सहित लेखकों/प्रकाशकों की पाठ्यसामग्री किसी भी रूप में उपयोग की गई है, हम उनके हृदय से आभारी हैं। हम विद्या भवन सोसायटी उदयपुर, दिगंतर जयपुर, एकलव्य भोपाल, अजीम प्रेमजी फाउण्डेशन बेंगलुरु, आई.सी.आई.सी.आई. फाउण्डेशन पुणे, आई.आई.टी. कानपुर, छत्तीसगढ़ शिक्षा संदर्भ केन्द्र रायपुर के आभारी हैं जिनकी टीम ने एस.सी.ई.आर.टी. और डाइट/बी.टी.आई.के संकाय सदस्यों के साथ मिलकर पठन-सामग्री को वर्तमान स्वरूप प्रदान किया।

अंत में पाठ्यसामग्री तैयार करने में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े सहयोगियों का हम पुनः आभार व्यक्त करते हैं। पाठ्यक्रम तैयार करने पाठ्य सामग्री के संकलन व लेखन कार्य से जुड़े लेखन समूह सदस्यों को भी हम धन्यवाद देना चाहेंगे जिनके परिश्रम से पाठ्य सामग्री को यह स्वरूप दिया जा सका। पाठ्य-सामग्री के संबंध में शिक्षक -प्रशिक्षकों, प्रशिक्षार्थियों के साथ-साथ अन्य प्रबुद्धजनों, शिक्षाविदों के भी सुझावों व आलोचनाओं की हमें अधीरता से प्रतीक्षा रहेगी जिससे भविष्य में इसे और बेहतर स्वरूप दिया जा सके।

रायपुर
वर्ष 2021

संचालक
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्,
छत्तीसगढ़, रायपुर

विषय—सूची

इकाई	अध्याय	पेज न.
इकाई—1	बच्चों में भाषा विकास —	01—38
	1 भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य : कुछ प्रचलित मान्यताएँ	
	2 बालक की मातृभाषा एवं भाषाई क्षमता	
	3 भाषा शिक्षण के उद्देश्य	
	4 भाषा की कक्षा कैसी हो?	
इकाई—2	भाषा व विचार — व्यक्तिगत विकास में भाषा की भूमिका —	39—64
	5 भाषा व विचार	
	6 भाषा और विचार का संबंध	
	7 भाषा व्यक्ति के लिए क्यों आवश्यक है?	
	8 भाषा का सीखने — सिखाने से संबंध	
इकाई—3	पुस्तकालय एवं बाल—साहित्य —	65—110
	9 पुस्तकालय का उपयोग क्यों व कैसे	
	10 कक्षा में अन्य पुस्तकें	
	11 कहानी कथन कौशल	
	12 बाल साहित्य माने क्या?	
	13 क्या—क्या हो बच्चों की एक किताब में	
	14 संकलित बाल साहित्य एवं गतिविधियाँ	

विषय-सूची

इकाई	अध्याय	पेज न.
इकाई-4	साहित्य की अनुभूति –	111-140
	15 साहित्य की अनुभूति	
इकाई-5	हिन्दी भाषा व उसका व्याकरण –	141-172
	16 हिन्दी भाषा व उसका व्याकरण	
इकाई-6	इम्तहान/आकलन –	173-200
	17 आकलन (NCERT Handbook)	
	18 मूल्यांकन (एन.सी.एफ.)	
	19 मूल्यांकन क्यों?	
	सीखने के प्रतिफल, कक्षा- 6 से 8	201-206

इकाई -1

बच्चों में भाषा विकास

अध्याय : 1. भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य : कुछ प्रचलित मान्यताएँ :

अध्याय : 2. बालक की मातृभाषा एवं भाषाई क्षमता :

अध्याय : 3. भाषा शिक्षण के उद्देश्य :

अध्याय : 4. भाषा की कक्षा कैसी हो? :

अध्याय – 1

भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य : कुछ प्रचलित मान्यताएँ

परिचय :

भाषा और भाषा शिक्षण के प्रथम वर्ष के कोर्स में हमने यह जानने का प्रयास किया था कि बच्चे जब विद्यालय आते हैं तब वे भाषा के मामले में एक वयस्क होते हैं। बच्चों में भाषा सीखने की जन्मजात क्षमता होती है। वे न केवल दो या तीन भाषाओं को समझ एवं बोल लेते हैं वरन् उनका सही-सही उपयोग भी कर लेते हैं। जब बच्चे के पास इतनी भाषायी क्षमताएँ हैं तो फिर स्कूल/कक्षा में भाषा सीखना-सिखाना कैसा हो? बहुत लम्बे समय से भाषा शिक्षण के उद्देश्य को महज सुनने-बोलने-पढ़ने-लिखने संबंधित कौशलों तक सीमित देखा जाता रहा है। लम्बे समय तक पाठ्यपुस्तकें, कक्षा-शिक्षण, शिक्षक-प्रशिक्षण व मूल्यांकन की कवायदें भी इन्हीं मुद्दों पर केन्द्रित रही हैं। इन क्षमताओं व कुशलताओं पर अतिरिक्त फोकस के परिणाम स्वरूप भाषा शिक्षण की कक्षाएँ भी नीरस और ऊबाऊ नजर आती हैं और पाँच वर्षों की प्राथमिक शिक्षा पूरी कर लेने के बाद भी कई बच्चों की मौखिक अभिव्यक्ति कुंद पड़ जाती है और वे पढ़ना-लिखना भी नहीं सीख पा रहे हैं। स्कूली शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य बच्चे को इस प्रकार से साक्षर बनाना होना चाहिए कि बच्चा समझने के साथ पढ़ने व लिखने की क्षमता हासिल कर सके। धीरे-धीरे वह पढ़ने-लिखने में आत्मनिर्भर बने व स्वयं ही ज्ञान के विभिन्न स्रोतों तक पहुँचने, उनको पढ़कर समझने, विश्लेषण करने की काबिलियत प्राप्त कर सके। सवाल यह उठता है कि इस लक्ष्य तक पहुँचने में बच्चों की मदद कैसे की जाए? कैसे उनको पढ़ने-लिखने में आत्मनिर्भर बनाया जाय? इस अध्याय में हम इन्हीं कुछ मुद्दों तथा भाषा सीखने-सिखाने के उद्देश्यों के बारे में बात करेंगे। यहाँ यह भी समझने का प्रयास है कि कैसे हमारी भाषा की समझ, बच्चों के प्रति नजरिया, उनके सीखने के प्रति नजरिया भाषा शिक्षण को प्रभावित करता है।

उद्देश्य :

- भाषा शिक्षण के प्रति शिक्षकों के नजरिये को समझ पाएँगे।
- भाषा माने क्या को व्यापकता में समझ पाएँगे।
- भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को समझ पाएँगे।
- भाषा-शिक्षण टुकड़ों-टुकड़ों में ना सिखाकर समग्रता में सिखाएँ के बारे में समझ बना पाएँगे।
- भाषा शिक्षण में पाठ्यपुस्तक के साथ-साथ अन्य पठन सामग्रियों के महत्व को समझ पाएँगे।

भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य

आपने प्राथमिक कक्षाओं में वर्णों की पहचान और वर्णों को लिखना सिखाने पर केन्द्रित भाषा-शिक्षण की कवायद ज्यादातर विद्यालयों में घटते हुए देखी होगी। बहुत ही कम विद्यालयों में देखने को मिलता है जहाँ पर किया जाने वाला शैक्षणिक कार्य सही मायनों में बच्चों की भाषाई क्षमताओं के विकास में सहायक हो। भाषा-शिक्षण की शुरुआत में सिर्फ वर्णों की पहचान और वर्णों को लिखना सिखाने पर केन्द्रित अभ्यास कार्य ज्यादातर विद्यालयों में करवाए जाते हैं। भाषायी विकास के लिए बच्चों को ऐसे पर्याप्त मौके उपलब्ध नहीं हो पाते हैं जो उन्हें अपनी भाषा में सोचने, विचारने, कल्पना करने और विश्लेषण को बढ़ावा देते हों। भाषा शिक्षण

के वर्तमान परिदृश्य को समझने के लिए भाषा की दो कक्षाओं के दिये गये अवलोकनों को पढ़ते हैं व उन पर चर्चा करते हैं।

कक्षा 1

विद्यालय की साफ-सफाई व शिक्षण सभा के बाद कक्षा-2 में कुछ देर बाद भाषा शिक्षण का कालांश प्रारंभ होने वाला है। यह स्कूल एक आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र में स्थित है। कक्षा कक्ष में बच्चे इधर उधर घूम रहे हैं। शिक्षक बच्चों को अपनी-अपनी जगह पर बैठने को कहते हैं पर कुछ बच्चे अभी भी इधर उधर घूम रहे हैं। कुछ बच्चे पानी पेशाब हेतु बाहर गये हुए हैं। तब तक शिक्षक भाषा पर काम हेतु सामग्री जुटा लेते हैं। भाषा के कालांश का समय प्रारंभ होने पर कक्ष में लगभग सभी बच्चों के होने पर शिक्षक उन्हें गोल घेरे में बैठ जाने को कहते हैं। शिक्षक स्वयं भी बच्चों के घेरे में बैठ जाते हैं। फिर—

शिक्षक – पहले अपन आज की कोई खास बात लिखेंगे। तो आज की बात कौन बताएगा?

बच्चों ने बताना शुरु किया। – देहर गुरुजी बारह बजे पढ़े बर आइस।

दुहु ह तो एक बजे आइस हे।

“ये हर तो तास खेलत रिहिस से (समूह में उपस्थित बालिका की तरफ इशारा करते हुए), लड़की रोने लगी”

“महेश ला रात कुन बुखार धर ले रिहिस हे”

बच्चों ने उत्साह से ये बातें बताईं। शिक्षक ने भी स्वयं की बात बताई—“मोर गांव देवरी में तिहार के दिन एक के इहां, उंकर घर के उपर बने पटहउवा ले लइका गिर गे तभो ले उहे के अस्पताल म औला भरती करे बर परगे। धन तो जादा नइ लागिस ” बच्चे इस बात पर आश्चर्य चकित होते हुए पूछने लगे कि बच्चे को कहाँ चोट लगी है। इस पर शिक्षक ने बताया कि मैंने उसे देखा नहीं बस लोगों से सुना है।

अब शिक्षक ने बच्चों को कहा कि वे अपनी-अपनी बात को दीवार पर बनी काली पट्टी या बोर्ड पर लिख दें। शिक्षक ने बच्चों को चॉक दिये और सभी बच्चे अपनी-अपनी बात लिखने लगे। कुछ शब्द या वाक्य बच्चों द्वारा लिखे गये जो कि निम्नलिखित हैं –

बाबा लाला लघिसीब चानुर चामर टाकर पटई बासवला पत पाता कयो सपेस तोता सीता “एक मड़ा बर बाजे आअ कपटोर पढ़खी

अब शिक्षक ने बच्चों से पूछा “क्या सभी बोर्ड पर अपनी बात लिख चुके हैं?” बच्चों ने कहा— हाँ। आज हम नया चित्र लाए हैं। शिक्षक ने बादल का चित्र दिखाते हुए बच्चों से कहा। (चित्र के नीचे बादल लिखा हुआ है।)

शिक्षक – हाँ क्या लिखा हुआ है।

बच्चे एक साथ – बादल.....

शिक्षक ने बादल का चित्र दिखाते हुए बच्चों से कुछ बातें की जैसे बादल कैसे लगते हैं? कब दिखते हैं? आदि। इसके बाद शिक्षक ने बच्चों से कहा—अच्छा इसे दीवार पर लगा दें। (दीवार पर पहले से हाथी चींटी आदि चार्ट लगे हुए हैं) शिक्षक पन्ने को लगाने के लिए खड़ा होता है तो सभी बच्चे आकर उसे घेर लेते

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

हैं। शिक्षक बच्चों से पूछते हैं? कि कहाँ लगाएँ तो बच्चे अपनी-अपनी पंसद से दीवार की जगह को चिन्हित करने लगते हैं। आखिरकार शिक्षक बच्चों की पंसद के आधार पर पन्ने को टेप की सहायता से दीवार पर चिपका देते हैं। अब शिक्षक ने सभी बच्चों को पुनः गोल घेरे में बैठाया और आगे की योजना पर बात की। योजना अनुसार शिक्षक बच्चों को समूहवार नाम लेकर बारी-बारी से बुलाते हैं और दिया हुआ काम समझाते हैं। बच्चे अपनी मन चाही जगह पर बैठकर अपना-अपना काम करने में व्यस्त हो जाते हैं।

कुछ प्रश्न :

- आज की कोई खास बात बच्चों से पूछने और चर्चा करने, बोर्ड पर लिखवाने के पीछे शिक्षक की क्या सोच रही होगी?
- आपके अनुसार शिक्षक जिस तरह भाषा शिक्षण पर काम कर रहे हैं उससे बच्चों को भाषा सीखने में कितनी मदद मिल पाएगी?
- क्या आप मानते हैं कि बच्चों के उप समूह बनाने व उप समूहों में बैठ कर चर्चा करने के दौरान शिक्षक की कक्षा में शोरगुल हो रहा होगा? इससे बच्चों का सीखना किस प्रकार से प्रभावित होगा?
- कक्षा में चल रही शिक्षण प्रक्रिया से आप कितने सहमत हैं? अपने सहमत/असहमत होने के आधार प्रस्तुत करें।

कक्षा-2

यह विद्यालय ब्लाक मुख्यालय से लगभग 10 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। विद्यालय नियत समय पर खुला और प्रार्थना के बाद उपस्थिति लेने के उपरान्त शिक्षण कार्य प्रारंभ किया गया। शिक्षक ने कक्षा एक के बच्चों से वर्णमाला वाला पाठ निकाल कर वर्णमाला लिखने के लिए कहा। कुछ बच्चों ने पाठ्यपुस्तक का अंतिम पाठ निकाला और कुछ ने पट्टी पहाड़ा और वर्णमाला लिखना आरंभ कर दिया। बच्चे पंक्तियों में बैठे हुए लिख रहे हैं और शिक्षक ब्लैकबोर्ड के नजदीक कुर्सी लगाकर बैठे हुए हैं। लगभग आधा घंटे बाद कुछ बच्चे ककहरा लिख-लिख कर शिक्षक को दिखाने के लिए जाने लगे। शिक्षक ने बच्चों की कापियाँ ध्यान पूर्वक देखीं और कापियों में कुछ जगहों पर गोले लगाये और कुछ जगहों पर सही के निशान। शिक्षक ने जहाँ जहाँ पर घेरे बनाये थे बच्चे उन आकृतियों को पुनः सुधार करके लिख रहे थे।

भोजन अवकाश के बाद शिक्षक बोर्ड पर फिर वर्णमाला लिख देते हैं। और कक्षा के एक छात्र को बोर्ड पर लिखी वर्णमाला को पढ़ने के लिए कहते हैं। छात्र वर्णमाला पर डंडा रखते हुए बोलता है— क कमल का, अन्य बच्चे दोहराते हैं—क कमल का.....ख खरगोश का..... ग गणेश का.....। लगभग यह प्रक्रिया एक घंटे तक चली। इसके बाद शिक्षक ने बच्चों को वर्णमाला लिखकर लाने का गृहकार्य दिया।

कुछ प्रश्न :

- आपके अनुसार यह शिक्षक जिस तरह भाषा शिक्षण पर काम कर रहे हैं उससे बच्चों को भाषा सीखने में कितनी मदद मिल पाएगी?
- कक्षा - 2 में चल रही शिक्षण प्रक्रिया से आप कितने सहमत हैं? अपने सहमत/असहमत होने के आधार प्रस्तुत करें।

भाषा शिक्षण के प्रति वर्तमान दृष्टिकोण

आपने देखा कि उपर्युक्त दोनों ही कक्षाओं में भाषा शिक्षण के दौरान भाषा और भाषा शिक्षण के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कई मौकों पर शिक्षक चर्चा के दौरान बताते हैं कि कक्षा 5 के बच्चे भी कहानी सुनाना, कविता सुनाना, अपनी बात को बोलकर या लिखकर अभिव्यक्त करना, समझकर पढ़ना इत्यादि काम नहीं कर पाते। ये सब बातें हमें सोचने को बाध्य करती हैं कि भाषा की कक्षा में ऐसा क्या होता है कि हमारे अथक प्रयासों के बावजूद, बच्चों की विभिन्न भाषायी क्षमताएँ विकसित नहीं हो पातीं। सवाल यह है कि हम इसका कारण बच्चों की सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि को मानें अथवा भाषा सीखने-सिखाने के तौर-तरीकों व उसमें निहित हमारे नज़रिये को?

पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न मौकों यथा कक्षा अवलोकन व प्रशिक्षणों के दौरान हुए अनुभवों में भाषा शिक्षण के प्रति वर्तमान नज़रिये के कई आयाम उभरकर आये। उनमें से कुछ की चर्चा हमने यहाँ इस लेख में करने की कोशिश की है।

1. भाषा माने क्या?

प्रायः हम “भाषा माने क्या” का अर्थ बहुत ही सीमित अर्थों में लेते हैं। यह पूछे जाने पर कि भाषा से आप क्या समझते हैं जवाब होता है; भाषा यानी विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम अर्थात् ‘संप्रेषण का साधन।’ इस बात पर कभी गौर नहीं किया जाता कि जिन विचारों को संप्रेषित करना है वे कहाँ से व कैसे आते हैं? दूसरे शब्दों में क्या भाषा के बगैर हम सोच सकते हैं? कल्पना कर सकते हैं? चीजों को अलग-अलग पहचान सकते हैं, उनका वर्गीकरण कर सकते हैं? विश्लेषण कर सकते हैं? हम भाषा का उपयोग कहाँ-कहाँ करते हैं? कैसे करते हैं? हमारा व भाषा का रिश्ता क्या है? यदि इन पहलुओं के बारे में गहराई से सोचा जाए तो यह सूची और लंबी होती जाएगी।

इसका अर्थ यह है कि हममें से अधिकांश लोग जो मानते हैं कि भाषा यानी “संप्रेषण का माध्यम”, कुछ हद तक ही ठीक है। संप्रेषण के अर्थ के हिसाब से देखें तो भी कम-से-कम बच्चों को कक्षा में अपनी बात कहने, दूसरों की बात सुनने, प्रश्न उठाने, तर्क करने इत्यादि की स्वतंत्रता होनी चाहिए, पर कक्षाओं में तो यह नहीं होता। कक्षा में जो होता है वह है; अध्यापक जो कहे उसको बिना विचारे सुनना, पाठ्यपुस्तक के अध्यायों के पीछे दिये गये अभ्यास के प्रश्नों के ‘सही’ उत्तर याद करके उनको हुबहू परीक्षा में वैसा ही लिखना। इसके लिए तो पाठ्यपुस्तक की आवश्यकता ही नहीं होती। उत्तर याद करने के लिए बच्चे कुंजियों का सहारा लेते हैं और इसी वजह से कुंजियों का बाज़ार चलता है। यह थी संप्रेषण की बात जो कि वास्तव में होती ही नहीं। तो बाकी अन्य पहलुओं का क्या हो यह हमें सोचना होगा?

कुछ प्रश्न :

- क्या भाषा संप्रेषण का साधन है? आप इस बात से सहमत हैं या असहमत? अपने उत्तर का कारण भी दें।

2. भाषा सीखने-सिखाने के उद्देश्य व प्रक्रिया

किसी भी विषय को सीखने-सिखाने के उद्देश्य सीधे इस बात से जुड़ते हैं कि हमारी उस विषय की समझ क्या है? विषय की समझ न केवल यह निश्चित करने में मदद करती है कि हमें पढ़ाना क्या है? वरन् यह भी निर्णय लेने में मदद करती है कि पढ़ाना कैसे है? ‘भाषा क्या है?’ इस प्रश्न की समझ सीमित है,

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

यही समझ भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को निर्धारित करने में भी परिलक्षित होती है।

आमतौर पर भाषा सीखने-सिखाने के उद्देश्य माने जाते हैं—

- ध्वनि रूपों के शुद्ध उच्चारण को समझना।
- शब्दों के शुद्ध उच्चारण को समझना।
- ध्वनि रूपों का उच्चारण करना।
- शब्दों का शुद्ध उच्चारण करना।
- वर्ण पढ़ने की क्षमता विकसित करना।
- शब्द पढ़ने की क्षमता विकसित करना।
- वर्णों और शब्दों को उचित आकार, उचित क्रम में लिखने की क्षमता विकसित करना। (सुन्दर लिखावट)
- विराम चिह्नों का प्रयोग करते हुए लिखने की क्षमता विकसित करना।
- वाक्य पढ़ने की क्षमता विकसित करना।
- व्याकरण का सटीक उपयोग। इनके साथ-साथ नैतिक मूल्यों का विकास करना भी भाषा शिक्षण का एक मुख्य उद्देश्य माना जाता है।

पाठ्यपुस्तक निर्माण और भाषा सीखने-सिखाने के तौर-तरीके भी इन्हीं उद्देश्यों पर आधारित होते हैं। फलस्वरूप भाषा की कक्षा सिर्फ वर्ण, शब्द, वाक्य बोलना, पढ़ना, लिखना सिखाने पर केन्द्रित होकर रह जाती है। न तो उसमें कविताओं व कहानियों के लिए कोई स्थान होता है न बच्चों को बातचीत करने के मौके होते हैं और न ही अपनी बात को अभिव्यक्त करने के। चाहे वह मन से लिखना हो अथवा कहना।

3. भाषा टुकड़ों-टुकड़ों में व चरण दर चरण सीखी जाती है।

भाषा को समग्र रूप में देखने की बजाय टुकड़ों-टुकड़ों में देखा जाता है। अतः यह माना जाता है कि भाषा टुकड़ों-टुकड़ों को जोड़कर सीखी जाती है। चाहे ये टुकड़े फिर सुनने, बोलने, पढ़ने, लिखने के हों अथवा अक्षर, मात्रा, शब्द व वाक्य हों। यदि हम फिर से उद्देश्यों पर जाएँ और उनका गहराई से विश्लेषण करें तो उनमें भी यह विभाजन साफ-साफ दिखाई देता है जैसे

- पहले बच्चों को ध्वनियों का उच्चारण समझना सिखाना है।
- फिर साफ व स्पष्ट बोलना।
- उसके बाद अक्षर व वर्ण पढ़ना और उसके बाद लिखना।

और इसी के चलते यह समझा जाता है कि भाषा सिखाने का तात्पर्य है; सुनने, बोलने, पढ़ने व लिखने के कौशल का विकास। यह दृढ़ विश्वास होता है कि बच्चा बगैर सुने नए शब्द व वाक्य बोल ही नहीं सकता। यानी पहले सुनने की प्रक्रिया होगी फिर बोलने की। वास्तव में दोनों प्रक्रियाएँ साथ-साथ चलती हैं।

पढ़ने व लिखने की प्रक्रिया भी कुछ इसी तरह ही होती है। पढ़ने का मतलब होता है अक्षरों को पहचानना और ध्वनियों का उच्चारण कर पाना। इसलिए बच्चे पढ़ने के नाम पर वर्णमाला को रटते रहते हैं, कविताओं व कहानियों को शब्दशः दोहराते रहते हैं। लिखना भी एक स्वतंत्र कौशल की तरह मशीनी ढंग से

भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य : कुछ प्रचलित मान्यताएँ ।

सिखाया जाता है। बच्चों को अक्षरों की नकल करने के लिए कहा जाता है। शब्दों की नकल करवाई जाती है। हम यदि यह सोचें कि हमें किसी एक ही काम को बार-बार करने को दिया जाए तो हमें कैसा महसूस होगा? लेकिन शुरुआती एक साल में भाषा शिक्षण के नाम पर बच्चे यही कवायद करते रहते हैं।

इन चारों कौशलों को अलग-अलग देखने की वजह से ही शिक्षण प्रक्रिया बोझिल, ऊबाऊ व बार-बार रटने वाली हो जाती है। यदि पढ़ना व लिखना बच्चों के अनुभवों व बातचीत से शुरू होगा तो वह बच्चों के लिए अर्थपूर्ण होगा।

भाषा को टुकड़ों-टुकड़ों में पढ़ाने का एक उदाहरण देखिए-

शिक्षक कक्षा में आए व बच्चों को डाँटकर चुप कराया। शिक्षक ने बोर्ड पर वर्णमाला के कुछ अक्षर यह बताने के लिए लिखे कि अक्षर से शब्द का निर्माण कैसे होता है और शब्द से वाक्य कैसे बनते हैं।

घ, र, च, ल, घर, चल – घर चल

अ, म, न, घर, चल – अमन घर चल

चरण घर, चल – चरण घर चल

उसके बाद शिक्षक ने बोर्ड पर लिखी वर्णमाला के अक्षर व अक्षर से बने शब्द और शब्द से बने वाक्यों को बच्चों द्वारा पढ़वाया। वह प्रत्येक बच्चे को बोर्ड पर बुलाते और बोर्ड पर लिखे हुए को पढ़वाते और साथ में अन्य बच्चों से उन शब्दों को दोहरवाते। इस प्रकार कालांश चलता रहता है।

पूरी प्रक्रिया अक्षरों व शब्दों की पहचान पर ही केन्द्रित रहती है और इनकी पहचान पर इतना जोर होने से वाक्य का अर्थ ही गुम हो जाता है।

केवल इतना ही नहीं, विचार का यह बिन्दु विषयवस्तु से भी महत्वपूर्ण रूप से जुड़ा है, चुनी गयी विषयवस्तु को पढ़ना इस तरह से हो कि वह कदम-दर-कदम आगे बढ़े। अंततः विषयवस्तु वर्णमाला, शब्द (पहले कमल फिर कमला) या वाक्य (घर चल, नल पर चल, झटपट कर) और इसी तरह के वाक्य तक सीमित रहती है। बच्चों को ऐसे शीर्षक को पढ़ने के लिए बाध्य किया जाता है जिससे न तो वे अपने अनुभवों को जोड़ पाते हैं, न ही कोई अर्थ निकाल पाते हैं और न ही वे बातचीत करते समय ऐसे वाक्यों का उपयोग कर पाते हैं।

कुछ प्रश्न :

1. बच्चा बगैर सुने नये शब्द व वाक्य बोल ही नहीं सकता। इस बात से आप सहमत हैं या असहमत? कारण भी दीजिए।
2. पढ़ने का अर्थ केवल अक्षरों को पहचानना व ध्वनियों का उच्चारण करना मात्र है या इससे पृथक है? अपने कारण भी दीजिए।

4. भाषा व बोली

एक और महत्वपूर्ण मसला है भाषा व बोली का। जिस भी मंच पर भाषा शिक्षण की बात होती है यह मसला जरूर उठता है। बच्चों द्वारा बोली जाने वाली भाषा को दूसरे दर्जे की समझा जाता है। यह माना जाता है कि भाषा तो वह होती है जिसका अपना साहित्य व व्याकरण होता है, उसकी लिपि होती है, वह मानकीकृत व शुद्ध होती है। बच्चे जो भाषा अपने घर से लेकर आते हैं वह भाषा नहीं है क्योंकि वह तो एक क्षेत्र विशेष के लोगों द्वारा बोली जाती है, उसका न तो साहित्य है, न व्याकरण और न लिपि।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

अतः स्कूल के पहले दिन से ही बच्चों को मानकीकृत और शुद्ध भाषा सिखाने का प्रयास किया जाता है और यदि बच्चे अपनी घरेलू भाषा का प्रयोग विद्यालय में करते हैं तो उन्हें डाँट दिया जाता है। बच्चे यह समझ नहीं पाते कि उन्हें डाँटा क्यों जा रहा है? घर में, आस-पास परिवेश में हर कहीं वही भाषा बोली जाती है पर स्कूल में अध्यापक के सामने जब वे बोलते हैं तो ग़लत वह क्यों हो जाती है। बात यहीं समाप्त नहीं होती, जैसा कि हमने पहले भी बात की कि भाषा व्यक्ति की संस्कृति व पहचान होती है। बच्चे को अपनी घरेलू भाषा का उपयोग न करने देना उसकी पहचान व संस्कृति पर सीधा प्रहार होता है। बार-बार डाँट खाने के कारण जो बच्चे इतनी बातचीत करते हैं, धीरे-धीरे बात करना ही बन्द कर देते हैं।

यदि भाषा विज्ञान की दृष्टि से देखा जाए तो भी भाषा व बोली में कोई फ़र्क नहीं होता। भाषा का भी व्याकरण होता है और बोली का भी। यह बात ज़रूर है कि बोली का व्याकरण लिखित रूप में उपलब्ध नहीं होता पर इसका तात्पर्य यह नहीं कि व्याकरण होता ही नहीं। यही बात साहित्य पर भी लागू होती है। हो सकता है कि कई "बोलियों (भाषाओं)" में लिखित साहित्य न हो लेकिन मौखिक साहित्य ज़रूर होता है। भोजपुरी, अवधी, मैथिली-जिन्हें हम बोलियाँ कहते हैं उनमें तो बहुत साहित्य उपलब्ध है। इसी तरह यह कहा जाता है कि भाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है और बोली एक सीमित क्षेत्र में बोली जाती है। यह आप सोचिये कि हिन्दी भाषी लोग ज़्यादा हैं अथवा भोजपुरी और जो भी लोग हिन्दी बोलते हैं वे कितनी शुद्ध हिन्दी बोलते हैं, और रही लिपि वाली बात तो दुनिया की किसी भी भाषा को किसी भी लिपि में लिख सकते हैं उदाहरण के लिए—

Ram Ghar Jata hai (रोमन लिपि)

राम घर जाता है (देवनागरी लिपि)

हिन्दी भाषा को आप रोमन लिपि में लिख सकते हैं। आजकल तो मोबाइल, कम्प्यूटर सभी पर हम यही करते हैं। इस तरह अंग्रेज़ी भाषा को आप देवनागरी में लिख सकते हैं।

राम इज़ गोइंग (देवनागरी लिपि)

Ram is going (रोमन लिपि)

इसी तरह यह भी धारणा है कि एक भाषा दूसरी भाषा सीखने में बाधक होती है। उदाहरणार्थ यदि बच्चा छत्तीसगढ़ी (क्षेत्रीय भाषा) जानता है तो उसका नकारात्मक प्रभाव उसके हिन्दी (मानकीकृत भाषा) सीखने पर पड़ेगा। यह वास्तव में सत्य नहीं है। 'भाषा शिक्षा' के द्वारा हम बच्चे की जिन क्षमताओं को विकसित करना चाहते हैं यथा सोचने-विचारने, अपनी बात कहने, तर्क करने, विश्लेषण करने वो तो उसकी अपनी भाषा में आसानी से विकसित हो सकती हैं और फिर यह कौशल दूसरी भाषा में स्थानान्तरित किया जा सकता है। रही उच्चारण व मानकीकृत भाषा की बात तो उपयुक्त संदर्भ व वातावरण मिलने पर बच्चे स्वयं ही धीरे-धीरे यह सब सीख जाते हैं।

कुछ प्रश्न :

- एक भाषा दूसरी भाषा सीखने में बाधक होती है। इस बात से आप सहमत हैं या असहमत? कारण दीजिए।
- भाषा का भी व्याकरण होता है और बोली का भी व्याकरण होता है। इसे उदाहरण देकर समझाइये।
- दुनिया की किसी भी भाषा को किसी भी लिपि में लिख सकते हैं। उदाहरण देकर समझाइये।

5. भाषा नकल से सीखी जाती है

एक और मान्यता है कि बच्चे भाषा तब सीखते हैं जब उन्हें वह भाषा सिखाई जाती है। यानी उनके सामने ध्वनियों, शब्दों का उच्चारण बार-बार किया जाता है तथा वे नकल करके यह सब सीख जाते हैं। यह मान्यता इतनी दृढ़ है कि कक्षा में भी बच्चों को इसी तरह भाषा सिखाई जाती है। ऐसी एक कक्षा का एक उदाहरण देखिए—

कक्षा-1 में बच्चे बैठे हुए हैं। प्रथम कालांश लगता है, शिक्षिका कक्षा में आती है व कुर्सी पर बैठ जाती है। थोड़ी देर बाद बच्चों से कहती है चलो, अपनी-अपनी स्लेट या कॉपी लेकर मेरे पास आओ, हम हिन्दी पढ़ेंगे।

बच्चे एक-एक करके अपनी स्लेट या कॉपी लेकर उसके पास जाते हैं। वह बच्चे की स्लेट पर 3-4 कॉलम बनाती है व एक कोने में 'अ' लिखकर बच्चे से कहती है ऐसे ही और बनाओ। एक अन्य बच्चे की स्लेट पर वह 'आ' लिखती है और उसे भी यही निर्देश देती है कि ऐसे ही और बनाओ। इसी तरह वह कक्षा के सभी बच्चों को एक-एक वर्ण लिखने को देती है। जब बच्चे दिए गए वर्ण को लिख लेते हैं तो वह दूसरा वर्ण लिखने को दे देती है। इसी तरह कक्षा में कार्य चलता रहता है।

कुछ प्रश्न :

- आपके अनुसार शिक्षिका का वर्ण सिखाने का तरीका कैसा था? यदि आप इस शिक्षिका की जगह होते तो कक्षा में क्या करते?

इस पूरे प्रकरण में एक बार कुछ ऐसा हुआ जो कुछ हटकर था। वह था बार-बार शिक्षिका द्वारा वर्ण लिखकर लाने को कहने पर एक बच्चे ने उनसे कहा मुझे नहीं लिखना है। कुछ और कराइए। लेकिन शिक्षिका के पास कुछ और कराने को नहीं था। अतः उसने एक नया वर्ण फिर से बच्चे को लिखने के लिए दे दिया।

अब इस बात पर गौर करें कि भाषा सीखने की प्रक्रिया के दौरान बच्चे तुतलाते हैं। क्या हम उन्हें तुतलाना सिखाते हैं? वयस्क तो तुतलाकर बोलते नहीं ताकि बच्चों को उनकी नकल करने का मौका मिले व बच्चे वैसा बोलना सीखें। बच्चे नित नए शब्द व वाक्य बनाते हैं क्या हम प्रत्येक वाक्य उनके सामने बोलते हैं? ताकि वे उसकी नकल कर सकें और सीख सकें। क्या हम कभी बच्चे को बोलते हैं। “पापा मुझे मोटरसाइकिल पर घूमने जाना है।”

पापा चॉकलेट खानी है।

बच्ची व वयस्क की बातचीत का एक उदाहरण देखिए।

मेरे दोस्त की बच्ची (3 साल) व उसकी बुआ बातचीत कर रहे थे

बुआ : बोलो मैं अच्छी हूँ

बच्ची : मैं अच्छी हूँ

बुआ : मैं लड़की हूँ

बच्ची : मैं लड़की हूँ

बुआ : मैं गन्दी हूँ

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

बच्ची : आप गन्दे हो।

अब आप ही सोचिए इस बच्ची को कैसे पता चला कि उसे अपने-आप को गन्दा नहीं कहने के लिए वाक्य में कहाँ व क्या-क्या परिवर्तन करने होंगे? वह यह कहना कैसे सीखी होगी नकल से अथवा आपके बताने से अथवा ...? क्या यहाँ कुछ ऐसा हो रहा है जिसको अनुकरण की मदद से समझना कठिन है।

कुछ प्रश्न :

- बच्ची व वयस्क की बातचीत का एक उदाहरण आपने पढ़ा है। क्या आपको लगता है कि यह सब सीखने में बच्ची ने बड़ों की नकल की है। कारण देकर स्पष्ट कीजिए।

6. भाषा सिखाने का एक मात्र साधन पाठ्यपुस्तक है?

शिक्षकों की एक और मान्यता यह नजर आती है कि बच्चों को सिर्फ पाठ्यपुस्तक में दी गई विभिन्न रचनाओं को पढ़ना है और वह भी दिए गए क्रम में यानी पहले अध्याय एक फिर दो, तीन... बच्चे अपनी इच्छा से चुनकर पाठ भी नहीं पढ़ सकते। पाठ पढ़ने के बाद होता है उसके पीछे दिए गए प्रश्नों के उत्तरों को याद करना।

बच्चों के इर्द-गिर्द अनेक भाषाई संदर्भ उपलब्ध हैं। उदाहरण के तौर पर पत्रिकाओं, अखबारों, विज्ञापनों में लिखे गये विभिन्न निर्देश, सड़कों पर लिखे गये विभिन्न निर्देश इत्यादि कई जगहों पर भाषा का प्रयोग होता है लेकिन इन पर किसी का ध्यान नहीं जाता।

इसके बाद आती है साहित्य की बात। भाषा के 'वृहद् साहित्य' विशेषकर बच्चों की उम्र के अनुकूल साहित्य से उनका कोई परिचय नहीं होता। कक्षा-कक्ष अवलोकन के दौरान हुए एक अनुभव को यहाँ बाँटना चाहेंगे। हमने बच्चों से पूछा, कहानी सुनोगे या कविता? उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। अतः उन्हें एक कहानी सुना दी। दूसरे दिन फिर उसी कक्षा में जाने पर बच्चों ने हमें कविता सुनाने को कहा। जैसे ही मैंने कविता खत्म की उन्होंने कहानी की माँग रख दी। यह उदाहरण बताता है कि बच्चे कहानी, कविता सुनने की इच्छा रखते हैं। चूंकि कक्षा-कक्ष में संबंधित साहित्य का उपयोग नहीं होता इसलिए धीरे-धीरे उनकी रुचि इसमें खत्म हो जाती है। विभिन्न कविताओं, गद्यांशों, कहानियों में कही गयी मुख्य बातों को याद करने का अभ्यास ऊबाऊ लगने लगता है विशेषतया तब, जब पहले ही उन्हें ये मुख्य बातें बतायी जा चुकी हों। स्वयं को समझने व स्वयं के दृष्टिकोण को संवर्धित करने का साहित्य का उद्देश्य इसमें कहीं छूट जाता है।

बार-बार यह बातचीत होती है कि भाषा शिक्षण का उद्देश्य पाठ्यपुस्तक के पाठों व उनमें दिए गए अभ्यासों को कर लेना मात्र नहीं है वरन् उसका उद्देश्य है कि बच्चे उनके स्तर के अनुरूप उपलब्ध सभी तरह की सामग्री पढ़ पाएँ; चाहे वे कविता या कहानी की किताबें हों या अखबार अथवा सड़कों पर लिखे गये निर्देश। वे किसी बातचीत का हिस्सा बन पाएँ व संवाद कर पाएँ। अपने मन से किसी विषय पर लिख पाएँ। पाठ्यपुस्तक से कुछ मदद जरूर मिलती है लेकिन उसकी भी अपनी सीमाएँ होती हैं। अतः यह सोचना होगा कि बच्चों में भाषा के प्रयोग की क्षमताएँ बढ़ाने के लिए उन्हें पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त और क्या-क्या करने की आवश्यकता है।

कुछ प्रश्न :

- भाषा सिखाने का एक मात्र साधन पाठ्यपुस्तक है। आप इस बात से सहमत/असहमत हैं? क्यों?

7. बच्चों की क्षमताओं में विश्वास

यह भी धारणा है कि बच्चों का सीखना स्कूल में ही प्रारंभ होता है। स्कूल में आने से पहले बच्चों को

कुछ नहीं आता। एक प्रशिक्षण के दौरान कुछ शिक्षकों से हुई बातचीत में उनका कहना था कि शहरी बच्चे तो फिर भी कुछ पढ़ना लिखना जानते हैं लेकिन गाँव के बच्चे, गरीब बच्चे जिनके माता-पिता अनपढ़ हैं वे तो कुछ भी नहीं जानते। उन्हें तो सब कुछ स्कूल में आकर ही सीखना होता है।

प्रत्येक बच्चा अपने परिवार और आस-पास बोली जाने वाली अपनी भाषा के नियमों को, ध्वनि, शब्दों व वाक्यों को बातचीत के स्तर पर जानता है। बच्चा न केवल वर्णमाला, शब्द या वाक्य ही बोलना जानता है बल्कि प्रश्न पूछते वक्त वाक्य की संरचना में कहाँ बदलाव की जरूरत है यह भी जानता है। अपने पिता को संबोधित करते समय और घर पर आये अतिथि से बातचीत करते समय बोलने के तौर-तरीकों में वह अंतर कर पाने में सक्षम होता है। यहाँ तक कि बच्चे एक व्यक्ति से काम लेने के समय कैसे बोलना है, यह भी जानता है। कौन उन्हें यह तौर-तरीके सिखाता है?

ऊपर वर्णित क्षमताओं को नजरअंदाज करते हुए बच्चों को वर्णमाला और शब्द सिखाये जाते हैं। बातचीत के सारे नियमों को जानकर बच्चा स्कूल आता है और एक साथ बोलने को नजरअंदाज करता है।

असल में भाषा शिक्षण की कक्षाओं का उद्देश्य है कि बच्चे अपनी बात को कह सकें, दूसरे की बातों को सुनकर या पढ़कर अपनी टिप्पणी दे सकें, कहानियों और कविताओं को पढ़कर उसका रस ले सकें। उन कहानियों और कविताओं में अपनी छवि देख सकें या उन्हें अपने आपसे जोड़ सकें। भाषा सिखाने के केन्द्र लिपि, वर्तनी, सुन्दर लिखाई व व्याकरण बन जाते हैं। लेकिन कक्षा में भाषा से खेलने, उसमें डूबने, उसे महसूस करने और आत्मसात करने का अवसर ही नहीं रहता है। असल में बात यह है कि यह सब कुछ करने के लिए धैर्य की जरूरत है पर स्कूलों में इतना धैर्य कहाँ, वे तो जल्द से जल्द सिखाने में लगे रहते हैं। बच्चों की बातचीत कक्षा-कक्ष या अध्ययन-अध्यापन के लिए एक संसाधन बन सकती है। लेकिन कक्षा-कक्ष में बच्चों को बातचीत करने से रोका जाता है। इसके अलावा शिक्षक का पूरा ध्यान कक्षा में बच्चों को शांत करने और उच्चारण ठीक करने में रहता है। यह अहसास करने की आवश्यकता है कि अगर बच्चों को छोटी-छोटी टोलियों में बाँटकर उन्हें किसी विषय-वस्तु पर बातचीत का अवसर दिया जाए तो उससे काफी कुछ समस्या का समाधान ऐसे ही हो जाएगा।

हमें लगता है कि भाषा की कक्षा में भाषा सिखाते समय दो-तीन बातों को अमल में लाएँ तो ज़्यादा अच्छा होगा। पहली बात पढ़ने-लिखने की जो सामग्री हो वह सार्थक हो और बच्चे के स्तर की हो। दूसरी बात यह है कि जो सामग्री दी जाए वो परिचित भाषा में हो। तीसरी बात शिक्षक बच्चों के साथ सार्थक संवाद करें, उनकी बातों को प्यार से सुनें और उन्हें लोगों की बातचीत सुनने का मौका भी दें ताकि वे अपने लिए कुछ व्याकरण के नियम और शब्द स्वयं से ढूँढ़ सकें। आखिरी बात यह है कि भाषा को अक्षर, उच्चारण, व्याकरण आदि में बाँटने से कोई मतलब नहीं निकलता है। ना ही ये सब किसी निश्चित क्रम में सीखे जा सकते हैं। भाषा सीखने का एक ही तरीका है उसका ज़्यादा से ज़्यादा उपयोग किया जाए जैसे- बोलने में, तर्क करने में, कल्पना करने में, सृजन करने में। पढ़ने-लिखने इत्यादि के पर्याप्त अवसर मिले तो भाषा सीखना कोई मुश्किल काम नहीं है।

कुछ प्रश्न :

- भाषा की कक्षा में भाषा सिखाते समय हमें किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
- प्रायः हम यह मानते हैं कि बच्चे भाषा स्कूल में आकर ही सीखना शुरू करते हैं? अपने अभिमत को कारण सहित बताएं।
- कक्षाओं में भाषा-शिक्षण के क्या-क्या उद्देश्य होने चाहिए।



अध्याय – 2

बालक की मातृभाषा एवं भाषाई क्षमता

परिचय :

एक बच्चा भाषा का प्रयोग नये विचारों को ग्रहण करने और अपनी अवधारणाओं को बनाने के लिए करता है। विभिन्न विषयों से सम्बंधित सभी प्रकार के विचार एक चार वर्ष के बच्चे द्वारा ग्रहण किये जाते हैं वह इन पर बातचीत भी कर सकता है। इसके अतिरिक्त बच्चा तर्क निर्माण करने, अपने अधिकारों की रक्षा करने, परिस्थितियों का विश्लेषण करने और साथ ही सपनों व कल्पना के संसार का निर्माण करने में भी भाषा का उपयोग करता है। बच्चे की भाषा और भाषायी क्षमताओं पर अविश्वास के कारण कक्षागत प्रक्रियाओं में बच्चों के शाला आने से पूर्व के अनुभव, ज्ञान-संसार व उसकी अपनी भाषा को स्कूल में पर्याप्त जगह व सम्मान नहीं मिल पाता है जिससे बच्चे शाला से दुराव महसूस करते हैं। यदि हमारे विद्यालयों में आयोजित किए जाने वाले सीखने-सिखाने के क्रियाकलाप, शिक्षण सहायक सामग्री, स्कूल की साज-सज्जा आदि में इन बातों का ध्यान यदि हम रख सकें तो भाषा शिक्षण की कक्षाएँ सहज व रोचक बन पड़ेंगी, और प्राथमिक स्तर के बच्चे स्कूल में स्वयं को ज्यादा सहज व सुरक्षित महसूस कर पाएँगे।

इस इकाई में बच्चों की भाषाई क्षमताओं, भाषा विकास के लिए आवश्यक बातों और भाषा सीखने से जुड़ी कुछ प्रचलित मान्यताओं को समझने का प्रयास करेंगे।

उद्देश्य :

- बच्चों को भाषायी क्षमताओं को गहराई से समझ पाएँगे।
- बच्चों के सीखने में कौन से घटक महत्वपूर्ण हैं, के बारे में समझ पाएँगे।
- भाषा शिक्षण में बच्चों की भाषाओं के महत्व को समझ पाएँगे।

बच्चे की क्षमता

भाषा शिक्षण के दौरान इस बात की अनदेखी की जाती है कि बच्चा एक अति सक्षम जीव होता है। प्रारंभिक कक्षाओं में अध्यापक का ध्यान भी बच्चों की इस क्षमता की ओर नहीं जाता। वास्तव में चार साल का बच्चा तो भाषायी दृष्टि से एक वयस्क के समान अपनी भाषा में संवाद करने, अवधारणाएँ बनाने व तर्क करने में सक्षम होता है। इसके अलावा भी वह और बहुत कुछ कर सकता है; जैसे वह कई तरह के शारीरिक काम कर सकता है, स्थान संबंधी अवधारणाओं को समझता है व उनका उपयोग करता है, कल्पना करता है, अनुमान लगाता है। वह संख्याओं और मात्राओं को भी समझता है। सारी क्षमताएँ बच्चा अपने आस-पास के संसार से सहज अंतःक्रिया करते हुए स्वयं ही अर्जित कर लेता है। इन सभी अर्जित क्षमताओं में सबसे जानी-मानी क्षमता है "भाषा"।

भाषा के बगैर मनुष्य की कल्पना करना मुश्किल है और ना ही भाषा के बगैर हम बच्चों की सीखने की प्रक्रिया के बारे में सोच सकते हैं। यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि बच्चों में अपने आस-पास व दुनिया की समझ को विकसित करने में भाषा का योगदान महत्वपूर्ण होता है लेकिन केवल भाषा ही इस विकास के लिए जरूरी है यह कहना मुश्किल है। वर्तमान में यह मुद्दा काफी चर्चित भी है। इसमें कोई संदेह नहीं कि भाषा हमारे जीवन और हमारी पहचान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। हिस्सा इस अर्थ में कि न केवल यह हमारे विकास में योगदान देती है, हमें परिभाषित भी करती है।

बच्चा भाषा संबंधी सभी स्थितियों को संभाल सकता है

विद्यालय में आने वाले बच्चे की क्षमता को समझने के लिए हमें यह मानना ही होगा कि वह अपने आस-पास के सभी लोगों से ठीक से बातचीत कर सकता है, घर में होनेवाली सभी गतिविधियों में कुशलतापूर्वक भाग ले सकता है। वह न केवल अपने सामाजिक, सांस्कृतिक व भाषिक वातावरण के जटिल घटकों के साथ जुड़ा होता है अपितु वह उनसे संप्रेषण करने में भी समर्थ होता है। वह संदर्भ के अनुसार भाषा का उपयोग करना जानता है। यह संदर्भ कोई अनुभव हो सकता है अथवा एक परिस्थिति जिसका बच्चा स्वयं हिस्सा हो। संदर्भ विशेष को ध्यान में रखते हुए बच्चा अपनी भाषा का उपयोग करता है, और संदर्भ बदलने पर भाषा में उपयुक्त परिवर्तन भी कर लेता है। उदाहरण के लिए, बच्चा यह भली-भाँति जानता है कि किस अवसर पर, किस व्यक्ति से कैसे बात करनी है? यहाँ ऐसा नहीं कहा जा रहा कि बच्चा बातचीत करते समय गलती नहीं कर सकता। वह ग़लती कर सकता है लेकिन इस ग़लती का कारण यह नहीं होता कि बच्चे को परिस्थिति विशेष के अनुसार बातचीत करने के तौर-तरीके नहीं आते बल्कि इसका कारण यह होता है कि वह स्थिति को ढंग से समझ नहीं पाता।

वह यह अच्छी तरह जानता है कि यदि उसे अपने से उम्र में बड़े किसी व्यक्ति से कुछ माँगना है तो उसे थोड़ा नरमी से बात करनी होगी। यदि किसी वजह से ऐसा नहीं करता तो पूछने पर वह आपको इसका कारण भी बता सकता है। कौन बड़ा है, कौन छोटा यह महसूस करने तथा चतुराई से स्थितियों को अपने पक्ष में करने की क्षमता भी बच्चे में होती है। वह अपनी इच्छाओं, भावनाओं को व्यक्त करने और अनुभवों को बाँटने हेतु भाषा का धाराप्रवाह उपयोग करता है। ये सभी काम काफ़ी जटिल हैं। यदि हम यह सोचें कि इस तरह के हरेक कार्य को अंजाम देने के लिए और क्या-क्या करना पड़ता है? और फिर उसकी भी एक सूची बनाएँ तो यह सूची चौंका देनेवाली होगी।

कुछ प्रश्न :

- भाषा संबंधी किन-किन स्थितियों को बच्चे संभाल सकते हैं?
- ऐसे ही दो उदाहरण आप अपने घर या आस-पास से दें जहाँ बच्चों को भाषा संबंधी स्थितियों को संभालने का मौका हो।

बोलने के लिए क्या चाहिए

बोलने की क्रिया स्वयं में सरल होती है। आइए, देखते हैं कि इसके अन्तर्गत क्या आता है। मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि वार्तालाप का अर्थ है विचारों का आदान-प्रदान। जिस विचार को हम संप्रेषित करना चाहते हैं वह ग्राह्य (समझने योग्य) होना चाहिए। इसके लिए ज़रूरी है कि हमें जो बोलना है उसका एक चित्र हमारे पास हो और हमें पहले से ही सचेत रहना चाहिए कि किस विषय पर चर्चा होने जा रही है। यदि विचार किया जाए कि किसी विषय पर चर्चा में भाग लेने हेतु क्या आवश्यक है तो हम पाएँगे कि इस प्रक्रिया में, पूर्व अनुमान लगाना सम्मिलित है कि जब एक व्यक्ति बोल रहा है तो दूसरा व्यक्ति क्या कर रहा है। और जब बालक अपना पहला शब्द कहता है तो फिर दूसरा शब्द और उसके बाद और शब्द तो आप समझ सकते हैं कि वह क्या कह रहा है। कभी-कभी बालक के वाक्य समाप्त करने से पूर्व ही हम अपनी प्रतिक्रिया तैयार कर लेते हैं। कभी-कभी किसी व्यक्ति के द्वारा वाक्य पूरा करने से पहले ही हम समझ जाते हैं कि वह क्या कह रहा है और उत्तर देना प्रारम्भ कर देते हैं। यदि वास्तव में इस विषय पर विचार किया जाए तो हम स्पष्ट रूप से अपनी विशाल क्षमताओं को पहचान पाएँगे, विशेष रूप से हम जो कुछ कहना चाहते हैं उसके कहने की क्षमता को एवं कब, क्या कहना है इस क्षमता को। हमारे व्याख्यान

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

में जिह्वा का भ्रमित होना इस तथ्य को भी दर्शाता है कि किसी विषय को बोलते हुए ठीक उसी समय हम अपने अगले शब्द के विषय में भी सोच रहे होते हैं जिसे हम बोलने जा रहे हैं।

अवधारणाएँ और बालक

बच्चा विचारों को ग्रहण करने व अवधारणाओं को बनाने के लिए भाषा का उपयोग करता है। विभिन्न विषयों से संबंधित लगभग सभी तरह की अवधारणाएँ बच्चा अपने अनुभवों से स्वयं अर्जित कर लेता है। उदाहरण के लिए, सामाजिक व पारिवारिक रिश्तों संबंधी अवधारणाएँ परिवार में कौन बड़ा है, कौन छोटा, बड़े छोटे के बीच संबंध, कौन-कौन से रिश्ते, अलग-अलग रिश्तों से अपेक्षाएँ, उन अपेक्षाओं में अंतर की वजहें इत्यादि। वह कृषि, पौधे का जीवन, त्यौहार, घर के काम-काज संबंधी अवधारणाएँ भी समझता है। इन सभी से संबंधित उपलब्ध जानकारी को वह एक स्पंज की भाँति सोख लेता है।

शायद हम बड़ों को लगे कि इनमें से कुछ जानकारी तो बच्चे के सीखने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है अतः इसे सीखना ही चाहिये। दूसरी तरफ़ हमें कुछ जानकारी अनुपयुक्त लगे और हम चाहें कि बच्चा ये ना सीखे, पर बच्चा तो सब कुछ सीख लेता है।

इन सभी के साथ-साथ जब वह बातचीत करना भी सीख लेता है तो फिर उसके सीखने की गति आगे बढ़ती ही चली जाती है। चाहे फिर लोगों के नाम हों अथवा पेड़-पौधों, जानवरों के नाम या फिर कब, कौन आया? कौन, कहाँ जा रहा है? एक व्यक्ति का दूसरे से रिश्ता, बाजार में किस तरह बातचीत होती है, इत्यादि। इनके अलावा और भी कई चीजों के बारे में वह बातचीत कर सकता है। तर्क करने, अपने अधिकारों के लिए लड़ने, स्थिति का विश्लेषण करने, अपने स्वयं के कल्पित संसार को रचने में वह भाषा का धडल्ले से प्रयोग करता है। जिन शब्दों को वह जानता है उनका उपयोग करते हुए वह दुनिया का खाका बनाता है और अपने सपने भी।

वाक्य संरचना व बच्चा

अवधारणाओं को जानने के संदर्भ में बच्चे की क्षमताएँ क्या-क्या हैं? सिर्फ यह समझना ही महत्वपूर्ण नहीं है। वरन यह समझना भी महत्वपूर्ण है कि बच्चे के पास अचेतन स्तर पर ही सही पर वाक्य संरचना व संवाद की प्रक्रिया की भी पूरी समझ होती है। बातचीत की पूरी प्रक्रिया में बच्चा जानता है कि कब, कहाँ, क्या कहना है, कब ऊँची आवाज़ रखनी है कब नीची।

यदि बच्चा किसी परिस्थिति का वर्णन करता है तब परिस्थिति के अनुरूप वह क्रिया के सभी रूपों का सही इस्तेमाल करता है। यदि भाषा में संज्ञा व सर्वनाम के कई रूप होते हैं तो वह इनका भी सही-सही उपयोग करता है। अपनी स्वयं की भाषा में वह काल, एक वचन अथवा बहुवचन, लिंग योजक शब्दों के सही रूपों के प्रयोग में कोई चूक नहीं करता।

यदि हम हिन्दी और अंग्रेजी के कुछ वाक्यों (लगभग दस) को लें और उनका विश्लेषण करें तो हम यह महसूस कर पाएँगे कि ये वाक्य जो कि अलग-अलग संदर्भों से चुने गये हैं, जिनका प्रयोग बच्चा करता है, इन वाक्यों में शब्दों को व्यवस्थित करने हेतु व किन शब्दों को एक साथ रखना है यह समझने हेतु एक असाधारण योग्यता और अचेतन स्तर का ज्ञान होना आवश्यक है। एक चार साल के बच्चे द्वारा उपयोग में लाये गये वाक्य यह संकेत देते हैं कि बच्चे में सूक्ष्म अंतर कर पाने की योग्यता होती है।

हमें इस पर भी विचार करने की आवश्यकता है कि बालक लगातार नये शब्दों के संपर्क में आता है। एक बार जब वह किसी शब्द और उसके अर्थ को जान लेता है तब वह शब्द की गहरी समझ विकसित करने हेतु अलग-अलग संदर्भों में इसका प्रयोग करता है।

यद्यपि शब्द के विभिन्न रूपों से उसका कोई पूर्व परिचय नहीं होता। लेकिन धीरे-धीरे वह अपने-आप शब्द के विभिन्न रूपों का निर्माण करने लगता है। इन विभिन्न रूपों का निर्माण भी वह नियमानुसार ही करता है, वो नियम जो अवचेतन स्तर पर वह जानता है। इनमें से कई नियमों को विभिन्न भाषाविदों द्वारा मान्यता दी गयी है, कुछ व्याकरण की पुस्तकों में शामिल किए गए हैं लेकिन बहुत से ऐसे नियम भी हैं जो अभी भी खोजे और चिह्नित किये जाने हैं।

भाषाविद हमेशा इस कोशिश में लगे रहते हैं कि वे भाषा के लिए एक बेहतर व्याकरण और ऐसे नियमों को बना पाएँ जो अलग-अलग संदर्भों को सम्मिलित कर सकें। पर भाषा के नियमों के निर्मित होने और अभिव्यक्त होने के बहुत समय पूर्व से ही भाषा के स्थानीय वक्ता अपनी आपसी समझ के माध्यम से भाषा के विभिन्न नियमों का उपयोग करते आए हैं। निःसन्देह इन सभी नियमों की व उनमें हुए नये परिवर्तनों की अच्छी-खासी समझ बच्चे के लिए उपलब्ध होती है।

कुछ प्रश्न :

- अपने आसपास के किसी तीन से चार वर्ष के बच्चे द्वारा बोले जाने वाले 10 वाक्यों की सूची बनाएँ।
- क्या बच्चे ने इनमें से कोई वाक्य गलत बोला है?
- ये सब बच्चों ने कैसे सीखा?

यह सब कैसे सीखा गया है

ऐसे पर्याप्त प्रमाण हैं जो संकेत देते हैं कि मानवीय अन्तःक्रियाओं के अभाव में भाषा क्षमता का विकास नहीं होता। ऐसे भी पर्याप्त प्रमाण हैं जिनके आधार पर हम कह सकते हैं कि भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमियों और समुदायों से आने वाले बच्चे विभिन्न प्रकार की क्षमताएँ अर्जित करते हैं और उनका अनुभव उनके ज्ञान को प्रभावित करता है। यद्यपि सीखना एक समान नहीं होता, तथापि अक्सर देखा गया है कुछ समान लक्षण हैं और किंचित समान अवस्थाएँ हैं। वयस्क लोग बच्चों को उनकी सीखने की प्रक्रिया में सहायता करने का प्रयास करते हैं। जो तरीका उन्हें सर्वश्रेष्ठ लगता है, वे उसका प्रयोग करते हैं। कुछ मामलों में या तो बच्चों की तरह बोलकर उन्हें आराम का अहसास कराते हैं या फिर बच्चे को जो बोलना है उसे कई भागों में बाँटकर आसान बनाते हुए बच्चों द्वारा उनकी नक़ल करने और उसे बार-बार दोहराने का अभ्यास कराया जाता है अथवा गलतियों में सुधार करते हुए सही वाक्य को बार-बार दोहराने के लिये कहा जा सकता है। सुधारने के बारे में हम वाद-विवाद कर सकते हैं। यह स्पष्ट है कि इन क्रियाओं में बालक के प्रति हमारी चिंता झलकती है और यह मान्यता भी कि वह स्वयं को महत्त्वपूर्ण अनुभव करे। यह मान्यता (स्वीकारोक्ति) और साथ ही प्रोत्साहन बच्चे के सीखने में बहुत महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

परन्तु, यह भी स्पष्ट है कि केवल मार्गदर्शन से कुछ अधिक नहीं सीखा जा सकता। इस प्रक्रिया में बालक का जितना विकास हो सकता है वह उससे कहीं अधिक ज्ञान और क्षमता रखता है। बच्चों की कितनी ग़लतियों को सुधारने में हम सहायता कर सकते हैं? सीखने में हम बच्चों का कितना मार्गदर्शन करते हैं? हम यह भी जानते हैं कि हम जो बात नहीं चाहते बच्चा उसी को सबसे जल्दी सीखता है। बच्चा ऐसी अनेक बातें सीख लेता है जिन्हें हम चैतन्य रूप से जानते तक नहीं। बालक के इस अपार ज्ञान के आधार पर हम कह सकते हैं कि यह सब सीखने हेतु बच्चे द्वारा जानबूझकर कोई सक्रिय प्रयास अथवा योजना नहीं बनाई जाती बल्कि यह उसकी समाज से नैसर्गिक अन्तःक्रिया एवं तत्परता है जो यह सब कुछ सीखना संभव बनाती है। यदि बच्चे की इस क्षमता के निर्माण की बात करें तो यह तथ्य महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि बच्चे के लिए मानव पर्यावरण अस्तित्व में है और वह अपने से संबंधित अनेक व्यक्तियों के साथ अंतःक्रिया व विचारों का आदान-प्रदान करता है।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

क्या बालक अनुकरण (नकल करके) से सीखता है?

जब हम यह मान लेते हैं कि बालक मानव संसार के साथ पारस्परिक संपर्क से सीखता है तो हम यह भी समझ सकते हैं कि पारस्परिक संबंधों की प्रकृति उसके ज्ञान को प्रभावित कर सकती है। “बालक नकल करने से सीखता है।” यह एक प्रसिद्ध मत है। इस पर एक दृष्टि डालना महत्वपूर्ण होगा क्योंकि ऐसा मानना हमारे द्वारा बालकों के लिए निर्मित अनेक अनुभवों पर प्रभाव डालता है। यदि मनुष्य नकल करके अथवा अनुकरण से सीखता है तो सीखने की प्रक्रिया को इस प्रकार निर्मित किया जा सकता है—

आप जो कर रहे हैं, बालकों को उसे देखने दीजिए। उन्हें आपकी नकल करने के लिए कहें गलतियाँ करे तो उसमें सुधार कर दें। उसे लगातार उसी कार्य को दोहराने के लिए भी कहा जा सकता है जिसमें वह गलती करता है। यह स्पष्ट है कि विद्यालय जाने से पूर्व ही बालक द्वारा जो ज्ञान अर्जित कर लिया गया है उसे देखते हुए यह एक उचित प्रक्रिया नहीं है। जो वाक्य उसने किसी को बोलते हुए सुना है केवल उस आधार पर बालक वार्तालाप में भाग नहीं ले सकता और अपने सभी वाक्यों की रचना नहीं कर सकता। बच्चे ऐसे बहुत से वाक्य बोलते हैं जो इससे पहले उन्होंने कभी नहीं सुने होते क्योंकि जिन संदर्भों में बच्चा बोलता है ऐसा नहीं हो सकता कि वैसे ही समान संदर्भ उसके सामने पहले कभी आये हों। हालाँकि हम यह तो नहीं कह सकते कि हमारी सीखने की प्रक्रिया की वर्तमान समझ को आगे बढ़ाने के लिए, बच्चे द्वारा अपनाई गई उपर्युक्त वर्णित सीखने की प्रक्रिया निरर्थक है। फिर भी यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की प्रक्रियाओं से बच्चे के पूरे ज्ञान का बहुत छोटा भाग ही प्रभावित होता होगा।

सीखने वाले बालक की विशिष्टताएँ (अथवा लक्षण)

अपने आस-पास की जाँच पड़ताल मानव की सीखने की प्रक्रिया का प्रमुख पक्ष है। इस खोज में वह संसार का अधिक से अधिक अनुभव प्राप्त करना चाहता है और उसके साथ अपने संबंधों को और विस्तृत (प्रगाढ़) करना चाहता है। उसके भीतर नवीन वस्तुओं का अनुभव करने, नये कार्य करने और चुनौतियों को समझने योग्य बनने की उत्तेजना होती है।

दूसरा प्रमुख पक्ष है कार्यों को करने का दृढ़ निश्चय (जिद) और आसानी से हार नहीं मानना। एक बालक चलना सीखते समय खड़ा होने का प्रयास करता है। वह गिर जाता है परन्तु चलना नहीं त्यागता। जब बालक बोलना सीखता है तो पाता है कि उसे कोई नहीं समझ रहा है। यह भी स्पष्ट नहीं कि वह स्वयं कितना समझता है फिर भी वह लगातार अपने-आपको सीखने की चुनौती देता रहता है। अतः कह सकते हैं कि जिन चीजों को बच्चे सीखना चाहते हैं उन्हें सीखने के लिए वे लगातार संघर्ष करते हैं।

तीसरी प्रमुख विशेषता है कि कार्यों को स्वयं करने एवं स्वयं ही सब कुछ अभिव्यक्त करने की इच्छा अथवा चाह। किसी कार्य का परिणाम बालक के लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना महत्वपूर्ण यह कि इस प्रक्रिया में उसकी भूमिका क्या थी अथवा क्या होगी।

चौथा पहलू है— बालक की असीमित जिज्ञासा; जैसे—क्या हो रहा है, किसको समस्या है, क्या समस्या है इत्यादि। बचपन से ही मानव अपने चारों ओर की स्थिति के विषय में सब कुछ जानने की इच्छा रखता है। वह संसार के साथ अधिक कुशलता से व्यवहार करने की क्षमता को प्राप्त करना चाहता है, इसलिए अत्यधिक जिज्ञासु होता है। जिज्ञासा सम्भवतः वह निहित गुण अथवा लक्षण है जिसकी परिणति खोजने की इच्छा और इसी के साथ कार्यों को स्वयं करने की इच्छा के रूप में होती है। यही वह अभिरुचि अथवा विशेषता है जो बालक को नये अनुभवों, नवीन परिस्थितियों और चुनौतियों का सामना करने एवं साहसीकृत करने के लिये उद्यत करती है। वह उन वस्तुओं को खोजने से भी नहीं डरता जो उसके माता-पिता नहीं खोजना चाहते। वह अपनी जिज्ञासा के अनुरूप दृढ़निश्चय और स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करता है।

विशिष्टताओं के निहित प्रभाव

ये चार विशिष्टताएँ वयस्कों के साथ उस तरह के पारस्परिक संबंधों की ओर संकेत करती हैं जिनसे बालकों को सीखने में सहायता मिलती है। इनके अन्तर्गत बालक को खोजने, स्वयं कार्य करने, अपनी इच्छा और निश्चय को पहचानने और साथ ही उसकी योग्यता का सम्मान करने के संबंध में जागरूकता सम्मिलित है। इनमें यह निहित है कि वयस्क समझे कि बालक अपने अनुभव को आत्मसात् करके और अधिक क्रिया करते हुए सीखेगा। वयस्क लोग बालक को ऐसा करने का अवसर प्रदान कर सकते हैं और यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि बालक जो चुनौतियाँ ले रहा है वे विपत्तिजनक तो नहीं हैं।

कक्षा-कक्ष एक ऐसा स्थान है जहाँ पर बच्चों के एक समूह के लिए शिक्षा की व्यवस्था की जाती है, एक ऐसे समूह के लिए जो आवश्यक नहीं है कि एक ही प्रकार की पृष्ठभूमि अथवा अनुभव रखता हो। यहाँ बच्चे क्या सीखें इसकी कुछ अपेक्षाएँ होती हैं। अध्यापक प्रायः बच्चों की भाषा और संस्कृति को समझ अथवा पहचान नहीं पाते। बालक और उसके अध्यापक का संबंध घर में वयस्कों के साथ बालक के संबंध से बहुत भिन्न होता है और उनकी चिंताएँ भी भिन्न होती हैं। विद्यालय में उपलब्ध समय और अवसर सीमित होते हैं। प्रत्येक बालक को यह अनुमति नहीं दी जा सकती कि वह जो करना चाहता है करे और उस समय जो विशेष उसे पसंद हो वही सीखे। हमें कक्षा-कक्ष के संभावित निहितार्थ के बारे में विचार करने के लिए इन विभिन्नताओं को समझना और महसूस करना होगा।

बालक में चार विशेष गुण होते हैं जो इस प्रकार हैं— (1) असीमित जिज्ञासा (2) स्वतंत्रता की ललक या इच्छा (3) अनुसंधान और प्रयोग करने की चाह और साथ ही (4) स्वयं कार्य करने की इच्छा। स्कूल में बच्चों को सीखने के अवसर उपलब्ध कराने में ये चार गुण आधारभूत माने जाने चाहिए। ये आधार विभिन्न स्थितियों में भिन्न तरीकों से उभर कर आएँगे।

बालकों के द्वारा भाषा सीखने के संदर्भ में हमें यह मानने की आवश्यकता है कि बालक के पास पहले से ही घर की भाषा का उपयोग करने की बहुत क्षमता होती है। उसके पास एक विशाल शब्दकोश है, अपनी भाषा में पूर्णवाक्य रचना करने की योग्यता है और उस भाषा में वार्तालाप करने की क्षमता है। हमें यह भी मानना होगा कि कार्यों को स्वयं करने हेतु बालक को अवसर चाहिए अर्थात् स्वयं के विचारों को व्यक्त करना, भाषा का अलग ढंग से प्रयोग करना और दृष्टिकोण हेतु तर्क बनाना। अपने अध्यापक की यांत्रिक (बुद्धि रहित) रूप से नकल करना या अन्य दूसरे की नकल करना बालक की कुछ भी सहायता नहीं करता क्योंकि यह न तो बालक को चुनौती देता है और न ही उसे इसमें रुचि हो सकती है। भाषा क्षमता के निर्माण हेतु इस बात की आवश्यकता है कि बालक अनेक प्रकार की स्थितियों का सामना करने में सक्षम हो सके। वह अधिक जटिल तर्कों का निर्माण कर सके, अधिक जटिल विचारों के साथ व्यवहार कर सके और संवाद को लम्बे समय तक चला सके, जिसमें कि अमूर्त विचार भी सम्मिलित हैं। अतः बच्चों के लिए यह सब प्राप्त कराने हेतु हमारी कक्षा-कक्ष प्रक्रियाओं को उनके लिए आवश्यक स्थान एवं अवसर उपलब्ध कराने होंगे।

कुछ प्रश्न :

- उपर्युक्त चार विशेषताएँ जो कि हर बालक को सीखने में मदद करती हैं। इन्हें ध्यान में रखते हुए बच्चों को किस-किस प्रकार के सीखने के अवसर उपलब्ध करवाए जा सकते हैं। साथियों के साथ चर्चा करके लिखिए।

बच्चों की भाषाओं को स्वीकार करें

हमें यह मानना होगा कि बालक तब अच्छी तरह सीखता है जब वह अपने चारों ओर की उन वस्तुओं के बारे में खोजबीन करता है जिन्हें वह जानता है और इसलिए उसके साथ अपनापन रखता है। वाक्यों का निर्माण करने में, नई प्रकार की स्थितियों में सहभागिता करने में और जिस भाषा का वह प्रयोग कर रहा है

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

उसमें योग्यता पाने हेतु एक निश्चित मात्रा में आत्मविश्वास की आवश्यकता होती है। यदि कक्षा-कक्ष की भाषा का बच्चे की भाषा से कोई लेना-देना नहीं है और वहाँ की भाषा उन शब्दों पर आधारित नहीं है जिन्हें बच्चा जानता और समझता है तो ऐसा कोई तरीका नहीं कि वह खोजबीन के लिए स्वयं में विश्वास महसूस कर सके और नई चुनौतियों को ले सके। इस प्रकार वह ज्ञानार्जन प्रक्रिया में विश्वासपूर्वक सहभागी नहीं रह पाता और उसे एक कैचअप खेल खेलना होता है और वह भी बिना पर्याप्त अवसर और समय के।

कक्षा-कक्ष में सामान्यतः विभिन्न भाषाओं वाले बच्चे होते हैं। इसलिये अध्यापक के लिए एक प्रमुख सिद्धान्त यह है कि वह सभी बच्चों के लिए एक सम्पर्क भाषा की पहचान कर उसे सीखे। कक्षा-कक्ष में संवाद उसी भाषा में हो जिससे कि भाषा के उपयोग करने की योग्यता सशक्त बन सके जैसे- तर्क, कल्पना, आत्मविश्वास, संप्रेषण, ज्ञान का विस्तार इत्यादि में। संप्रेषण की कमी को दूर करने का भार अध्यापक द्वारा ही उठाया जाना चाहिए।

बच्चों को उनकी अपनी भाषा का उपयोग करने तथा कक्षा में उपस्थित सभी भाषाओं के साथ खेलने की अनुमति दी जानी चाहिए। वे स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए विभिन्न भाषाओं के शब्दों का उपयोग कर सकते हैं और इसके द्वारा संवाद कराने की श्रेष्ठतर योग्यता विकसित कर सकते हैं।

कुछ प्रश्न :

- कक्षा में बच्चों की अपनी भाषाओं के उपयोग के क्या-क्या फायदें होंगे?
- कक्षा-कक्ष में एक से ज्यादा भाषाओं वाले बच्चे होते हैं। तो इन अलग-अलग भाषाओं का भाषा सीखने-सिखाने में क्या-क्या इस्तेमाल/उपयोग हो सकता है?

बच्चों को सम्मान और एक सकारात्मक आत्मछवि चाहिए

एक बालक द्वारा आत्मविश्वास महसूस करने के संदर्भ में दूसरा आवश्यक बिन्दु है, सकारात्मक आत्मछवि। बालक की संस्कृति, भाषा तथा उसकी पहचान का सम्मान किया जाना चाहिए। जब इनका सम्मान होगा केवल तभी वह बालक स्वयं से खोजना सीख पाएगा और अपनी इच्छा और जिज्ञासा का अभ्यास कर पाएगा। वह जो कहता है अथवा महसूस करता है उसका सम्मान किया जाएगा। इस विश्वास के अभाव में सीखने अथवा ज्ञानार्जन के कोई भी महत्वपूर्ण लक्षण उस बालक/बालिका के व्यवहार में परिलक्षित नहीं होंगे।

इसके प्रभाव तथा परिणामों को समझने के लिए तथा कक्षा-कक्ष में क्या किया जा सकता है, इन संभावनाओं पर विचार कीजिये; शायद कुछ किया जा सकता है। बोर्ड पर एक वस्तु (अथवा किसी भी प्राणी) का चित्र बनाएँ और फिर बच्चों से पूछें कि वे इसे क्या नाम देंगे। बच्चों द्वारा सुझाये गये सभी नामों को बोर्ड पर लिखिये। इसके पश्चात् बच्चों से कहें कि अपनी भाषा में इस चित्र के बारे में वे क्या जानते हैं और समझते हैं, बोलें। यदि बच्चा स्वयं सम्पर्क भाषा धाराप्रवाह रूप से नहीं बोल सकता तो कक्षा में ऐसे बच्चे होंगे जो कि कही गई बात को समझ सकते हैं। फिर भी, यह समझ स्पष्ट होना चाहिए कि बालक जब तक चाहे अपनी भाषा में ही बोले। ऐसे कई अभ्यास किये जा सकते हैं जिनसे किसी घटना, किसी गतिविधि अथवा अन्य किसी विषय पर बात करने का मौका मिले। बच्चों को किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में वर्णन करने के लिए कहा जा सकता है जिसे वे पसन्द करते हैं अथवा उनके जीवन में आये एक ऐसे क्षण के बारे में जिसे वे सदा ही याद रखना चाहेंगे।



अध्याय – 3

भाषा शिक्षण के उद्देश्य

परिचय :

एन.सी.एफ 2005 'आरंभिक शिक्षा हेतु पाठ्यक्रम व भारतीय भाषाओं के शिक्षण' के आधार पत्र से संकलित इस अध्याय में प्राथमिक शिक्षा में भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को विस्तार से समझने का प्रयास किया गया है। दिये गये उद्देश्यों में यह बात कहना जरूरी है कि सारे उद्देश्य पूर्णतया एक दूसरे से पृथक नहीं किये जा सकते। हमें अपना दिशाबोध बनाये रखने हेतु इन्हें पृथक-पृथक समझना तो आवश्यक है, पर इनकी पृथक-पृथक प्राप्ति सम्भव नहीं हो सकता है। अतः शिक्षण में इन उद्देश्यों में से कभी कुछ या कभी-कभी समस्त उद्देश्यों को एक साथ लेकर चलने की आवश्यकता होगी।

उद्देश्य :

- प्राथमिक कक्षाओं में भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को समझ पाएँगे।
- प्राथमिक कक्षाओं में व्याकरण शिक्षण कैसे हो? की समझ बना पाएँगे।

भाषा शिक्षण के उद्देश्य (NCF आधार पत्र से)

बच्चे अच्छी खासी विकसित भाषिक व्यवस्था के साथ ही स्कूल आते हैं, इसलिए इसे ध्यान में रखते हुए ही स्कूली पाठ्यचर्या में भाषा शिक्षण के उद्देश्य तय किए जाने चाहिए। स्कूल का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य बच्चे को इस प्रकार से सक्षम बनाना है कि बच्चा समझने के साथ पढ़ने व लिखने की क्षमता हासिल कर सके। साथ ही द्विभाषिकता और पराभाषिक चेतना को बढ़ावा देना हमारा प्रयास होना चाहिए। विद्यार्थियों में विनम्रता व नम्यता की क्षमता विकसित करना जरूरी है ताकि वे सभी प्रकार की स्थितियों में सहिष्णुता व आत्मसम्मान के साथ संवाद स्थापित करने की क्षमता प्राप्त कर सकें।

यद्यपि भाषा-विज्ञानी सिद्धान्तों और आनुप्रयोगिक भाषा विज्ञान की अंतःक्रिया ने कई तरह की शिक्षण पद्धतियों व सामग्रियों को जन्म दिया है, लेकिन भाषा की कक्षाएँ अभी भी ऊबाऊ बनी हुई हैं और व्यवहारवादी ढाँचे का ही अनुसरण कर रही हैं। वे भाषाएँ जिनसे बच्चा परिचित होता है यानी जिनके साथ स्कूल में प्रवेश करता है उनमें विशेष प्रगति नहीं कर पाता है। द्वितीय भाषा (जैसे अंग्रेजी) के मामले में 6 से 10 साल तक लगातार पढ़ाए जाने के बावजूद बच्चे आधारभूत आरंभिक स्तर की दक्षता भी हासिल नहीं कर पाते और शास्त्रीय अथवा विदेशी भाषाओं के मामले में तो केवल कुछ चुनी हुई चीजों का रट्टा मारने का चलन जारी है। ऐसा नहीं है कि इन बातों पर अध्ययन नहीं हुए हैं। जरूरत है हम विशिष्ट संदर्भों को समझें, फिर कुछ उद्देश्य तय करें और उनके अनुसार उपयुक्त तरीके व सामग्री विकसित करें।

बहुत लंबे समय से हम भाषा शिक्षण के उद्देश्य को महज सुनने-बोलने-पढ़ने-लिखने (एस.एल.आर. डब्ल्यू.) के मद्देनजर देखते रहे हैं। हाल ही में हमने संप्रेषण कौशलों, उच्चारण विविधता और स्वर प्रशिक्षण, आदि के बारे में गंभीरता से बात करना शुरू किया है। इन क्षमताओं या कुशलताओं पर अतिरिक्त ध्यान देने से बड़ा ही नुकसान हुआ है। इस आधार पत्र में यद्यपि हम इसी ढाँचे के तहत उद्देश्यों पर बात करेंगे, लेकिन हम भाषा दक्षता के मामले में ज्यादा समग्रतावादी दृष्टिकोण अपनाने की वकालत भी करते हैं। आखिर जब हम बोल रहे होते हैं तभी सुन भी रहे होते हैं और जब हम लिख रहे होते हैं तभी पढ़ भी रहे होते हैं। साथ

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

ही कई परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं (जैसे मित्र मिलजुल कर नाटक पढ़ रहे होते हैं और इसके लिए कुछ नोट करते हैं) जिसमें हमारी भाषा क्षमता के सभी पहलू और संज्ञानात्मक योग्यताएँ एक साथ काम कर रही होती हैं। हमारे कुछ लक्ष्य इस प्रकार हैं :

- (क) **जो कुछ वह सुनता है उसे समझने की दक्षता** : एक शिक्षार्थी को जो कुछ कहा गया है उसे समझने के लिए उसमें वक्ता की ओर से आनेवाले विभिन्न गैर शाब्दिक संकेतों को ग्रहण करने की क्षमता होनी चाहिए। उसमें गैर शाब्दिक संकेतों के द्वारा सुनकर और समझकर संबंध जोड़ने और अनुमान लगाने की कुशलता होनी चाहिए।
- (ख) **समझ के साथ पठन की योग्यता होनी चाहिए न कि मात्र डिकोडीकरण की** : उसे विभिन्न व्याकरण सम्मत, अर्थगत और लिपि संकेतों के प्रयोग द्वारा आरेखित तरीके से संबंधित विषयवस्तु से पठन की आदत विकसित करनी चाहिए तथा अपने पिछले ज्ञान के साथ जोड़कर निष्कर्षों द्वारा अर्थ निर्माण के योग्य होना चाहिए। उसे पठन के लिए आत्मविश्वास विकसित करना चाहिए तथा विवेचनात्मक दृष्टिकोण के साथ पढ़ते समय प्रश्न भी सामने रखने चाहिए।
- (ग) **सहज अभिव्यक्ति की क्षमता** : उसे विभिन्न परिस्थितियों में अपने संप्रेषणात्मक कौशलों को प्रयोग में लाने में समर्थ होना चाहिए। उसके खजाने में अभिव्यक्ति के कई तरीके होने चाहिए जिन में से वह चुन सके। उसे इस योग्य भी होना चाहिए कि वह तार्किक, विश्लेषणात्मक तथा रचनात्मक ढंग से परिचर्चा में शामिल हो सके।
- (घ) **सुसंगत लेखन** : लेखन एक यांत्रिक कौशल नहीं है। इसमें विभिन्न संबंध युक्तियाँ अर्थात् तत्संबंधी विषयों के द्वारा उस विषय को संयोजित करने एवं पर्यायवाची इत्यादि के प्रयोग द्वारा विचारों को सुसंगत ढंग से संयोजित करने की योग्यता के साथ-साथ व्याकरण, शब्द-ज्ञान, विषय, विराम-चिह्नों पर पर्याप्त नियंत्रण इत्यादि कौशल सम्मिलित हैं। शिक्षार्थी को अपने विचार सहज एवं व्यवस्थित ढंग से प्रकट करने का आत्मविश्वास विकसित करना चाहिए। विद्यार्थी को अपने लिए विषय का चयन करने, विचारों को व्यवस्थित करने और श्रोता-बोध की दृष्टि से लिखने के लिए प्रोत्साहित एवं प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। यह केवल तभी संभव है जब उसका लेखन एक प्रक्रिया के रूप में दिखाई दे न कि एक उत्पाद के रूप में। उसे विभिन्न उद्देश्यों से और विभिन्न परिस्थितियों में अनौपचारिक से पूर्णतः औपचारिक रूप तक लेखन का प्रयोग करना आना चाहिए।
- (ङ) **विभिन्न रजिस्ट्रों पर नियंत्रण** : भाषा का प्रयोग कभी भी एक तरह से नहीं होता है। इसके असंख्य प्रकार, अर्थ भेद एवं रंग होते हैं जो विभिन्न परिस्थितियों और विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार होते हैं। विभिन्न स्वर स्तरों (रजिस्ट्रों) के रूप में जानी जानेवाली विभिन्नताएँ, एक विद्यार्थी के शब्द/वाक्य भंडार का एक अंश होना चाहिए। विद्यालय के विषयों के अतिरिक्त विद्यार्थी को विभिन्न प्रयोजनों जैसे- संगीत, खेलकूद, फिल्म, बागवानी, निर्माण कार्य, पाककला इत्यादि में प्रयोग की जानेवाली विभिन्न भाषाओं, शब्दों और वाक्यों को समझने और उनके प्रयोग में भी दक्ष होना चाहिए।
- (च) **भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन** : भाषा की कक्षा में विभिन्न शिक्षण तकनीकियाँ अपनाई जानी चाहिए। कराए जानेवाले कार्य इस प्रकार से होने चाहिए कि उनसे बच्चा वैज्ञानिक प्रक्रिया के तमाम अवयवों जैसे- आँकड़ों का संकलन, आँकड़ों का अवलोकन और उनकी समानताओं और विभिन्नताओं के आधार पर उनका वर्गीकरण एवं परिकल्पना करने, इत्यादि के अनुसार अग्रसर हो। इस प्रकार बच्चे की संज्ञानात्मक योग्यताओं को विकसित करने में भाषा विज्ञान के ये उपकरण महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। इससे व्याकरण के मानक नियमों को बेहतर ढंग से सीखा जा सकेगा तथापि यह प्रक्रिया बहुभाषीय कक्षाओं में विशेष रूप से प्रभावी है।

- (छ) **सृजनात्मकता** : भाषा की कक्षा में एक विद्यार्थी को अपनी कल्पना और सृजनात्मकता विकसित करने के लिए पर्याप्त स्थान मिलना चाहिए। कक्षा का लोकाचार और शिक्षक-विद्यार्थी संबंध बच्चे में आत्मविश्वास विकसित करता है जिससे पाठ्यसामग्री के आदान-प्रदान और गतिविधियों में बिना अवरोध के दोनों ही सृजनात्मकता का प्रयोग करते हैं।
- (ज) **संवेदनशीलता** : भाषा की कक्षा द्वारा विद्यार्थियों को हमारी समृद्ध संस्कृति विकसित करने एवं समकालीन जीवन के विभिन्न पहलुओं से अवगत करवाने के बेहतर अवसर उपलब्ध होते हैं। भाषा की कक्षा और पाठ्यसामग्री से विद्यार्थियों को अपने इर्द-गिर्द लोगों एवं राष्ट्र के प्रति संवेदनशील बनने के अधिक अवसर भी प्राप्त होते हैं।

...एक शिक्षार्थी एक भाषा के व्याकरण को सहज निर्मित करने में तभी सक्षम होगा जब उसे चिंता रहित परिस्थितियों में ऐसी सामग्री उपलब्ध करवाई जाएँ/जो कि वह समझ सके। जैसा कि क्राषेन (1985) ने सुझाव दिया, "निवेश केवल तभी ग्राह्य बनेंगे यदि अभिवृत्तियाँ सकारात्मक हों और अभिप्रेरणा सुदृढ़ हो।"

भाषा-शिक्षण के उद्देश्य कक्षा 1 से 2

बच्चे के व्यक्तित्व निर्माण में मातृभाषा का महत्वपूर्ण योगदान है। मातृभाषा को बच्चा अपने माता-पिता एवं अन्य परिजनों से सुनकर अनायास ही सीख लेता है और उससे उसका सहज संबंध स्थापित हो जाता है। भाषा प्रत्येक बच्चे के दृष्टिकोण, उसकी रुचियों, क्षमताओं, यहाँ तक कि मूल्यों और मनोवृत्तियों को भी आकार देती है। भाषा सोचने, महसूस करने और चीजों से जुड़ने का एक उत्तम साधन है। भाषा ही बच्चे को समझदार, विचारवान, सभ्य और शिक्षित बनाती है। मातृभाषा में ही बच्चे का मस्तिष्क सबसे पहले क्रियाशील होता है। अतः मातृभाषा बच्चे की पहली उपलब्धि और सहायिका है। यही कारण है कि सभी शिक्षाशास्त्री एकमत हैं कि प्राथमिक स्तर की शिक्षा में संप्रेषण का माध्यम मातृभाषा ही होना चाहिए। प्राथमिक शिक्षण में मातृभाषा की महत्ता को शोध द्वारा स्थापित किया जा चुका है। विद्यालय बच्चों के लिए ऐसा स्थान है जो कई दृष्टियों से घर से भिन्न है। विद्यालय के अपने नियम-कायदे हैं। बच्चे कुछ घंटों के लिए अपने परिवार से दूर हो जाते हैं। परंतु बच्चे अपने साथ बहुत कुछ लेकर विद्यालय आते हैं – अपनी भाषा, अपने अनुभव एवं दुनिया को देखने का अपना दृष्टिकोण आदि। इन्हीं सबका उपयोग करते हुए शिक्षक को बच्चों से आत्मीय संबंध बनाना पड़ता है ताकि विद्यालय के नवीन परिवेश में बच्चे अपनापन अनुभव करें। बच्चों के घर की भाषा और विद्यालय की भाषा के बीच के संबंध को उसकी विविधता एवं लचीलेपन के साथ देखना अत्यंत आवश्यक है। प्रत्येक बच्चे की भाषा अपने आप में पूर्ण होती है इसलिए उसे किसी मापदंड पर आँकना उचित नहीं है।

बच्चे घर-परिवार एवं परिवेश से प्राप्त बोलचाल की भाषा के अनुभवों को लेकर ही विद्यालय आते हैं। पहली बार स्कूल में आनेवाला बच्चा शब्दों के अर्थ और उनके प्रभाव से परिचित होता है। लिपिबद्ध चिह्न और उनसे जुड़ी ध्वनियाँ बच्चों के लिए अमूर्त हैं, इसलिए पढ़ने का प्रारंभ अर्थ से ही हो और किसी उद्देश्य के लिए हो। यह उद्देश्य कहानी सुनकर, पढ़कर आनंद लेने के रूप में भी हो सकता है। धीरे-धीरे बच्चों में भाषा की लिपि से परिचित होकर अपने परिवेश में उपलब्ध लिखित भाषा को भी पढ़ने समझने की जिज्ञासा उत्पन्न होती है। भाषा शिक्षण की इस प्रक्रिया के मूल में बच्चों के बारे में यह अवधारणा है कि बच्चे दुनिया के बारे में अपनी समझ और ज्ञान का निर्माण स्वयं करते हैं। यह निर्माण किसी के सिखाए जाने या जोर जबरदस्ती से नहीं बल्कि बच्चों के स्वयं के अनुभवों और आवश्यकताओं से होता है। इसलिए बच्चों को ऐसा वातावरण मिलना जरूरी है जहाँ वे बिना किसी रोक-टोक के अपनी उत्सुकता के अनुसार अपने परिवेश की खोज-बीन कर सकें।

यही अवधारणा बच्चों के भाषिक कौशलों पर भी लागू होती है। स्कूल में आने पर बच्चे प्रायः स्वयं को

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

बेझिझक अभिव्यक्त करने में असमर्थ पाते हैं क्योंकि जिस भाषा में वे सहज रूप से अपनी राय, अनुभव, भावनाएँ आदि व्यक्त करना चाहते हैं वह स्कूल में प्रायः स्वीकृत नहीं होती। भाषा शिक्षण को बहुभाषी संदर्भ में रखकर देखने की आवश्यकता है। कक्षा में बच्चे अलग-अलग भाषाई-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आते हैं। कक्षा में इनकी भाषाओं का स्वागत किया जाना चाहिए और उनमें बच्चों से सहज अभिव्यक्ति क्षमता का उपयोग करते हुए हिंदी पढ़ाई जानी चाहिए। शिक्षक बहुभाषिकता की महत्ता को समझकर कक्षा में उसका उपयोग करें, तभी वह बच्चों को अपने परिवेश में स्थित सांस्कृतिक और भाषिक विविधता के प्रति संवेदनशील बना सकता है। आज बहुभाषिकता को बच्चे के व्यक्तित्व विकास के लिए संसाधन के रूप में विकसित करने की आवश्यकता है।

उद्देश्य

1. बच्चों में अपने अनुभव और विचार बताने की इच्छा और उत्सुकता जगाना;
 - बच्चे स्कूल के वातावरण में अपनापन महसूस करें।
 - वे घर की भाषा और स्कूल की भाषा में आपसी संबंध बनाते हुए उसको विस्तार दे सकें।
 - बच्चों को प्रश्न पूछने, अपनी बात कहने का भरपूर मौका मिले।
2. बच्चों में दूसरों की बात सुनने में रुचि और धैर्य पैदा करना, उनसे सुनी बात पर टिप्पणी दे पाना;
3. बच्चे द्वारा अक्षर जोड़कर पढ़ने की बजाय समझकर पढ़ना;
 - परिवेश में उपलब्ध संदर्भों, चित्रों और छपी हुई सामग्री से परिचित होने के कारण बच्चा अनुमान से पढ़ने का प्रयास कर सकेगा।
4. बच्चों द्वारा अपनी दुनिया तथा अपने पूर्वज्ञान की मदद से पाठ्यसामग्री और स्कूली परिवेश में उपलब्ध लिखित सामग्री से अर्थ ग्रहण करना, जैसे –
 - पढ़ने की प्रक्रिया को दैनिक जीवन की (स्कूल और बाहर की) ज़रूरतों से जोड़ना, जैसे-कक्षा और स्कूल में अपना नाम, अपनी मनपसंद पाठ्यसामग्री और पाठ्यपुस्तक का नाम पढ़ना।
 - परिवेश में उपलब्ध छपी हुई सामग्री (चित्र और शब्द) को देखकर बच्चे संदर्भ से परिचित होने के कारण अनुमान लगाकर पढ़ने का प्रयास कर सकते हैं।
5. सुनी और पढ़ी कहानियों और कविताओं से अपने अनुभव जोड़ पाना और उसके बारे में बात करना।
 - बच्चे अपने अनुभव संसार और काल्पनिक संसार को बेझिझक और सहज ढंग से अभिव्यक्ति कर सकें।
 - सुनी हुई कहानियों को अपने शब्दों और अपने अंदाज में दूसरों को सुना सकें।
6. चित्रकारी को स्वयं की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाना
 - बच्चे स्वाभाविक अभिव्यक्ति के लिए किसी भी प्रकार का रेखांकन कर सकते हैं।
7. लिपि चिह्नों को देखकर और उनकी ध्वनियों को सुनकर और समझकर उनमें सहसंबंध बनाते हुए लिखने का प्रयास कर सकें।

कुछ प्रश्न :

- आपकी राय में कक्षा 1 व 2 के लिए भाषा शिक्षण के ये उद्देश्य क्यों ठीक हैं?
- क्या आप इस सूची में कुछ और जोड़ना चाहेंगे? तो क्या?
- उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों में से किन्हीं दो उद्देश्यों को चुनिये व बताइए कि इन उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु आप कक्षा में क्या प्रयास करेंगे?

भाषा-शिक्षण के उद्देश्य कक्षा 3 से 5

तीसरी कक्षा तक आते-आते बच्चे स्कूल से परिचित हो जाते हैं और वहाँ के वातावरण में घुलमिल जाते हैं। स्कूल का वातावरण और दूसरे बच्चों का साथ उन्हें हिंदी भाषा में निहित स्थानीय, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक विविधताओं से परिचित कराता है। इसके अतिरिक्त वे अन्य भाषाओं के प्रति संवेदनशील भी हो जाते हैं।

इस स्तर पर बच्चों की भाषा से जुड़े कौशलों की प्रकृति में गुणात्मक बदलाव आएगा। उनमें स्वतंत्र रूप से पढ़ने की आदत विकसित होगी। पढ़ी हुई सामग्री से वे संज्ञानात्मक और भावनात्मक स्तर पर जुड़ेंगे और उसके बारे में स्वतंत्र और मौलिक विचार व्यक्त कर सकेंगे। यहाँ तक आते-आते लिखना एक प्रक्रिया के रूप में प्रारंभ हो जाता है, और वे अपने विचारों को व्यवस्थित ढंग से लिखने लगते हैं।

उद्देश्य

1. बच्चों में पुस्तकों के प्रति रुचि जागृत करना—
 - पाठ्यपुस्तक की विधाओं से परिचित होना और उनसे प्रेरित होकर उन विधाओं की अन्य पुस्तकें पढ़ना।
 - मुख्य बिंदु/विचार को ढूँढ़ने के लिए विषय-सामग्री की बारीकी से जाँच करना।
 - विषय सामग्री के माध्यम से नए शब्दों के अर्थ जानने की कोशिश करना।
2. पूर्व अर्जित भाषायी कौशलों का उत्तरोत्तर विकास करना
 - दूसरे के विचारों को सुनकर समझना और अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकना।
 - दूसरों के विचारों को पढ़कर समझने की योग्यता का विकास करना।
 - पठन के द्वारा ज्ञानार्जन एवं आनंद प्राप्ति में समर्थ बनाना।
 - अध्ययन की कुशलता का विकास करना।
 - स्वतंत्रता और आत्मविश्वास के साथ लिख पाना।
 - मनपसंद विषय का चुनाव कर लिख सकना।
 - विषयवस्तु और विचारों के प्रस्तुतीकरण में लेखन की तकनीक का विकास करना।
 - दूसरों की अभिव्यक्ति को सुनकर उचित गति से शब्दों एवं वाक्यों को लिख सकना।

1 डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

- भाषा को अपने परिवेश और अपने अनुभवों को समझने का माध्यम मानना और उसका सार्थक उपयोग कर सकना।
 - कक्षा में बच्चों को बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक संदर्भों से जोड़ना।
 - बच्चों की कल्पनाशीलता और सृजनात्मकता को विकसित करना।
 - भाषा के सौंदर्य की सराहना करने की योग्यता का विकास करना।

व्याकरण

बच्चों की भाषा में इस बात के पर्याप्त संकेत मिलते हैं कि वे अपनी भाषा का व्याकरण अच्छी तरह जानते हैं। पर व्याकरण की सचेत समझ बनाने के लिए यह आवश्यक है कि बच्चों को उसके विभिन्न पक्षों की पहचान विविध पाठों के संदर्भ में और आसपास के परिवेश से जोड़कर कराई जाए। व्याकरण की अवधारणाओं की अमूर्त परिभाषाएँ याद करने से ज्यादा महत्वपूर्ण हैं उन्हें वास्तविक संदर्भों में समझना। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यपुस्तकों के अभ्यास प्रश्न, कक्षा में शिक्षक द्वारा इस्तेमाल की जानेवाली व्यावहारिक गतिविधियाँ और युक्तियाँ महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। व्याकरण के पक्षों की समझ चरणबद्ध क्रम में विकसित की जा सकती है : पहला चरण पहचान का है और दूसरा चरण प्रयोग का है।

उदाहरण 1 : कक्षा 3 में नामवाले शब्दों के बारे में बच्चों को पाठ और कक्षा के परिवेश के संदर्भ में (जैसे, किताब, रोटी, मेज, पंखा, रसीद, रिबन, जूता, दीवार, छत आदि) बताया जा सकता है। कक्षा 4 में बच्चे ऐसे शब्दों का वाक्य में प्रयोग कर सकते हैं या किसी बच्चे द्वारा बनाई गई कहानी, घटना आदि में नामवाले शब्द ढूँढ सकते हैं। कक्षा 5 में नामवाले शब्दों को संज्ञा का नाम दिया जा सकता है और कक्षा 6 में बच्चों को संज्ञा के भेदों के बारे में बताया जा सकता है।

उदाहरण 2 : पाठ्यपुस्तक के अभ्यास-प्रश्नों में या कक्षा में शिक्षक द्वारा एक प्रकार के शब्दों की सूची दी जा सकती है जिसका अवलोकन करके बच्चे उन में होनेवाले बदलावों को पहचान सकते हैं— (एक) गेंद— (तीन) गेंदे — (एक) गिलास— (पाँच) गिलास (एक) सड़क— (कई) सड़कें— (एक) भैंस — (कई) भैंसें। बच्चों द्वारा इन परिवर्तनों को पकड़ पाना भाषा के नियमबद्ध स्वरूप को समझ पाने की दिशा में पहला कदम है।

कुछ प्रश्न :

- रमेश का कहना है कि बच्चे जब स्कूल आते हैं तो उनको व्याकरण का पर्याप्त ज्ञान होता है क्या आप रमेश की बात से सहमत हैं? हाँ/नहीं अपने उत्तर का कारण भी दीजिए।
- निम्नलिखित कथनों के बारे में आपकी क्या राय है?
 - बच्चों को व्याकरण पढ़ाना तब शुरू करना चाहिए जब वे भाषा का प्रयोग (पढ़ने में, लिखने में, बोलने में) धड़ल्ले से करने लग जाय।
 - कक्षा में शुरुआत बच्चों की मातृभाषा से ही होनी चाहिए।
- क्या कक्षा पाँच तक आते-आते बच्चे उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों के अनुसार सीख पाते हैं? कितना सीख पाते हैं? और कितना नहीं? और किस वजह से नहीं सीख पाते?



अध्याय – 4

भाषा की कक्षा कैसी हो?

परिचय :

भाषा की अच्छी कक्षा में क्या-क्या हो? यह एक विचारणीय मुद्दा है। अधिकांशतः भाषा की कक्षाएँ पाठ पढ़ाकर उसके प्रश्न-उत्तर लिखने तक ही सीमित रहती हैं। पूर्व अध्याय में हमने भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों के बारे में पढ़ा है और आप यह समझ सकते हैं कि पाठ पढ़ना व उसके प्रश्न उत्तर करना भाषा के विभिन्न उद्देश्यों को प्राप्त करने में कितनी मदद करते हैं अथवा नहीं करते हैं। यह जरूरी है कि भाषा की कक्षा को पाठ्यपुस्तक व प्रश्न-उत्तर तक सीमित न रखा जाए वरन् उसे बच्चों के आस-पास की दुनिया, उनके अपने अनुभवों से जोड़ा जाय। साथ ही उनको सोचने, अपनी सोच को व्यक्त करने, अपने शब्दों को अर्थ देने के मौके उपलब्ध कराए जाएँ।

लेकिन यह कैसे हो? यही समझने के लिए इस अध्याय में दो लेख हैं। पहला लेख प्रारंभिक साक्षरता परियोजना के तहत बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने हेतु जो विभिन्न प्रयास किये गये उस बारे में है। लेख में यह बताया गया है कि इस परियोजना के तहत किये गये इन प्रयासों के पीछे क्या नजरिया था? व पूरे प्रयास के दौरान इससे जुड़े समूह के क्या अनुभव रहे? यह लेख किसी कक्षा-विशेष के दौरान क्या हुआ? इस बारे में बात नहीं करता बल्कि पूरे कार्यक्रम के दौरान किन-किन बिन्दुओं पर फोकस किया गया व उससे पढ़ना-लिखना सीखने में बच्चों को कैसे मदद मिली इस बारे में हुए अनुभवों को आपके समक्ष रखता है। वहीं दूसरा लेख एक कक्षा में शिक्षक ने बच्चों के साथ कैसे कार्य किया? उस बारे में है।

उद्देश्य :

- भाषा की अच्छी कक्षा कैसी हो? के बारे में समझ बना पाएँगे।
- भाषा की अच्छी कक्षा में क्या-क्या हो? के बारे में समझ बना पाएँगे।
- भाषा की कक्षा में बच्चों की भूमिका कैसी हो? को समझ पाएँगे।
- भाषा की कक्षा में शिक्षक की क्या भूमिका हो? की समझ पाएँगे।

भाषा की कक्षा कैसी हो? कुछ उदाहरण

उदाहरण : 1

सार्थक और सक्रिय लिखित माहौल विकसित करने के प्रयास

बच्चे सबसे अधिक लिखना-पढ़ना तब सीखते हैं, जब इन्हें अर्थपूर्ण बनाया जाए और उनके जीवन से प्राप्त अनुभवों और शब्दों के साथ जोड़ा जाए भाषा। सीखने-सिखाने की वर्तमान सोच के पीछे यह अवधारणा है कि बच्चे दुनिया के बारे में अपनी समझ और ज्ञान का निर्माण स्वयं करते हैं। यह निर्माण किसी के सिखाए जाने से नहीं, बल्कि बच्चों के खुद के अनुभवों और सक्रिय खोजबीन द्वारा होता है।

- लिखित शब्दों का बच्चों के जीवन से रिश्ता जोड़ना ताकि वे उनके लिए मायने रखें।
- लिखित परिवेश द्वारा पाठ्यक्रम से जुड़े सहयोगी तथ्य प्रदर्शित करके पाठ्यक्रम को बच्चों के लिए सार्थक बनाने का प्रयास करना।

कक्षा में लिखित परिवेश से जुड़े हुए कुछ तथ्य

इन तथ्यों के पीछे यह सोच है कि बच्चों को ऐसी लिखित सामग्री से घेर लिया जाए, जो उनके लिए दिलचस्प और अर्थपूर्ण हो, ताकि, बच्चे सक्रिय रूप से लिखने-पढ़ने की प्रक्रिया से जुड़ें। इसके लिए उपयुक्त लिखित तथ्यों का चयन किया गया, और फिर उनसे जुड़ी गतिविधियाँ, खेल और वर्कशीट बनाई गईं, ताकि बच्चे सक्रिय तरीकों से लिखित तथ्यों से जुड़ें।

निम्नलिखित तथ्यों का प्रयोग कक्षाओं में किया गया—

- उपस्थिति चार्ट
- सुबह का संदेश या आज का संदेश
- शब्द—दीवार
- अक्षर चार्ट
- कैलेण्डर
- पहली का कोना
- कविता का कोना
- कहानी
- शीर्षक के साथ और उनकी आँख के स्तर पर बच्चों के कार्य का स्पष्ट प्रदर्शन
- दीवार पर मुक्त लेखन के लिए जगह
- कक्षा में विभिन्न प्रस्तुतियों के स्पष्ट शीर्षक

उपर्युक्त में से कुछ तथ्यों को विस्तार से नीचे प्रस्तुत किया गया है:—

उपस्थिति चार्ट

नन्हें बच्चे अक्सर सबसे पहले अपना नाम लिखना सीखते हैं। जिन कक्षाओं में बच्चों की संख्या सीमित थी, वहाँ पर इस प्रक्रिया को कक्षा में बच्चों की उपस्थिति से जोड़ा गया। 'उपस्थिति रजिस्टर' की जगह बच्चों के नाम, एक चार्ट में क्रम में लिखे गए। साथ ही ऊपर एक पंक्ति में तिथियाँ लिखी गईं। इस चार्ट को बच्चों की पहुँच के अनुसार कक्षा की दीवार पर लगाया गया। सबसे पहला नाम कक्षा के शिक्षक का लिखा गया। जैसे-जैसे बच्चे अपना नाम पढ़ना सीखते गए। वे अपनी उपस्थिति चार्ट में स्वयं लगाने लगे। बच्चे एक-दूसरे की सहायता भी करने लगे। कुछ ही दिनों में लगभग सभी बच्चे सबके नामों से परिचित हो गए। अब बच्चों को प्रोत्साहित किया गया कि वे अपने नाम के सामने रोज़ अपनी कोई छोटी बात लिखें या चित्र बनाएँ। शिक्षक भी लिखने लगे। इस प्रक्रिया से बच्चे बहुत उत्साहित हुए। किसी ने लिखा, "आज मैं आई हूँ";

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

तो किसी और ने लिखा, "मैंने बूट पैसे हैं"। यहाँ पर गलतियों को सुधारा नहीं गया ताकि बच्चे खुलकर इस वास्तविक, लिखित संप्रेषण में भाग ले सकें।

सुबह का संदेश या आज का संदेश

श्यामपट्ट के एक कोने में अध्यापिका बच्चों के लिए एक संदेश हर रोज़ लिखती है। इस तरह की छोटी बातें, जो वास्तविक हों और बच्चों को प्रतिदिन पढ़ने के लिए आकर्षित करें। जैसे, "आज मैंने नीली सलवार पहनी है" या "आज मैंने तीन बसें देखीं"। हमने पाया कि जिन कक्षाओं में इस गतिविधि को नियमित तरीके से किया जाता है, वहाँ पर बच्चे हर सुबह कक्षा में प्रवेश करने के बाद खूब उत्साहित होकर शिक्षक के लिखित संदेश की प्रतीक्षा करने लगते हैं और फिर तुरन्त ही एक-दूसरे की मदद से इसको पढ़ने के प्रयास में जुट जाते हैं। धीरे-धीरे बच्चों को भी अपनी छोटी-छोटी बातें लिखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और यह कोना कक्षा में वास्तविक लिखित संवाद का एक कोना बनने लगता है।

शब्द-दीवार

कक्षा में शब्द चार्ट पर या दीवार पर चिपकाए जाते हैं। इसका उद्देश्य है कि ये शब्द बच्चों की दृष्टि में रहें ताकि वे इनसे घुल-मिल जाएँ और दोस्ती बना लें। इसके लिए इन्हें केवल दीवार पर लिखना ही काफी नहीं है। इन शब्दों के प्रयोग के लिए कई गतिविधियाँ, शब्द खेल और वर्कशीट तैयार की गई हैं।

हर कक्षा में शब्दों की तीन श्रेणियाँ होती हैं—

- पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु और हिन्दी पाठ्यपुस्तक से लिए गए शब्द,
- स्तर 1 के बच्चों के लिए कुछ सरल शब्द,
- बच्चों की असली दुनिया से जुड़े हुए शब्द जो बच्चों से बातचीत के ज़रिए कक्षा में उपलब्ध होते हैं।

ये 'शब्द दीवारें' बच्चों के लिए शब्द देखकर सीखने की प्रक्रिया में सहयोगी ढाँचे का रूप ले लेती हैं। निरन्तर रूप से, समय-समय पर नए शब्दों को शब्द-दीवार में प्रदर्शित किया जाता है और बच्चों द्वारा इनका प्रयोग विभिन्न गतिविधियों से जोड़कर भी करवाया जाता है। इन शब्द-दीवारों में बच्चों की घरेलू भाषाओं के कुछ शब्दों को भी शामिल किया जाता है ताकि बच्चों के लिए स्कूल और घर का फासला कुछ कम हो और उन्हें कक्षा में स्वीकृति का अहसास मिले। शब्द-दीवार बच्चों और शिक्षकों, दोनों को फायदेमन्द लगी बल्कि कुछ कक्षाओं में, आधी छुट्टी के समय बच्चे स्वयं ही इन शब्द-दीवारों से जुड़े खेल दिलचस्पी से खेलने लगे थे।

कैलेण्डर

बच्चों द्वारा बनाए गए मासिक कैलेण्डर को कक्षा में लगाया जाता है और फिर उसके साथ स्पष्ट शब्दों में कैलेण्डर से जुड़े कुछ निर्देश या प्रश्न लिखे जाते हैं। जैसे बच्चों को किसी घटना से संबंधित दिन पहचानने के लिए कहा जाता है या उपस्थिति चार्ट से जुड़े प्रश्न लिखे जाते हैं, जैसे महीने में कौन-से दिनों में सब से कम बच्चे उपस्थित थे? इत्यादि। इनको पढ़कर बच्चे कैलेण्डर में से इनके जवाब खोजकर लिखते हैं। कुछ कक्षाओं में शिक्षकों ने कैलेण्डर को मौसम चार्ट से जोड़ा था। इस गतिविधि के दौरान प्रत्येक दिन के सामने उस दिन के मौसम का उपयुक्त, पूर्व निर्धारित चिह्न, बच्चों द्वारा बनाया जाता है। इन्हें गणित के प्रदर्शित लिखित प्रश्नों में शामिल किया जाता है और इन प्रश्नों के जवाब बच्चे कैलेण्डर से खोजकर लिखते हैं। बड़ी कक्षाओं में बच्चों को इस कैलेण्डर से जुड़े सवाल स्वयं लिखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और बाकी बच्चे इनके जवाब ढूँढते हैं। इस तरह कैलेण्डर को कक्षा में वास्तविक और सक्रिय लिखित संप्रेषण

का एक साधन बनाया जाता है। कैलेण्डर के पास ही वर्ष के, महीनों के अथवा सप्ताह के दिनों के नामों को यदि शब्द-दीवार में लगाया जाए, तो ये नन्हें बच्चों के लिए फायदेमंद साबित होते हैं।

पहेली का कोना

पाठ्य-पुस्तक से संबंधित पहेलियाँ 'पहेली के कोने' में लिखी गईं और इसके पास बच्चों के जवाब के लिए एक चार्ट लगाया गया। इनके जवाब बच्चे पाठ में से खोजकर लिखते थे। कुछ समय बाद बच्चों को अपनी पहेलियाँ बनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इसके लिए बच्चों को पहेली का एक सरल ढाँचा दिया गया। सबसे पहले कुछ पहेलियाँ पूरी कक्षा के संग श्यामपट्ट पर बच्चों की भागीदारी से निर्मित की गईं। जब बच्चे पहेली के ढाँचे से परिचित हो गए, तब उन्हें अपनी व्यक्तिगत पहेलियाँ बनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया और इन्हें कक्षा में प्रदर्शित किया गया। यह एक बहुत लोकप्रिय गतिविधि थी और बच्चों ने बहुत सारी पहेलियाँ बनाईं और एक-दूसरे की पहेलियों के जवाब ढूँढने में व्यस्त हो गए।

कुछ पहेलियाँ बच्चों की घरेलू भाषा में थीं और कुछ पारम्परिक शैली में। इस तरह बच्चों की रोज़मर्रा की भाषा और तौर तरीकों को कक्षा में एक जगह मिली।



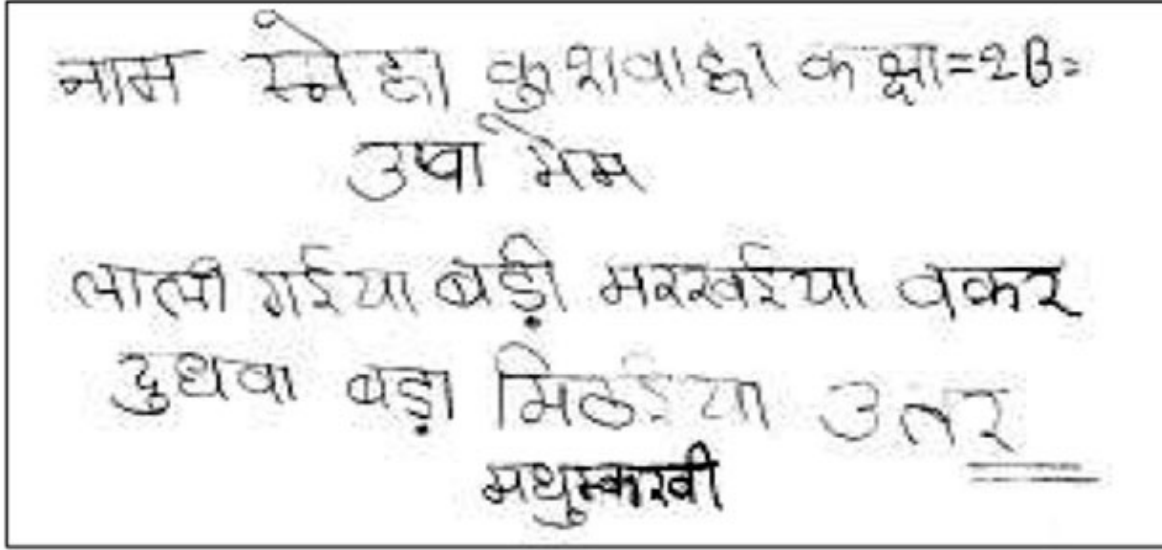
हमने पाया कि वे बच्चे जो अब तक कक्षा की प्रक्रिया में भाग नहीं ले रहे थे, अब कुछ हद तक भाग लेने लगे। यह वास्तव में उनके लिए एक बहुत बड़ा कदम था जिसके लिए उन्हें कक्षा में स्वीकृति मिलनी ज़रूरी थी, ताकि वे खुलकर लिखें। एक प्रस्ताव है कि बच्चों की पहेलियों का संकलन कक्षा की पहेली पुस्तक के रूप में बनाया जाए।

कविता का कोना

बच्चे कविताओं की दुनिया में खुशी से प्रवेश करते हैं और सभी बच्चे प्रदर्शित कविताओं को थोड़े ही समय में याद कर लेते हैं और फिर नई कविताएँ चाहते हैं। कुछ चुनी हुई रोचक कविताओं को बड़े कागज़ पर फोटो-कॉपी करके तीन-तीन रुपये में पोस्टर बन गए। इन्हें 'कविता के कोने' में लगाया गया। समय-समय पर बच्चों को ये कविताएँ पढ़कर सुनाई जाती हैं और फिर बच्चे अभिनय के साथ उनका उच्चारण भी करते हैं। हमारा अनुभव रहा कि कविता की लय और शब्दावली हर बच्चे को आकर्षित करती है। कविता के ढाँचे को बच्चे आनन्द से ग्रहण कर लेते हैं। फिर बच्चों को इन कविताओं के ढाँचे के आधार पर अपनी कविताएँ लिखने के लिए भी प्रोत्साहित किया गया। चूँकि यह एक नई गतिविधि है, पहली बार पूरी कक्षा की भागीदारी से एक कविता का लेखन श्यामपट्ट पर करवाया गया लेकिन जल्द ही बच्चे अपनी व्यक्तिगत कविताएँ लिखने लगे। बच्चों की कविताएँ कक्षा के भीतर प्रदर्शित की गईं और समय-समय पर इन्हें बच्चों द्वारा पढ़वाया गया।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

कुछ बच्चे केवल एक ही वाक्य लिख पाए परन्तु धीरे-धीरे अपने साथियों की कविताएँ देख-देखकर इनकी कविताओं में और वाक्य जुड़ने लगे। कभी बच्चों को तुकबन्दी वाले शब्द दिए गए और फिर उन्हें कविता लिखने के लिए उनसे जुड़ा एक ढाँचा दिया गया। कविता से जुड़ी गतिविधियाँ भी करवाई जाती हैं, जैसे- कविता के चित्र बनाना या शब्द खेल खेलना।



कुछ प्रश्न :

- “यहाँ गलतियों को सुधारा नहीं गया ताकि बच्चे खुलकर इस वास्तविक लिखित संप्रेषण में भाग ले सकें।” ऐसा क्यों किया गया है? इस संदर्भ में अपने विचार लिखिये।
- कक्षा दो के बच्चों के लिए यदि आप को शब्द चार्ट बनाने हों तो आप उसके लिए किस तरह के शब्दों को चुनेंगे? व क्यों?
- कक्षा के बच्चों से बातचीत करें और जानने का प्रयास करें कि उन्हें कौन सी पहेलियाँ, कविताएँ, कहानियाँ आती हैं? उस बातचीत के आपने अनुभव को संक्षिप्त में लिखिये।

अगर आए हो तो मन की बात लिखो

12.4.07

नाम = सुशील

कक्षा = IV A

मन करता है

आसमान में

सेर करूँ



मन करता है।

टीचर बनकर

बच्चों को पढ़ाऊँ



मन करता है।

डाक्टर बनकर

बच्चों का ईलाज करूँ



मन करता है।

चित्रकार बनकर

चित्र बनाऊँ



मन करता है।

तितली बनकर

दूर-दूर शेर करूँ



लगभग सभी बच्चे कविताएँ और कहानियाँ बहुत पसंद करते हैं और मौका मिलने पर खुलकर इनसे जुड़ी हुई अपनी बातें विस्तृत रूप से प्रकट करते हैं। इसके लिए कविताओं और कहानियों के चयन की ओर विशेष ध्यान दिया जाना अनिवार्य है ताकि चयनित कहानियाँ और कविताएँ बच्चों के लिए दिलचस्प, आनन्दमय और उपयुक्त हों। हमारी यह समझ है कि बच्चों की मनपसंद कविता और कहानी में उनके अन्दरूनी संसार

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

यानी उनकी कल्पना व अनुभव से रचित संसार को छूने का जादू है और इनसे जुड़ी बातचीत के ज़रिए जल्द ही वे अपनी काल्पनिक और वास्तविक दुनिया को कक्षा के भीतर ले आते हैं। कहानियाँ, कविताएँ और अन्य लेख बच्चों के लिए कक्षा के भीतर लेखन का सार्थक और सक्रिय माहौल उत्पन्न कर सकते हैं।

कहानी

हर कक्षा में कहानी पढ़ने के लिए समय निर्धारित किया जाता है। बच्चों को कहानी पढ़कर सुनाई जाती है। बच्चे कहानी सुनने या पढ़ने से पहले कहानी से जुड़ी बातचीत करते हैं। वे कहानी के चित्र देखकर अनुमान लगाते हैं कि कहानी में क्या होगा? इस तरह की पूर्व-पठन प्रक्रिया की एक अहम भूमिका मानी जाती है क्योंकि इसके द्वारा बच्चों का ध्यान केन्द्रित होता है और वे गहराई से कहानी से जुड़ते हैं। बच्चों को कहानी की पुस्तक पढ़ने के लिए भी दी जाती है। इसके साथ, बच्चों को प्रतिक्रिया के लिए हर कक्षा में एक चार्ट लगाया गया है जिसे हमने 'प्रतिक्रिया चार्ट' नाम दिया है। इस पर बच्चे कहानी का शीर्षक और कहानी की बातें अपनी कक्षा के साथियों के साथ लिखकर बाँटते हैं। इस गतिविधि से जुड़ने में बच्चों को काफी समय लगा लेकिन अन्ततः यह बच्चों के लिए एक लोकप्रिय गतिविधि साबित हुई।

कक्षा के लिखित माहौल को सक्रिय और अर्थपूर्ण बनाने में कहानी की अहम भूमिका होती है। कहानियों का बच्चों से एक गहरा जुड़ाव है। कहानियाँ प्रत्येक बच्चे के पूर्व अनुभव और व्यक्तिगत कथन को छूती हैं और बच्चों की अन्दरूनी दुनिया की झलक दिखलाती हैं। बच्चों को वास्तविक और काल्पनिक कहानी बतलाई जाती है या पढ़कर सुनाई जाती है तो उस कहानी से जुड़े उनके अनुभव उनकी व्यक्तिगत कहानियों का स्वरूप ले लेते हैं। बच्चे खुलकर कहानी से जुड़ी हुई अपनी बातों को पेश करने लगते हैं, पहले बोलकर और चित्र बनाकर, फिर धीरे-धीरे लिखकर।

बच्चों द्वारा लिखी कहानियों और लेखों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं—

दानी पेड़ की कहानी सुनने के बाद कक्षा 3 के छात्रों ने इस कहानी से जुड़े अपने भाव और अपने अनुभव लिखकर और चित्र बनाकर व्यक्त किए।

12.4.07

नाम पूजा कुमारी

कक्षा IVA

मेरे पेड़ को चिढ़ी

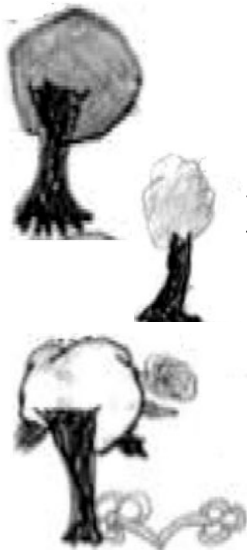
प्यारे दोस्त

मेरा नाम पूजा कुमारी में कक्षा IVA में। पढ़ती हूँ। मैं आपसे दोस्ती करना चाहती हूँ आप मुझे अच्छे लगते हैं। क्योंकि आप मुझे फल देते हो छाया और पत्तियाँ देते हैं और मेरी कक्षा भी पेड़ से प्यार करती है और पेड़ हवा दते हैं पेड़ को मैं बहुत प्यार करती हूँ फिर मेरी मम्मी आपके पेड़ से लकड़ी ला के मेरी मम्मी खाना बनाती है।

और हम स्कूल में अपनी मैडम को लकड़ी का देते हैं। आप हमको हरीयाली देते हो

आपकी दोस्त

पूजा कुमारी



नाम— शजास

कक्षा IV D

जब मैं खेलता रहता हु। तो फिर
मेरे पापा को गुस्सा आ जाता है।
तो फिर मेरे पापा कहते है। की
खेल तो बाद में भी खेल सकते
हो जब पढ़ोगे तो तभी जीवन
में आगे बढ़ोगे तुम पेपर में फेल
आओ में तो फिर पीछे ही रह



जाओगे जब में पेपर में फेल आता



हु तो फिर मेरे पापा बहुत मारते है। तो फिर में अपने पापा से नाराज हो जाता हु फिर मेरी मम्मी मुझे मनाने आती है। तो फिर मेरी मम्मी मुझे समझाती है की जब पढ़ते है। तो फिर जब पास हो जाते है। तो फिर इसमें गुस्सा होने कि किया बात है। तब से में पेपर के समय खेलता नहीं हूँ जब से में जादा नही खेलता हूँ।

रूसी और पूसी की कहानी अध्यापिका ने पूरी कक्षा को बड़े हाव-भाव के साथ पढ़कर सुनाई। इस कहानी में एक बिल्ली, जिसका नाम पूसी था, रूसी से नाराज हो जाती है। अध्यापिका ने पूसी के व्यवहार पर बच्चों से प्रतिक्रिया माँगी। कहानी की पूसी से जुड़कर, बातचीत 'नाराजगी' के विषय पर पहुँची। बातचीत के दौरान बच्चों ने अपनी सोच, अपने अनुभव और उनसे जुड़ी भावनाएँ प्रकट कीं और फिर लिखकर व चित्रों द्वारा इन्हें प्रस्तुत किया। कुछ बच्चे एक या दो वाक्य ही लिख पाते हैं, तो कुछ और बच्चे केवल चित्र ही बनाते हैं; लेकिन इन लेखों एवं चित्रों में बच्चों के वास्तविक अनुभवों की और उनके अन्दरूनी संसार की झलक मिलती है, और हर लेख की पृथकता दिखलाई देती है। बच्चों के लेख कक्षा में प्रदर्शित किए जाते हैं। वे एक-दूसरे को और गहराई से पहचानने लगते हैं। वे अपने साथियों की सोच और क्षमताओं से प्रभावित होते हैं, और इन प्रक्रियाओं के दौरान उनके स्वयं के लेखों में धीरे-धीरे सुधार आने लगता है। ज्यों ही वे लिखित शब्दों द्वारा अपनी सोच को पेश करते हैं, वे लिखित शब्दों से घुल-मिल कर, सार्थक रिश्ते बनाने लगते हैं और इस प्रकार से लिखित संसार के साथ एक गहरा रिश्ता कायम करने लगते हैं।

प्रारंभिक साक्षरता परियोजना (ई.एल.पी.), का निरन्तर प्रयास रहता है, कक्षा के भीतर समृद्ध लिखित माहौल विकसित करके बच्चों को वास्तविक और सक्रिय तरीकों से वर्ण, अक्षर, शब्द और लेख से दोस्ती बनाने के कई मौके प्रदान करना, ताकि लिखित संसार उनके लिए मायने रखे और उनकी लिखने-पढ़ने की क्षमताएँ सुदृढ़ बनें।

कुछ प्रश्न :

- इस लेख में दी गई गतिविधियों में से किन्हीं दो गतिविधियों को बच्चों के साथ कीजिए और अपने अनुभव लिखिए—

अपने अनुभव आप इन बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए लिख सकते हैं—

1. बच्चों की संख्या
 2. बच्चों की कक्षा
 3. आपकी योजना की तैयारी
 4. बच्चों की प्रतिक्रियाएँ क्या रहीं?
 5. आपने बच्चों को कैसे प्रोत्साहित किया या बच्चों को अभिव्यक्ति के मौके कैसे उपलब्ध कराये।
 6. क्या बच्चों को मज़ा आया या उनकी कोई ऐसी प्रतिक्रिया जिसने आपको आश्चर्यचकित किया हो ?
- प्रारंभिक साक्षरता परियोजना (ई.एल.पी.), दिल्ली महानगर पालिका के सहयोग और सर रतन टाटा ट्रस्ट की वित्तीय सहायता से शुरू किया गया एक प्रयास है। परियोजना का कार्य दिल्ली महानगर पालिका के कुछ विद्यालयों में जुलाई 2006 को शुरू किया गया था।

उदाहरण : 2 मुझे क्या मालूम हुआ?

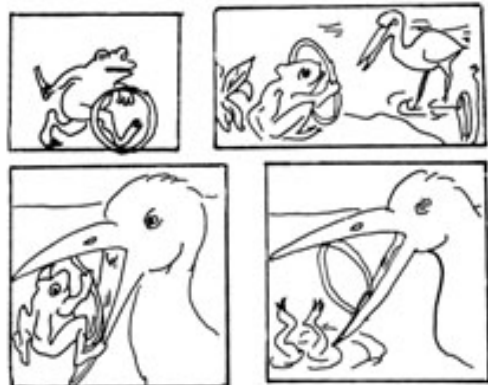
इधर एक शिक्षिका और उसकी पहली, दूसरी और तीसरी कक्षा के बच्चों के बीच हुई कुछ चित्रों पर बातचीत का कुछ अंश लिखा गया है—

मैंने बच्चों से कहा, “कक्षा पहली, दूसरी और तीसरी के तीन-तीन दोस्त मेरे पास आओ।”

फिर मैंने 9-9 बच्चों को आठ टोलियों में बिठाया और कहा, “कक्षा एक के बच्चे खुशी-खुशी किताब निकालें। सभी बच्चे इस किताब का मुख पृष्ठ देखें।”

मैंने अपनी किताब को दिखाते हुए कहा, “इस चित्र में कौन है?” (मैंने ऊँगली रखकर पूछा)

- “मेंढक है।”
- “मेंढक के दोनों हाथों में क्या है?”
- “एक हाथ में लकड़ी है।”
- “दूसरा हाथ खाली है।”
- “दूसरे हाथ में कुछ नहीं है।”
- “मेंढक क्या कर रहा है?”
- “चक्का चला रहा है।”



अब चित्र को देखो और बताओ कौन-कौन है?

- “मेंढक और बगुला है।”
- “दोनों क्या कर रहे हैं?”
- “बातें कर रहे हैं।”
- “बैठे हैं।”
- “मेंढक बगुले से क्या बोल रहा होगा?”
- “तुम्हारी टर्-टर् मुझे अच्छी लगती है।”
- “तुम मुझे अच्छे लगते हो?”
- “तुम क्या कर रहे हो?”
- “मैं तुमको खाऊँगा।”
- “मेंढक क्या बोला होगा?”
- “मुझे अभी मत खाओ।”
- “मैं चक्का चला रहा हूँ।”

अब चित्र को देखो, बगुले ने क्या किया?

- “मेंढक को पकड़ा।”
- “चक्के को पकड़ा।”
- “मेंढक ने क्या किया?”
- “मेंढक ने चक्का पकड़ाया।”
- “बगुले को चक्का पकड़ाया।”

अब इस चित्र को देखो और बताओ, मेंढक ने क्या किया?

- “वह नदी में कूदा।”
- “नदी में कूदकर जान बचाई।”
- “बगुले का मुँह क्यों खुला रहा?”
- “उसने चक्का पकड़ लिया है।”
- “इसके बाद क्या हुआ होगा?”
- “मेंढक भाग गया होगा।”
- “क्या बगुले का मुँह खुला ही रहा होगा?”

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

— “बगुले ने सिर को झटककर चक्का फँका होगा।”

— “चक्का निकाल दिया होगा।”

“अच्छा कहानी सुनोगे?” सारे बच्चों ने ज़ोर से कहा, “हाँ सुनेंगे।”

“ठीक है तो तुम चित्रों को देखना, मैं कहानी सुनाना शुरू करता हूँ— एक मेंढक उछलता—कूदता जा रहा था, जाते—जाते उसे एक चक्का दिखा। उसने चक्का उठाया और पास में पड़ी लकड़ी उठाई। अब एक हाथ में लकड़ी और दूसरे हाथ से चक्का चलाया। जब चक्का रुकने लगता, तो लकड़ी से धक्का लगाता जाता।

इस तरह चलते—चलते वह नदी के किनारे पहुँचा ही था कि एक बगुले ने उसे देखा और कहा— मैं तुम्हें खाऊँगा।

मेंढक बोला— अभी मैं चक्का चला रहा हूँ। थोड़ी देर बाद खा लेना।

बगुला बोला— नहीं, मैं तुम्हें अभी खाता हूँ। और उसने अपना मुँह खोला। किन्तु मेंढक ने झट से बगुले के मुँह में चक्का पकड़ाया और पानी में कूद गया।

अच्छा, अब आगे क्या हुआ होगा? तुम लोग बताओ।”

कुछ बच्चों ने कहा, “मेंढक भाग गया और कुछ ने कहा बगुले का मुँह खुला रह गया।”

“अच्छा तुम बताओ आगे क्या हुआ होगा?” मैंने फिर पूछा। इस बीच कक्षा में अजीब शोर मचा हुआ था।

मैंने दोनों हाथ ऊपर करके पंजों को गोल—गोल घुमाते हुए कहा, “मेरे जैसे करो।”

बच्चों ने मुझे देखा और मेरी तरह करने लगे। कुछ देर बाद हाथों को नीचे करके तीन तालियाँ बजाईं। सारे बच्चों ने भी ऐसा किया। यह अभिनय एक बार और दोहराया। पूरी कक्षा शांत हो गई।

मैंने अपना सवाल फिर दोहराया। मेंढक नदी में कूद गया और बगुले का मुँह खुला रह गया, उसके बाद क्या हुआ होगा? सब लोग बारी—बारी बताओ?

सभी बच्चों ने बारी—बारी बताया। दस बच्चों ने कहा— मेंढक कूदकर भाग गया और बगुले का मुँह खुला रह गया। आठ बच्चों ने कहा— मेंढक नदी में कूदा और बगुले ने गर्दन को झटका देकर चक्का फँका/ निकाला। बारह बच्चों ने कहा— बगुले ने सिर को झटका दिया तो चक्का गले में अटक गया/पहन लिया।

इन्हीं बच्चों से मैंने पूछा, “अच्छा, बगुले ने चक्का पहनने के बाद क्या किया होगा?” चार बच्चों ने कहा— बगुले ने पैर से चक्का निकाला होगा। आठ बच्चों ने कहा— चक्का पहने—पहने घूमता रहा होगा।

अब बताओ “मेंढक कहाँ रहता है?”

—“पानी में।”

—“ज़मीन पर।”

“बगुला कहाँ रहता है?”

—“पेड़ पर।”

—“ज़मीन पर।”

—“पानी पर।”

“मेंढक क्या-क्या खाता होगा?”

—“कीड़-मकौड़े, अनाज, मछली।”

—“कीड़-मकौड़े।”

—“अनाज।”

“मेंढक कैसी आवाज़ करता है?”

—“टर्.टर्.टर्।”

“मेंढक किन दिनों में अधिक दिखते हैं और टर्-टर् करते हैं?”

—“बरसात में।”

—“पानी गिरता है जब।”

“मेंढक कितना बड़ा होता होगा?”

—(हाथों को दिखाकर) “इतना बड़ा होता है।” कुछ ने बताया।

“तुमने बगुला कहाँ देखा था?”

—“पेड़ पर।”

—“नदी पर।”

“बगुला किस रंग का होता है?”

—“सफ़ेद होता है।”

“मेंढक के कितने पैर होते हैं?”

—“चार पैर होते हैं।”

“मेंढक की कितनी आँखें होती हैं?”

—“दो आँखें होती हैं।”

“अच्छा, अब सभी लोग मैदान में चलो और लाइन से खड़े हो जाओ।”

सभी बच्चे मैदान पर पहुँचकर लाइन से खड़े हो गए। मैंने कुछ बच्चों को व्यवस्थित किया और कहा, “मेंढक कैसे चलता है?”

सभी बच्चों ने उछलते-कूदते, छल्लाँ मारते हुए चलकर दिखाया।

“अच्छा, अब यह बताओ बगुला कैसे उड़ता है?”

सभी बच्चे बगुले के उड़ने का अभिनय करने लगे।

इसके बाद मैंने कहा, “अब सभी कमरे में चलो और अपनी जगह पर बैठो।”

सभी बच्चों के व्यवस्थित बैठने के बाद बच्चों ने कहा, “यहाँ फर्श पर शब्दचित्र-कार्डों में से मेंढक और बगुले का शब्दचित्र-कार्ड चुनो।”

सभी क्रम से शब्दचित्र-कार्ड चुनने आए। कुछ बच्चों को मेंढक और बगुले के चित्रवाला कार्ड नहीं मिला। वे कहने लगे, “सर, इसमें मेंढक और बगुले का कार्ड नहीं है।” तब मैंने श्यामपट्ट पर मेंढक और बगुले का चित्र बना दिया। बच्चों ने पूछा कि इस कार्ड का क्या करें?

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

“मेंढक और बगुले का चित्र बनाओ, कार्ड पर लिखे उनके नाम लिखो और मुझे दिखाओ। सुनी हुई कहानी का चित्र भी बनाकर दिखाओ।” मैंने कहा इसके बाद सभी बच्चे चित्र बनाने और शब्द लिखने में जुट गए। कुछ देर बाद बच्चों ने चित्र दिखाए।

– लक्ष्मी नारायण चौधरी (संदर्भ से संकलित)

कुछ प्रश्न :

- शिक्षक ने कहानी के चार चित्रों के आधार पर बच्चों के साथ क्या-क्या गतिविधियाँ कीं? क्रम से लिखिए।
 - आपको क्या लगता है, शिक्षक ने बच्चों के साथ पहले चित्रों पर बातचीत क्यों की, सीधे ही कहानी क्यों नहीं सुना दी?
 - शिक्षक ने बच्चों को कहानी सुनाने के बाद यह क्यों पूछा— ‘अब आगे क्या हुआ होगा?’
 - शिक्षक ने कहानी पर बच्चों के साथ किस-किस तरह की बातचीत की?
 - छोटे बच्चों को कहानी सुनाना महत्वपूर्ण है? क्यों या क्यों नहीं?
 - बच्चों को चित्र बनाने का मौका देने से पढ़ने-पढ़ाने की प्रक्रिया में क्या लाभ होते हैं?
 - “मेंढक बगुले से क्या बोल रहा होगा?”
 - “तुम्हारी टर्-टर् मुझे अच्छी लगती है।”
 - “तुम मुझे अच्छे लगते हो।”
 - “तुम क्या कर रहे हो?”
 - “मैं तुमको खाऊँगा।”
- ये सब एक ही चित्र पर अलग-अलग बच्चों के जवाब हैं।
- (i) एक ही चित्र पर ये अलग-अलग जवाब क्यों आए हैं?
 - (ii) इनमें से क्या हम किसी एक को सही मान सकते हैं? क्यों या क्यों नहीं?
- आपको क्या लगता है, शिक्षक ने लिखने का काम बच्चों के साथ कहानी पर बातचीत करने के बाद क्यों किया?
 - आपको क्या लगता है, क्या ऐसे बच्चे जो अक्षर नहीं पहचानते होंगे, शब्द चित्र- कार्ड से ‘मेंढक’ और बगुले का नाम उतारकर लिख पाए होंगे? क्यों या क्यों नहीं?



इकाई-2

भाषा व विचार – व्यक्तिगत विकास में भाषा की भूमिका

अध्याय : 5. भाषा व विचार

अध्याय : 6. भाषा और विचार का संबंध

अध्याय : 7. भाषा व्यक्ति के लिए क्यों आवश्यक है?

अध्याय : 8. भाषा का सीखने-सिखाने से संबंध

अध्याय – 5

भाषा व विचार

परिचय :

‘भाषा का विचारों के बनने से संबंध’ यह एक जीवन्त विमर्श का मुद्दा है। इस संदर्भ में कोई स्पष्ट सर्वमान्य नज़रिया उपलब्ध नहीं है ऐसे बहुत से तर्क हैं जो बताते हैं कि भाषा का होना; विचारों के बनने में और उनको व्यवस्थित करने में मदद करता है लेकिन इसके विपक्ष में भी बहुत से तर्क हैं जिनके अनुसार किसी चीज़ को जानने की योग्यता तथा विचारों के निर्माण की प्रक्रिया भाषिक योग्यता से बिल्कुल अलग है।

इस इकाई में हमारा प्रयास इन प्रश्नों के उत्तर ढूँढना अथवा इनका समाधान करना नहीं है वरन् प्रयास होगा। कि हम अवधारणाओं के विकसित होने, तर्कपूर्ण दलीलों को बनाने तथा भाषाई क्षमता के आपसी संबंध को देखें व समझें।

उद्देश्य :

- यह समझ पाएँगे कि भाषा क्या है?
- यह समझ पाना कि मनुष्य में विचार, तर्क व उससे आगे जाने की क्षमता होती है।
- अवधारणा कैसे बनती है? की समझ।
- शब्द, अवधारणा व उनके जाल को समझ पाना।

मनुष्य क्यों अलग है?

मनुष्यों की प्रमुख क्षमताओं में से एक क्षमता है उन चीज़ों के बारे में दृष्टि बना पाना, अवधारणा बना पाना और बात कर पाना जिनका अस्तित्व आज है और ऐसी चीज़ों के बारे में भी यह सब कर पाना जो बहुत पहले कभी थी। हमारी क्षमता इससे कहीं आगे भी जाती है, हम न सिर्फ़ जो पहले कभी था उसके बारे में बात कर सकते हैं, वरन् उसके बारे में भी बात कर सकते हैं, जो कभी था ही नहीं। मनुष्य विचारों के सहारे उड़ सकता है, बहुत लम्बी छलॉग लगा सकता है और उन विचारों तक पहुँच सकता है जो पहले नहीं थे। विचारों को पक्का करने के लिए कल्पना को भाषा के सूत्र में गूँथ सकता है। भाषा पहले या विचार इतना महत्वपूर्ण प्रश्न नहीं है, जितना कि यह तथ्य कि इस तरह की कल्पनाओं को पिरोकर आगे बढ़ने का काम भाषा के बिना नहीं हो सकता।

मनुष्यों के पास कल्पना करने की अनूठी क्षमता है। कल्पना कर पाने की क्षमता नए विचारों के बनने और धीरे-धीरे उनके ठोस रूप लेने को प्रभावित करती है।

इसके कुछ सरल उदाहरण इस तरह हो सकते हैं। जैसे पक्षी को उड़ते देख कभी किसी मनुष्य ने सोचा कि क्या हम भी उड़ सकते हैं? और फिर इसमें नए विचार जुड़ते गए कि उड़ने के लिए किन-किन चीज़ों की ज़रूरत होगी? यदि हम उड़ना चाहें तो क्या करें? और भी कई नए विचार और अन्ततः हम हवाई जहाज़ जैसी चीज़ बना पाएँ। यह विचारों का सिलसिला अभी भी रुका नहीं है, अब भी यह विचार जारी है कि किस तरह हवाई जहाज़ की गति को और बढ़ाया जाय। उसको और बड़ा किया जाय ताकि उसमें एक ही बार में ज़्यादा से ज़्यादा लोग यात्रा कर सकें। यह कल्पना कि मनुष्य भी उड़ सकता है तथा इसका ठोस

रूप हवाई जहाज़ तक जाने में न केवल एक व्यक्ति बल्कि अनेक व्यक्तियों व उनकी पुरानी समझ को उपयोग कर पाना है इसी तरह यह विचार कि कुछ चीज़ें पानी पर तैर सकती हैं, यह सवाल कि ये पानी पर क्यों तैर पाती हैं, इनके क्या विशेष गुण हैं और फिर इन विचारों का मूर्त रूप; जहाज़ का बनना इत्यादि। ये कुछ ऐसे विचार हैं जिनसे तकनीकी विकास संभव हुआ है।

कुछ प्रश्न :

- भाषा के बिना कल्पना संभव नहीं। इस कथन की विवेचना करें। अपने मत को उदाहरण से समझाएँ।

विचार, तर्क व उससे आगे

यह बात कि इस तरह के विचार केवल मनुष्य ही बना सकते हैं, हमें यह सोचने व मानने को मजबूर करता है कि मनुष्यों में कुछ अनूठी क्षमता होती है। हम किसी वस्तु पर कोई बल लगा रहे हैं तो उसकी चाल की गणना कर सकते हैं। किसी उपग्रह के चन्द्रमा व सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने में क्या संबंध है इत्यादि के बारे में बात कर सकते हैं। हम मान्यताओं का एक ऐसा ढाँचा बना सकते हैं जिसमें अंतःविरोध नहीं दिखे और फिर इस ढाँचे के अन्दर रहते हुए हम तार्किक विश्लेषण की सहायता से कई ऐसे निष्कर्षों तक पहुँच सकते हैं जो इस ढाँचे में फिट बैठेंगे। हम एक-दूसरे से असहमत हो सकते हैं और दूसरे के समक्ष अपनी असहमति प्रकट ही नहीं कर सकते बल्कि इस असहमति का कारण भी बता सकते हैं।

संक्षेप में, इन उदाहरणों से यह भी पता चलता है कि मनुष्य के पास विचारों को व्यवस्थित करने की, तर्क के लिए रूपरेखा बनाने की और विश्लेषण करने की योग्यता भी होती है। एक कथन का दूसरे कथन से क्या जुड़ाव है और इन दोनों के जुड़ाव के पीछे तर्क क्या है? यह समझने की भी क्षमता होती है।

यह भी स्पष्ट है कि तर्कों का यह सिलसिला चाहे विज्ञान में हो, चाहे भूगोल, इतिहास, गणित, दर्शन या किसी और विषय में, इसकी सामग्री व विषयवस्तु को भाषा के माध्यम से ही प्रस्तुत किया जा सकता है।

इन विषयों के कुछ पहलू भाषा के दायरे से अलग भी हो सकते हैं, इस मसले पर काफी विवाद है। जैसे किसी पहलू के बारे में सोच पाना, उसके बारे में एक रोती छवि देख पाना जिसे बाद में भाषा में व्यक्त किया जाए को भी मानव की क्षमता माना गया है लेकिन इन सबको दूसरों के साथ बाँटने तथा काम करने के लिए भी हमें भाषा की आवश्यकता होगी।

वास्तविकता को समझने की हमारी क्षमता, किस हद तक हमारी भाषाई क्षमता के द्वारा निर्धारित होती है? यह कहना कठिन है।

यद्यपि अन्तिम निष्कर्ष के तौर पर यह नहीं कहा जा सकता कि एस्किमो लोगों के पास बर्फ के लिए ज़्यादा शब्दों का होना उनको बर्फ के विभिन्न रूपों में अन्तर कर पाने की अधिक योग्यता देता है, पर यह स्पष्ट है कि विभिन्न तरह के बर्फ के बारे में हमारी सोच दूसरों के साथ बाँटने के लिए हमें उन विशिष्ट शब्दों की आवश्यकता होती है जो कि उसको अच्छी तरह विवरण दे सके।

अवधारणाएँ कैसे बनती हैं?

यह समझने में स्केम्प का यह उदाहरण मददगार हो सकता है कि किसी अवधारणा को अर्जित करने अथवा उसके विकास की शुरुआत एक ठोस/मूर्त वस्तु की संकल्पना के साथ होती है। इसके बाद यह

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

अवधारणा या तो बहुत ही संकीर्ण और सीमित रह सकती है, सिर्फ उन्हीं वस्तुओं तक जो कि उस वस्तु के जैसे दिखते हैं या फिर बहुत ज़्यादा व्यापक हो सकती है और तब वे वस्तुएँ भी उस वर्ग में आ सकती है जो कि उस वर्ग की नहीं हैं। यदि कुर्सी का उदाहरण लें तो आप एक विशेष प्रकार की कुर्सी को ही कुर्सी मान सकते हैं। या फिर आप इसको बहुत ज़्यादा फैला सकते हैं और हर किसी चीज़ जैसे स्टूल अथवा टेबल को इस अवधारणा में शामिल कर सकते हैं।

शब्द, अवधारणा व उनका जाल

शब्द का बार-बार विशिष्ट संदर्भों में प्रयोग व इसके उपयोग का विश्लेषण धीरे-धीरे हमें उस अवधारणा को समझने व दूसरी अवधारणाओं को अलग करने में मदद करता है। हम धीरे-धीरे बहुत से उदाहरणों में उन चीज़ों के बारे में बात कर पाने की योग्यता प्राप्त कर लेते हैं जो कि सामने नहीं है। और यह भी इस तरह से चीज़ों के बारे में बात करना जिसमें सिर्फ एक पहलू पर ही ध्यान देना हो।

हम किसी वस्तु को देखते हैं और उसे गोल कहते हैं, फिर हम किसी दूसरी वस्तु को देखते हैं जो कि पहलेवाली वस्तु से फरक है लेकिन उसे भी हम गोल कहते हैं। यहाँ हम एक ऐसी स्थिति बना रहे हैं जिससे उस वस्तु के ज़रिये हम गोल की अमूर्त संकल्पना बना पाते हैं। जो कि वस्तु से इतर है और यह बात कुर्सी के संदर्भों में भी एक हद तक सही है।

हम अपने बारे में ठीक वैसे ही बात कर सकते हैं जैसे कि कोई और व्यक्ति। हम हमेशा सचेत रूप में खुद को एक अलग अस्तित्व के रूप में देख पाने की योग्यता भी रखते हैं और यह योग्यता हमारे द्वारा उपयोग की गई भाषा में झलकती है। जबकि अन्तिम निष्कर्ष के रूप में यह नहीं कहा जा सकता कि इनमें से कुछ योग्यताएँ जानवरों में नहीं हैं। यह स्पष्ट है कि जिस तरह से मानव एक संवाद में सम्मिलित होने की योग्यता रखते हैं तथा जिस तरह से वे दर्शन व अध्यात्म के विषय/क्षेत्र बना सकते हैं उनके पास अध्यात्म के उन सभी नियमों को तोड़ने की स्वतंत्रता भी होती है जो कि स्वयं उन्होंने बनाये हैं।

यह भी बहस होती है कि हमारे प्रमुख विचार और धारणाएँ/मत हमारी मातृभाषा से जुड़े होते हैं। बहुत से उदाहरणों में यह स्पष्ट झलकता है कि (प्रवाह) जल्दी-जल्दी बोलते वक़्त हम अपनी मातृभाषा का ही प्रयोग करते हैं। और इसी वजह से फिर से यह बात ज़ेहन में आती है कि भाषा हमारी पहचान का हिस्सा है और भाषा से ही हमारी रचना हुई है।

कुछ प्रश्न :

- गोल की तरह की कोई और धारणा लेकर समझाएँ कि कैसे उसमें थोड़ी-थोड़ी विविधता संभव है व कैसे वस्तु से अलग है।

भाषा और विचार का संबंध

भाषा, विचार और वास्तविकता के बीच के रिश्ते को भाषाविद्, मनोवैज्ञानिक और मानव-वैज्ञानिक (anthropologists) सदियों से समझने की कोशिश कर रहे हैं। दार्शनिक प्लेटो अपने 'रूप के सिद्धांत' (theory of forms) में यह वर्णित करते हैं कि भाषा और विचार एक अमूर्त अवधारणा जिसे 'रूप या आकार' कहते हैं, की एक शाखा के रूप में अपना अर्थ रखते हैं लेकिन पश्चिमी सोच के साथ अन्ततः प्लेटो भाषा को वास्तविकता पर आधारित मानते हैं।

इसी तर्ज पर दार्शनिक जॉन लॉक ने भाषा और विचारों के संबंध को इस प्रकार प्रस्तुत किया : “आस-पास की वस्तुओं से हमारी इंद्रियों को जिस प्रकार की अनुभूति मिलती है, उन्हें वे दिमाग तक पहुँचाती है और इसी तरह गर्म, ठंडा, पीला, मुलायम आदि की धारणा हमारे दिमाग में बनती है” हम कैसे सोचते हैं और वास्तविकता को कैसे समझते हैं और फिर वह किस तरह हमारी भाषा में झलकता है इस बारे में लॉक का यह कथन बहुत से दार्शनिकों और मनोवैज्ञानिकों की सोच का प्रतिनिधित्व करता है।

लेकिन दार्शनिकों की इस आम सोच के विपरीत जर्मन विद्वान् विलियम वॉन हमबोल्ट ने 18वीं शताब्दी में अपने वेलतानश्वॉंग (‘दुनिया को देखने का नज़रिया’) नामक प्राक्कल्पना के तहत कहा कि भाषा और विचार को अलग नहीं किया जा सकता और भाषा पूरी तरह विचारों को निर्धारित करती है। हमबोल्ट ने इस बात पर जोर दिया कि भाषाओं में अर्थ-संबंधित गहरे अंतर होते हैं जिनके कारण भिन्न संज्ञानात्मक नज़रिये बनते हैं। इस विचार को ‘सांस्कृतिक सापेक्षता’ (cultural relativity) के नाम से जाना जाता है।

1930 के दशक में ‘भाषिक सापेक्षता’ के इसी दृष्टिकोण पर आधारित सपीर-वोर्फ प्राक्कल्पना ने काफ़ी ध्यान आकर्षित किया। यह सपीर के मूल अमरीकी भाषाओं के अध्ययन पर आधारित थी। इस अध्ययन का निम्न अंश खासतौर पर आलोचना, विवेचन और भविष्य में कई अध्ययनों का आधार बना :

“इंसान न तो केवल वस्तुपरक (objective) दुनिया में रहते हैं और न ही केवल सामाजिक प्रक्रियाओं की दुनिया में। बल्कि वे काफ़ी हद तक उस भाषा पर आश्रित हैं जो उनके समाज में उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम बन चुकी है। तथ्य यह है कि ‘वास्तविक दुनिया’ अनजाने में ही बहुत हद तक समुदाय के भाषाई स्वभाव पर बनी होती है। कोई भी दो भाषाएँ कभी इतनी समान नहीं होतीं कि सामाजिक वास्तविकता (social reality) को बिल्कुल समान रूप में व्यक्त कर सकें। जिस संसार में विभिन्न समुदाय/समाज रहते हैं वे संसार ही एक-दूसरे से बहुत भिन्न हैं न कि सिर्फ एक संसार को दिए गए अलग-अलग नाम हैं।”

सपीर और उनके शिष्य वोर्फ के इसी प्रकार के कथनों के कारण बहुत से विद्वान् और अन्य लोग इस प्राक्कल्पना को या तो सही या ग़लत सिद्ध करने में जुट गए। आज अधिकतर शोधकर्ता ‘सपीर-वोर्फ’ प्राक्कल्पना अर्थात् ‘भाषिक सापेक्षता’ के संबंध में इन तीनों में से किसी एक के पक्ष में तर्क देते हैं :

- (i) भाषा का विचारों पर बहुत गहरा प्रभाव है। (सबल व्याख्या)
- (ii) भाषा विचारों को प्रभावित नहीं करती।
- (iii) भाषा कुछ हद तक विचारों को प्रभावित करती है। (कमज़ोर व्याख्या)

कुछ प्रश्न :

- हमबोल्ट कहते हैं कि “भाषाओं में अर्थ संबंधित गहरे अन्तर होते हैं” क्या आप इस बात से सहमत हैं? इसे जाँचने के लिए अपने आस-पास बोली जाने वाली 2-3 भाषाओं में एक ही वस्तु के लिए प्रयोग होने वाले अलग-अलग शब्दों की सूची बनाइए एवं विश्लेषण कीजिए।

I भाषा विचारों पर गहरा प्रभाव डालती है

सपीर-वोर्फ प्राक्कल्पना के पक्ष में वोर्फ ने होपी आदिवासियों का उदाहरण दिया। उनके अनुसार होपी भाषा में अंग्रेजी के समकक्ष ‘समय’ की अवधारणा के लिए कोई शब्द या अन्य व्याकरणिक इकाई नहीं

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

है यानी वास्तविकता को देखने का होपी नज़रिया भाषा—विशिष्ट है और उसकी सटीक अभिव्यक्ति के लिए वह भाषा जानना ज़रूरी है।

वोर्फ के इस उदाहरण की इसलिए आलोचना की गई क्योंकि वह संज्ञानात्मक अंतर को अलग से दर्शाने के बजाय भाषिक अंतर के ही आधार पर उसके बारे में निष्कर्ष निकाल रहे हैं। यानी भाषिक भिन्नता के बारे में दोहराना ही संज्ञानात्मक भिन्नता का सबूत बना दिया गया।

सपीर वोर्फ प्राक्कल्पना के पक्ष में अक्सर दिया जानेवाला तर्क है रंगों के बोध का। प्राक्कल्पना के अनुसार अगर विभिन्न भाषाओं में रंगों का वर्गीकरण भिन्न—भिन्न प्रकार से किया जाता है तो उन समुदायों की रंगों की अनुभूति भी अलग—अलग होगी।

1970 में किए गए एक शोध में पापुआ न्यू गिनी के बोरिन्मो आदिवासियों को 160 अलग—अलग रंग वर्गीकृत करने के लिए दिए गए। बोरिन्मो वर्गीकरण के लिए कम ही श्रेणियाँ बना पाए और वे अंग्रेज़ी के नीले और हरे रंगों में भेद भी नहीं कर पाए। बल्कि उन्होंने ऐसे दो रंगों (जो बोरिन्मो में नॉल और वोर के नाम से जाने जाते हैं) को अलग श्रेणी में डाला जो अंग्रेज़ी में एक ही रंग 'पीले' के तहत आएँगे। बोरिन्मो रंगों का नीले/हरे के बजाय नॉल/वोर ('पीले' के भिन्न प्रकार) के आधार पर ज़्यादा अच्छी तरह मिलान कर लेते हैं जबकि इसके विपरीत अंग्रेज़ी भाषी 'पीले' के अलग—अलग प्रकारों के बजाय नीले/हरे के आधार पर ज़्यादा अच्छा मिलान कर लेते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार भाषा में रंगों की अलग—अलग श्रेणियों के लिए नाम होने या न होने से उस भाषा के भाषियों की उन रंगों की समझ/बोध पर प्रभाव पड़ता है यह निष्कर्ष सपीर—वोर्फ प्राक्कल्पना के पक्ष में जाता है।

II भाषा का विचारों पर प्रभाव नहीं पड़ता

शोधकर्ता सपीर—वोर्फ प्राक्कल्पना के विरोध में तीन मुख्य बिन्दुओं का प्रयोग करते हैं : (i) अनुवादिकता, (ii) भाषिक और अभाषिक घटनाओं/संदर्भों में अंतर और (iii) सार्वभौमिक सिद्धांत। अनुवादिकता के संदर्भ में कई विद्वानों का कहना है कि चाहे भाषाएँ बारीकियों को अभिव्यक्त करने में एक दूसरे से कितनी भी भिन्न हों मगर फिर भी इन बारीकियों को एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवादित करना संभव है।

ऐरिक लैनबर्ग का सपीर—वोर्फ प्राक्कल्पना के विपक्ष में तर्क है कि "भाषिक और अभाषिक संदर्भों/घटनाओं में सहसंबंध बनाने से पहले उनका अलग से अवलोकन और विवरण होना ज़रूरी है"। लेनेबर्ग के अनुसार यदि भाषिक और अभाषिक संदर्भों में कोई अंतर ही न किया जाए तो भाषा की विचारों को प्रभावित करने की बात निराधार है और इसके पक्ष में दिया गया सबूत पूरी तरह भाषिक भिन्नताओं पर ही आधारित है।

तीसरा मुद्दा है सार्वभौमिकता की अवधारणा का जिसके संदर्भ में पोर्ट रोयाल का यह कथन है— "व्याकरण में कुछ ऐसी बातें देखने को मिलती हैं जो हर भाषा में पाई जाती हैं। इसे हम सामान्य व्याकरण कहते हैं। यानी व्याकरण, जिसका मकसद विचारों को 'अभिव्यक्त करना होता है, दो तरह के नियमों पर चलती है। इनमें से एक प्रकार उनका है जो अपरिवर्तनीय सच (विवादरहित सच) है और जिनका सार्वभौमिक रूप से पालन होता है जैसे ये सीधे विचारों के प्रारूप पर ही लागू होते हैं, विचारों के ही विश्लेषण से निकलते हैं और उन्हीं का निष्कर्ष होते हैं। आमतौर पर सार्वभौमिकता का सिद्धांत, जो कि आमतौर पर चौम्स्की से जोड़ा जाता है एक ऐसी गहरी संरचना की बात करता है जो सभी भाषाओं में एक सी होती है। यदि इसे भाषिक सापेक्षता के संदर्भ में देखें तो इसके मुताबिक सभी भाषिक—सांस्कृतिक समुदायों को एक सी वास्तविकता दिखेगी। ये निष्कर्ष वोर्फ के भाषा—आधारित सामुदायिक भिन्नताओं के बिल्कुल विपरीत है।

III भाषा कुछ हद तक विचारों को प्रभावित करती है

भाषा और विचारों के संबंध में शोध करना मुश्किल नहीं है, मुश्किल है ऐसे अलग-अलग भाषिक, अभाषिक सन्दर्भों का समुच्चय बनाना जो इस प्राक्कल्पना की सही जाँच कर सके।

भाषिक और अभाषिक सन्दर्भ

अधिकतर शोधकर्ता अब तक यह मानने को तैयार नहीं हैं कि भाषा विचारों को तय करती है लेकिन होपी आदिवासियों और अन्य उदाहरणों के आधार पर वे भाषा का कुछ हद तक विचारों पर प्रभाव जरूर मानते हैं। भाषिक सापेक्षता तय करने में सवाल यह नहीं है कि भाषा विचारों को प्रभावित करती है या नहीं, बल्कि यह कि कितना प्रभावित करती है।

भाषिक सापेक्षता की कमजोर व्याख्या के पक्ष में कई उदाहरण दिए जाते हैं। उदाहरण 1. (अंग्रेजी व नावाहो भाषा) उनमें से एक लिंडा रॉजर्स के द्वारा किए प्रयोग का है। रॉजर्स ने अंग्रेजी और नावाहो जाननेवाले द्विभाषी बच्चों को एक कहानी सुनाई और साथ-साथ उनकी मस्तिष्क तरंगों को रिकॉर्ड किया। उन्होंने पहले अंग्रेजी में कहानी सुनाई और देखा कि बच्चों के मस्तिष्क का बायाँ हिस्सा अधिक सक्रिय था। फिर उन्होंने नावाहो में कहानी सुनाई तो मस्तिष्क के दाएँ गोलार्ध में प्रतिक्रिया पाई। इससे रॉजर्स ने निष्कर्ष निकाला कि अंग्रेजी जो कि एक संज्ञा-केंद्रित भाषा है, बाएँ गोलार्ध द्वारा विश्लेषित होती है जबकि नावाहो जो कि एक क्रिया-केंद्रित भाषा है, दाएँ गोलार्ध में विश्लेषित होती है। रॉजर्स के अनुसार इससे साबित होता है कि श्रोताओं और विषयवस्तु के एक-सा होते हुए भी अलग-अलग भाषाओं के विश्लेषण में अंतर था।

उदाहरण 2. (अंग्रेजी व जापानी)

एक और उदाहरण है एग्नेस नियेकावा हॉवर्ड द्वारा 1988 में जापानी और अंग्रेजी कर्मवाच्य (passive) संरचनाओं पर किए गए शोध का। शोध के मुताबिक जापानी भाषा में दो तरह के कर्मवाच्य वाक्य होते हैं। यदि एक को दूसरे के साथ मिलाया जाए तो अर्थ इस प्रकार बदल जाता कि ऐसा प्रतीत होता है कि वाक्य के कर्ता से वह करवाया गया जो क्रिया में झलकता है। जापानी से अंग्रेजी में अनूदित कहानियों में यह संरचना नहीं देखी गई जबकि अंग्रेजी से जापानी में अनुवाद करते समय जापानी अनुवादकों ने इस संरचना का प्रयोग किया।

इसी प्रकार जब अंतर्वैयक्तिक संघर्ष से जूझते कार्टून दिखाए गए तो अंग्रेजी भाषियों से अधिक जापानियों ने नकारात्मक परिणामों की ज़िम्मेदारी दूसरों के सिर मढ़ी। शोध का मकसद यह दर्शाना था कि बेशक जापानी भाषी इन बातों से अनभिज्ञ हों लेकिन यह भाषिक संरचना उनके सामान्य बोध और सांस्कृतिक नजरिये को प्रभावित करती है।

उदाहरण 3. (हिन्दी व अंग्रेजी)

भाषा के विचारों को प्रभावित करने के पक्ष में एक और तर्क है किसी शब्द, वाक्यांश या विचार को एक भाषा से दूसरी में संबद्ध करने का। कोई भी द्विभाषी यह बता सकता है कि कुछ विचार एक भाषा में दूसरी से अधिक आसानी से अभिव्यक्त हो सकते हैं। वही विचार जिसे एक भाषा एक ही शब्द में समेट दे उसे दूसरी भाषा में समझाने में एक गद्यांश तक लग सकता है जैसे कि अंग्रेजी में जिसे हम "circularity of arguments" कहते हैं, उसके लिए हिन्दी में हमारे पास कोई शब्द/वाक्यांश नहीं है तो पूरा विवरण देना ही पड़ेगा।

अलास्का की एक देनाइना ऐथाकस्कन नामक एस्किमो जनजाति की भाषा में झरनों और पगडंडियों के लिए एक पूरा शब्द संग्रह है, एक धीमे या तेज़ प्रवाहवाली जगह, पिघलती/गलती हुई बर्फ से ढँका हुआ

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

स्थान, ऐसी पगडंडी जिसकी बर्फ अपनी राह से हट गई हो, लकड़ियाँ लाने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली पगडंडी। इन सबके लिए इस भाषा में एक-एक शब्द मौजूद हैं।

यानी एक भाषा में किसी दूसरी भाषा के शब्द या वाक्यांश को आबद्ध करने की क्षमता, जिसे अंग्रेजी में *codability* कहते हैं। यह खुद एक उदाहरण है, सोचिए यह कुछ हद तक भाषा का विचारों पर प्रभाव जरूर दर्शाती है लेकिन इससे एक भाषा-भाषियों का दूसरी भाषा-भाषियों को वे अवधारणाएँ या श्रेणियाँ बनाने का बोध बाधित नहीं हो जाता।

सपीर-वोर्फ की प्राक्कल्पना को सही या ग़लत साबित करने के लिए अध्ययन की परिपूर्ण स्थिति तो नहीं हो सकती। शोधकर्ताओं के पास कुछ विशिष्ट संदर्भों में छोटे-मोटे उदाहरण ही जाँचने के लिए रह जाते हैं जिनमें भाषा की विचारों को प्रभावित करने की संभावना हो और ऐसे शोधों के आधार पर अधिकतर शोधकर्ता इस प्राक्कल्पना के एक कमज़ोर प्रारूप को मानते हैं।

IV. निष्कर्ष

“भाषा और समाज एक दूसरे में इस तरह गुँथे हुए हैं कि एक को दूसरे के बिना समझ पाना असंभव है। ऐसा कोई मानव समाज नहीं है जो भाषा पर निर्भर न करता हो, उससे प्रभावित न होता हो और खुद उसे प्रभावित न करता हो।” (यह कथन भाषा, समाज और वास्तविकता के बीच के संबंध को सबसे अच्छी तरह व्यक्त करता है) सपीर-वोर्फ प्राक्कल्पना ने लोगों की भाषा के बारे में सोचने के नज़रिये को बदल दिया है जहाँ कुछ लोग सपीर-वोर्फ के मत से सहमत हैं वहीं दूसरे लोग इसके विरोध में तर्क देते हैं। लेकिन अब हर शोध प्रमाणित करते हैं कि भाषा का विचारों और वास्तविकता को देखने के नज़रिये पर प्रभाव तो पड़ता है, मगर वह वास्तविकता को नियंत्रित नहीं करती।

कुछ प्रश्न :

- मान लीजिए की आप सपीर-वोर्फ प्राक्कल्पना की सबल व्याख्या के पक्षधर हैं और मानते हैं कि भाषा का विचारों पर गहरा प्रभाव पड़ता है तो आप अपने पक्ष में क्या-क्या तर्क देंगे?



अध्याय – 6

भाषा और विचार का संबंध

परिचय :

लोग यह सवाल कई सौ वर्षों से पूछते आ रहे हैं। भाषाविदों ने इस पर विशेष ध्यान 1940 के बाद देना शुरू किया जब एक भाषाविद बेंजामिन ली वोर्फ ने पूर्वोत्तर अरीजोना में रहनेवाले 'होपी' समुदाय, जो कि ठेठ अमेरिकन भाषा बोलता है, का अध्ययन किया। अपने इस अध्ययन के आधार पर वोर्फ ने दावा किया कि होपी लोग और अंग्रेजी बोलने वाले लोग दुनिया को अलग-अलग तरीकों से देखते, समझते हैं क्योंकि उनकी भाषाएँ अलग-अलग हैं।

इससे हमें क्या बात समझ में आती है? इसका जवाब थोड़ा उलझा हुआ है। यह वैसा ही सवाल है कि अंडा पहले आया या मुर्गी? क्या आप उन चीजों के बारे में नहीं सोच सकते हैं जिनके लिए आपके पास शब्द नहीं हैं? या आपके पास उनके लिए शब्द नहीं हैं क्योंकि आप उनके बारे में सोचते नहीं हैं? इस समस्या का एक हिस्सा यह भी है कि इसमें भाषा और विचारों के अलावा कुछ और भी शामिल हैं और वह है संस्कृति। आपकी संस्कृति, परम्परा, जीवनशैली, आदतें और अन्य चीजें जो आप उन लोगों से प्राप्त करते हैं जिनके साथ आप रहते हैं। ये सभी चीजें आपके सोचने के तरीके को, बात करने के तरीके को प्रभावित करती हैं।

एक भाषा है – गुगु यिमिथिर (Guugu Yimithirr)। इसमें बाएँ (left), दाएँ (right), पीछे (back), आगे (front) जैसे शब्द नहीं हैं। इसलिए इस भाषा को बोलनेवाले हमेशा ही स्थान को बताने के लिए उत्तर, दक्षिण, पूर्व व पश्चिम का इस्तेमाल करते हैं। उदाहरण के लिए एक मकान का दरवाजा पूर्व की ओर है और वहाँ एक लड़का खड़ा है तो वे कभी नहीं कहेंगे कि एक लड़का मकान के आगे या सामने खड़ा है बल्कि वे कहेंगे कि वह मकान के पूर्व में खड़ा है इसलिए निःसन्देह वे सोचते होंगे कि लड़का मकान के पूर्व में खड़ा है जबकि हिन्दी भाषी सोचेगा कि वह मकान के आगे या सामने खड़ा है।

उद्देश्य :

- भाषा सोच को प्रभावित करती है कि समझ बना पाना।
- भाषा में एक से अधिक को कैसे दिखाया जाए कि समझ विकसित करना।
- इस बात की समझ बनाना कि क्या हम जो सोचते हैं? वह भाषा में ही सोचते हैं।
- इस बात की समझ कि क्या शब्द हमारे सोच को सीमित करते हैं?
- यह समझ बनाना कि एस्किमो के बर्फ के विभिन्न शब्दों का मायने क्या है?

क्या भाषा सोच को प्रभावित करती है

क्या हमारी भाषा हमारे सोचने के तरीके को प्रभावित करती है? या सांस्कृतिक आदतें/परम्पराएँ हमारी सोच और भाषा दोनों को प्रभावित करती हैं? सबसे अधिक संभावना यह है कि संस्कृति, सोच, आदतें, भाषा सभी साथ-साथ विकसित होती हैं।

लेकिन समस्या केवल शब्दों तक ही सीमित नहीं है अंग्रेजी में किसी वाक्य में क्रिया का रूप यह बताता है कि यह वाक्य भूतकाल की बात कर रहा है या वर्तमान काल की। (जैसे Mary walks मेरी चलती हैं, Mary walked मेरी चली थी) लेकिन 'होपी' में इसकी ज़रूरत नहीं है होपी भाषा के वाक्य में क्रिया का रूप बताता है कि वक्ता को यह जानकारी कैसे प्राप्त हुई। अतः होपी भाषा में स्वयं सृजित ज्ञान या जानकारी (जैसे मैं

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

भूखा हूँ) के वाक्य में और सामान्यतः सभी को ज्ञात जानकारी (जैसे आकाश नीला है) वाले वाक्य में क्रिया का रूप भिन्न-भिन्न होगा। वैसे अंग्रेजी भाषी यह अतिरिक्त जानकारी जोड़ सकता है कि "मैंने सुना है मेरी पास हो गई" जिसमें पता चलता है कि यह जानकारी कैसे प्राप्त हुई। लेकिन सामान्यतः यह जरूरी नहीं है।

इसी भिन्नता के कारण बैजामिन वोर्फ का मानना है कि अंग्रेजीभाषी और होपीभाषी किसी घटना के बारे में भिन्न-भिन्न रूप से सोचते हैं। होपीभाषी का ज्यादा जोर जानकारी के स्रोत पर होता है जबकि अंग्रेजी भाषी का ज्यादा जोर घटना के समय या काल पर होता है।

एक से अधिक कैसे दिखाएँ?

इसी प्रकार अलग-अलग भाषाओं के वाक्य विन्यास में वस्तुओं को भिन्न-भिन्न प्रकार से लिया जाता है अंग्रेजी में, कुछ संज्ञाएँ (जैसे bean) गिनने योग्य हैं और उनके बहुवचन बनाए जा सकते हैं (जैसे beans)। और कुछ संज्ञाएँ ढेर या समूह के रूप में हैं और उनके बहुवचन नहीं बनाए जा सकते हैं। (जैसे आपके पास 'दो कप चावल' हो सकते हैं लेकिन 'दो चावल' नहीं)। दूसरी भाषाओं जैसे जापानी में इस तरह का विभेद नहीं होता है शोधकर्ताओं ने यह अध्ययन किया है कि भाषा की यह विशेषता अंग्रेजी भाषी को ढेर और एकल वस्तुओं के बीच फर्क करने में ज्यादा सजग बनाता है।

एक और उदाहरण देखें – वोर्फ कहते हैं कि क्योंकि अंग्रेजी में समय को ऐसे टुकड़ों में तोड़कर देखा जाता है जिन्हें गिना जा सके। जैसे Three days (तीन दिन), Four minutes (चार मिनट), half an hour (आधा घण्टा) इसलिए अंग्रेजीभाषी समय को एक अटूट धारा न मानकर समूह के रूप में देखते हैं (मिनट, सेकेण्ड, घण्टा)। वोर्फ कहते हैं कि इसी से हम सोच पाते हैं कि समय एक वस्तु जैसा है, जिसे कि बचा सकते हैं, व्यर्थ गँवा सकते हैं, जबकि होपी भाषा में समय के बारे में इस तरह से बात नहीं की जाती है। इसलिए वे समय के बारे में भिन्न तरह से सोचते हैं। उनके लिए समय एक 'सतत चक्र' के रूप में चलनेवाली प्रक्रिया है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि हमारी भाषा समय के बारे में एक निश्चित दृष्टिकोण हम पर थोपती है। यह भी हो सकता है कि समय के बारे में हमारा दृष्टिकोण हमारी भाषा में प्रतिबिम्बित होता हो या हम अपनी संस्कृति में समय को जिस तरीके से लेते हैं वह हमारी भाषा और सोच दोनों में प्रतिबिम्बित होता हो।

यह ऐसा लगता है जैसे भाषा, विचार और संस्कृति एक चोटी की तीन लटे हैं जो एक दूसरे में गुँथी हुई हैं, एक दूसरे को प्रभावित करती हैं।

क्या हम भाषा में ही सोचते हैं

• लेकिन लोग भाषा में सोचते हैं, सही है ना?

हमेशा तो नहीं लेकिन अधिकांशतः यह बात सही है। आप आसानी से एक ऐसी मानसिक छवि गढ़ सकते हैं और उसकी अनुभूति कर सकते हैं, जिसे कि शब्दों में वर्णित करना मुश्किल हो। आप ध्वनि के सुरीलेपन, नाशपाती के आकार और किसी मसाले की गंध के बारे में सोच सकते हैं और इनमें से किसी भी विचार के लिए भाषा आवश्यक नहीं है।

• तो यह सम्भव है कि मैं किसी के बारे में सोच सकता हूँ, तब भी जब उसके लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं?

हाँ, उदाहरण के लिए रंगों को लीजिए। यहाँ असंख्य भिन्न-भिन्न रंग हैं। लेकिन सभी के लिए अलग-अलग नाम नहीं हैं। यदि आपके पास एक लाल रंग से भरा डिब्बा है और आप उसमें धीरे-धीरे एक-एक बूँद नीला रंग मिलाते हैं तो यह बहुत धीरे-धीरे लाल बैंगनी, फिर बैंगनी, फिर नीले बैंगनी में परिवर्तित होगा। प्रत्येक बूँद रंग को बहुत थोड़ा-थोड़ा परिवर्तित करेगी लेकिन कोई एक ऐसा क्षण नहीं आएगा जब यह एकदम लाल न रहकर बैंगनी बन जाएगा। रंगों का वर्णक्रम एक निरन्तरता लिए होता है हमारी भाषा इस तरह से

निरन्तर नहीं है हमारी भाषा हमें इस तरह बनाती है कि हमें रंगों के वर्णक्रम को लाल, बैंगनी, नीला इसी तरह से अन्य में वर्गीकृत करना पड़ता है।

न्यू गुआना के दानी आदिवासी लोगों की भाषा में रंगों के लिए केवल दो परिभाषाएँ हैं— एक गाढ़े रंग (नीला, हरा), दूसरे हल्के रंग (पीला, लाल)। उनकी भाषा रंगों के वर्णक्रम को अलग तरह से वर्गीकृत करती है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि वे लाल और पीले रंग में फर्क नहीं कर पाते हैं।

रूसी भाषा में, हल्के नीले और गहरे नीले रंग के लिए दो अलग-अलग शब्द हैं। क्या इसका मतलब यह है कि रूसीभाषी इन्हें दो अलग रंगों के रूप में मानते व सोचते हैं, जबकि अंग्रेजीभाषी उन्हें एक ही रंग मानते व सोचते हैं क्योंकि उनके पास इनके लिए एक ही शब्द (नीला) है?

क्या शब्द सोच सीमित करते हैं

क्या आप सोचते हैं कि लाल और गुलाबी अलग-अलग रंग हैं? यदि हाँ तो आप अपनी भाषा से प्रभावित हो सकते हैं, आखिर—कार गुलाबी है तो लाल रंग ही। ठीक उसी तरह जैसे पीले, हरे, नीले रंगों के कई प्रकार होते हैं जो सब एक तरह का हल्का हरे ही माने जाते हैं। कई बार शब्द न होने पर और फर्क को इंगित करने की ज़रूरत पूरा करने के लिए आप नये शब्द बना लेते हैं, जैसे आसमानी, गहरा नीला या अंग्रेजी में ले तो Skyblue, Navyblue अथवा Royalblue इसी तरह पीले, हरे के बारे में भी है याने रंगों में फर्क कर पाने की वजह से ही शब्दों की ज़रूरत हुई जो उस फर्क को दूसरों के साथ बाँटने की क्षमता हमें दे सकें। क्या आप ऐसे और उदाहरण रंगों के बारे में व अन्य विचारों के संदर्भ में सोच सकते हैं?

हमारी भाषा हमें बाध्य नहीं करती है कि हम वही देखें जिनके लिए हमारे पास शब्द हैं लेकिन हम चीज़ों को समूह में किस तरह रखते हैं, इसे भाषा प्रभावित कर सकती है बच्चा जब भाषा सीख रहा होता है तो उसे यह पता लगाना होता है कि कौन सी चीज़ें उस शब्द विशेष के अन्तर्गत आएँगी। एक बच्चा जिसके घर में जर्मन शेफर्ड (Shepherd) (भेड़िया जैसा दिखनेवाली नस्ल का कुत्ता) कुत्ता है उसे वह 'कुत्ता' कहता है। एक दिन वह बच्चा भेड़िया देखे तो हो सकता है कि उसे भी वह कुत्ता ही कहे लेकिन वही बच्चा पड़ोसी के पामेरियन नस्ल के कुत्ते (सफ़ेद बालों वाला कुत्ता) को कुत्ता ना कहे क्योंकि भेड़िये जैसे जानवर को उसने कुत्ता के समूह में रखा है। बच्चे को यह सीखना पड़ेगा कि 'कुत्ता' शब्द के अन्तर्गत किस तरह के/का प्राणी आएगा।

हम यह सीखते हैं कि जो चीज़ें एक जैसी हैं और एक समूह की हैं उन्हें कोई एक नाम दे देते हैं। लेकिन कितनी एक जैसी चीज़ें, एक ही नाम/समूह के अन्तर्गत आएँगी, यह अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग हो सकती है। दूसरे शब्दों में कहें तो इस बारे में हम क्या सोच सकते हैं। हम क्या सोचते हैं पर भाषा का प्रभाव इतना नहीं होता, जितना इस पर होता है कि वास्तविकता को हम कैसे समूहों में बाँटते हैं और उन समूहों को कोई नाम देते हैं। और इसमें भी हमारी भाषा और हमारी सोच, दोनों ही हमारी संस्कृति से प्रभावित होते हैं।

ऐस्कमो और बर्फ के लिए शब्द

• लेकिन बर्फ के लिए ऐस्कमो के उन विभिन्न शब्दों का क्या?

आपने यह सुना होगा कि ऐस्कमो लोगों (ध्रुवों पर रहनेवाले) के पास बर्फ के लिए सैकड़ों शब्द हैं। लोग अक्सर इसका प्रयोग यह दिखाने के लिए करते हैं कि जिस तरीके से हम दुनिया को देखते हैं वह हमसे जुड़ा है कि हम इसके बारे में कैसे बात करते हैं। लेकिन यह सच नहीं है कि ऐस्कमो के पास बर्फ के लिए अनेक शब्द हैं, और यह भी नहीं कि ऐस्कमो की एक भाषा है। जिन्हें हम ऐस्कमो लोग कहते हैं, वे अनेक अलग-अलग भाषाएँ बोलते हैं। और यदि हम उनकी कोई एक भाषा या बोली लें, तो हमें उसमें बर्फ के

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

लिए अंग्रेजी से बहुत ज़्यादा शब्द नहीं मिलते हैं। यहाँ सवाल यह भी है कि हम एक शब्द किसे मान रहे हैं? अंग्रेजी में हम यौगिक रूप (Compound Form) प्राप्त करने के लिए शब्दों को आपस में जोड़ सकते हैं जैसे Snowball (बर्फ का गोला), Snoflake (बर्फ का एक कण), Skyblue, semicircle आदि। एस्किमो भाषाओं में इस तरह से शब्द गठन की प्रक्रिया अंग्रेजी से ज़्यादा है। इसलिए एक मूल शब्द (जैसे snow) सैकड़ों अन्य सम्बन्धित शब्दों का आधार हो सकता है, इसलिए यह शायद उचित नहीं है कि प्रत्येक शब्द को अलग शब्द माना जाए। यदि आप केवल मूल शब्द गिनें तब आप पाएँगे कि एस्किमो भाषाएँ अंग्रेजी से इतनी भिन्न नहीं हैं। आखिरकार अंग्रेजी में Snowfall (हिमपात) के लिए अनेक शब्द हैं— Sleet (बर्फ़ीली बारिश), Slush (गलती हुई बर्फ), Frost (पाला), Blizzard (बर्फानी तूफान), Avalanche (हिमस्खलन), Drift Powder (बर्फ का चूर्ण), Flurry (बर्फ का झोंका)।

• तो नई भाषा सीखने से मेरे सोचने का तरीका नहीं बदलेगा।

हाँ, नहीं बदलेगा लेकिन यदि नई भाषा आपकी भाषा से बहुत ज़्यादा भिन्न है तो यह आपको अन्य संस्कृति और अन्य जीवन शैली की अन्तःदृष्टि दे सकता है।

कुछ प्रश्न :

- अपने जीवन से कुछ ऐसे उदाहरण दें जो इस बात को पुष्टा करें कि हमारे मत हमारी मातृभाषा से जुड़े होते हैं।
- भाषा होने से इन्सान कौन-कौन सी विलक्षण क्षमताएँ हासिल कर पाता है?
- नीचे दी गई तालिका के अनुसार भाषा व विचार भाग एक व दो का विश्लेषण कीजिए।

क्र.सं.	भाषा व विचार में संबंध पक्ष में तर्क	भाषा व विचार में संबंध विपक्ष में तर्क	अपनी टिप्पणी
1.			
2.			
3.			
4.			

- अपनी दिनचर्या के बारे में सोचकर बताइए कि यदि आपके पास भाषा नहीं हो तो दिनभर के कामों में क्या-क्या बदलाव आएँगे?
- अंग्रेजी व हिन्दी में क्रिया के रूप में ज्ञान के स्रोत का क्या कोई असर पड़ता है?
- (अ) बहुवचन बनाने में अंग्रेजी में rice, wheat कुछ ऐसे शब्द हैं, जिनके लिए नियम फर्क प्रतीत होता है क्या हिन्दी में भी ऐसे शब्द हैं, उन्हें ढूँँ।
- (ब) Semicircle, Skyblue जैसे और भी शब्दों की सूची बनाएँ। क्या यह हिन्दी में भी होते हैं? हिन्दी में भी इन शब्दों की एक सूची बनाएँ।
- (अ) German Shepherd नाम हमें उस कुत्ते के बारे में क्या बताता है?
- (ब) कोई और उदाहरण दें जिसमें बच्चों के सीखने में श्रेणियों की समझ के बदलने की झलक मिले।
- नई भाषा सीखने से क्या-क्या असर हो सकते हैं? कुछ यहाँ दिए गए हैं और सोचें व चर्चा करके लिखें।

अध्याय – 7

भाषा व्यक्ति के लिए क्यों आवश्यक है?

परिचय :

भाषा संवाद व संप्रेषण का माध्यम है, चाहे वह बोलचाल के रूप में हो, चाहे लेखन के रूप में या फिर संकेतों में। यह प्रतीकों के निर्धारित ढाँचे पर आधारित है हमारे लिए संप्रेषण का एकमात्र तरीका भाषा ही नहीं है इसके अलावा संप्रेषण के बहुत से गैर-शाब्दिक तरीके भी होते हैं। अलग-अलग संस्कृति में भावनाओं व संदेशों के संप्रेषण हेतु अलग-अलग गैर-शाब्दिक तरीके होते हैं। इंसान और जानवरों के गैर-शाब्दिक संप्रेषण में कुछ-कुछ समानता होती है परन्तु भाषा हमारे जीवन में अति ज़रूरी है, हमें इसकी ज़रूरत दूसरों से बात करने में, उन्हें सुनने, पढ़ने व लिखने में होती है।

भाषा हमें बीती हुई घटनाओं का विस्तार से वर्णन करने व भविष्य की योजना बनाने के लिए तैयार करती है। भाषा के बिना हमारी सोच आज और अभी पर ही केन्द्रित होती। भाषा ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सूचना व समझ को हस्तांतरित करना संभव बनाती है और एक समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर बनाती है। जो भाषा हम उपयोग करते हैं वह न केवल हमारी संस्कृति को प्रभावित करती है बल्कि हम दुनिया के बारे में कैसे सोचते हैं ? इसे भी प्रभावित करती है।

उद्देश्य :

- भाषा संवाद व संप्रेषण का माध्यम है की समझ बना पाना।
- भाषा संप्रेषण के विभिन्न तरीकों के प्रति समझ को विकसित करना।
- सोच भाषा पर निर्भर है या भाषा सोच पर निर्भर है? इस प्रश्न पर अपना समझ विकसित करना।
- भाषा में संज्ञान (समझ) की भूमिका को समझ पाना।
- सीखना क्या जैविक मंत्र है? की समझ विकसित करना।
- भाषा का विकास किन-किन क्षमता के कारण होता है? पर समझ बना पाना व भाषा सीखने में मदद कैसे हो की समझ को विकसित करना।
- भाषा सीखने के विभिन्न चरणों के प्रति अपना स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करना।

भाषा व संज्ञान

हम हमेशा शब्दों के रूप में नहीं सोचते, किन्तु शब्दों के बिना हमारी सोच बहुत ही सीमित हो जाएगी। भाषा का सोच व विचार के साथ संबंध मनोवैज्ञानिकों के लिए बहुत रुचि का विषय रहा है। कई मनोवैज्ञानिकों ने कहा है कि हम भाषा के बिना सोच ही नहीं सकते। इस प्रस्ताव पर काफ़ी गर्मा-गर्मी हुई है। एक दृष्टि से देखें तो सवाल यह है कि सोच भाषा पर निर्भर व आधारित है या भाषा सोच पर?

भाषा की संज्ञान में भूमिका

महत्वपूर्ण संज्ञानात्मक गतिविधियों में क्या भाषा कोई भूमिका निभाती है? अगर हाँ तो वह क्या है? पहली बात तो यह कि हमारी याददाश्त सिर्फ ध्वनियों (आवाज़ों) और छवियों में ही संग्रहित नहीं होती वरन् शब्दों के रूप में भी संग्रहित होती है। भाषा हमें सोचने में, निष्कर्ष निकालने में, मुश्किल निर्णय लेने और समस्याएँ हल करने में मदद करती है भाषा, विचारों को व्यक्त करने के साथ-साथ उन्हें व्यवस्थित, क्रमबद्ध व सूत्रों में पिरोने के उपकरण के रूप में मानी जा सकती है

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

इससे एक सवाल उठता है इस सवाल के बारे में हमने पिछले अध्याय में बात की है। सवाल यह है कि क्या जिन लोगों के पास ऐसी भाषाएँ हैं, जिसमें किसी संदर्भ के लिए ज़्यादा शब्द हैं वे ज़्यादा बारीकी से महसूस कर सकते हैं, ज़्यादा गहराई से उस संदर्भ के बारे में सोच सकते हैं।

यह सोचकर देखें कि जो लोग रेगिस्तान में रहते हैं, उनके दिमागी पुस्तकालय में तो ऊँट के बारे में बहुत समृद्ध अनुभव होंगे। इसी प्रकार बर्फ के बारे में आपकी शब्दावली सीमित होगी अगर आप अधिक बरसातवाली (tropical), पॉम के पेड़ों और तोतावाली दुनिया में रहते हैं। इसी तरह जिस प्रदेश में चावल अधिक उगाया जाता है व खाया जाता है व यहाँ लोगों की सामान्यतः अलग-अलग तरह के चावल व उनसे बनने वाले विभिन्न व्यंजनों की समृद्ध शब्दावली होगी। इस सबके बावजूद यह बात विवादास्पद है और यह जोर देकर कहना संभव नहीं है कि हमारी शब्दावली की हमारे विचार व मानसिक ढाँचे को बनाने में कोई अहम भूमिका है।

ऐपियर व वोर्फ के सिद्धांत के विपरीत इलेनोर रोश द्वारा किए गए एक अध्ययन ने दिखाया है कि किन्हीं लोगों के पास अवधारणाओं के लिए शब्द न होना उनकी चीज़ को महसूस कर पाने व उसके बारे में सोच पाने की क्षमता को नहीं रोकता है। रोश दानी समूह के लोग जो कि न्यू गिनी में रहते हैं के साथ, उनकी रंगों की पहचानने की क्षमता का अध्ययन किया। दानी लोगों के रंगों को दिखाने के लिए दो ही शब्द हैं – एक जिसका अर्थ लगभग सफेद के समकक्ष है और दूसरा जो लगभग काले के समकक्ष है। अगर भाषाई सापेक्षता की धारणा सही हो तो दानी लोग हरे, नीले, लाल, पीले और जामुनी रंग के बीच अंतर नहीं कर सकेंगे। किन्तु रोश ने पाया कि दानी समूह के लोग रंगों को ठीक वैसे ही देखते हैं जैसे हम। रंगों की अनुभूति व उन्हें देख पाने की क्षमता हमारी जैविक काबिलीयतों में शामिल है और उसके लिए हमारे रेटिना में उपस्थित रिसेप्टर जिम्मेदार हैं।

भाषा में संज्ञान (समझ) की भूमिका

शोधकर्ता यह भी देखने का प्रयास कर रहे हैं कि भाषा के लिए क्या संज्ञान एक महत्वपूर्ण नींव है अगर सामान्य तौर पर भाषा संज्ञान को प्रतिबिंबित करती है, तब हम यह अपेक्षा करेंगे कि सामान्य समझ, भाषाई क्षमता और बुद्धि क्षमता में करीबी रिश्ता हो। ख़ास तौर पर हम यह अपेक्षा करेंगे कि एक क्षेत्र (भाषा) में आनेवाली समस्याओं के तुल्य समस्याएँ दूसरे क्षेत्र (संज्ञान) में भी आएँगी। जैसे – यह कल्पना करेंगे कि सामान्य बौद्धिक पिछड़ना, भाषाई क्षमता में भी पिछड़ेपन को इंगित करेगा। यह कई बार होता है पर हर बार नहीं। क्या आपने कभी ऐसे किसी व्यक्ति को देखा है जो बौद्धिक रूप से पिछड़ा हुआ है या मानसिक रूप से कमजोर है। इसलिए उसमें भाषाई क्षमताएँ भी कमजोर हैं, वह अच्छे से बोल नहीं पाता, दूसरों की बातें सुनकर प्रतिक्रिया नहीं कर सकता।

शोधकर्ताओं ने पाया है कि बौद्धिक पिछड़ने के साथ हमेशा भाषाई क्षमताओं में कमी नहीं पाई जाती। विलियम्स सिंड्रोम— यह एक तरह की अनुवांशिक बीमारी है। यह बच्चों की शारीरिक वृद्धि, हाव-भाव, शारीरिक दिखावट, संज्ञानात्मक क्षमताओं (जैसे— वर्गीकरण करना, विश्लेषण करना, तर्क करना) पर प्रभाव डालती है। इन बच्चों को नई चीज़ें सीखने में भी परेशानी होती है और ये बच्चे बौद्धिक रूप से अन्य हम उम्र सामान्य बच्चों से पिछड़े लगते हैं। किन्तु इनकी भाषाई क्षमता औसत स्तर के समकक्ष होती है। भाषा को संप्रेषण के लिए उपयोग करने में भी उनकी क्षमता कम नहीं होती। विलियम्स सिंड्रोम की प्रकृति यह इंगित करती है कि इन्सान के दिमाग में भाषाई क्षमताओंवाली जैविक रूप से ही तैयार सोचने की इकाइयाँ होती हैं। यानी दिमाग को सभी कुछ करनेवाली संज्ञान क्षमता वाली समग्र इकाई, जिसमें भाषा भी शामिल है के रूप में नहीं देखा जा सकता।

बहरे बच्चों पर किए गए अध्ययनों से भी इस बात का प्रमाण मिलता है कि सम्पूर्ण संज्ञान क्षमता,

भाषाई क्षमता से फर्क है सोचने व समस्या हल करने के बहुत से काम बहरे बच्चे, अपनी उम्र के बाकी बच्चों के समान ही कर पाते हैं। इस अध्ययन में शामिल बहुत से बच्चों को लिखित भाषा अथवा संकेत भाषा का भी ज्ञान नहीं था (Furth 1977)। यानी किसी भी तरह का भाषाई अनुभव व क्षमता उन्हें मदद नहीं कर रही थी। संक्षेप में कहें तो इसके बावजूद विचारों का ढाँचा हमारी भाषाई क्षमता को प्रभावित करता है और भाषाई क्षमता संभवतः विचारों के ढाँचे को, ऐसे भी प्रमाण उपलब्ध हैं, जो दिखाते हैं कि ये दोनों (संज्ञान व भाषा) एक ही ढाँचे के हिस्से नहीं हैं। इनका विकास मानव की जीव वैज्ञानिक विकास प्रक्रिया में दिमाग के अलग-अलग हिस्से के माड्यूल (Modules) के रूप में हुआ है।

हमने अभी पढ़ा कि दिमाग में अलग-अलग माँड्यूल/हिस्से होते हैं और भाषा व संज्ञान (समझ) एक ही माँड्यूल में नहीं होते हैं। दिमाग में भाषा के लिए एक अलग माँड्यूल होता है पता कीजिए इस बारे में चौम्स्की क्या कहते हैं ?

सीखना क्या जैविक मंत्र है

सन् 1799 में 11 वर्ष का एक बच्चा फ्रांस के जंगलों में मिला। चूँकि वह इंसानों के पास नहीं आता था इसलिए उसे पकड़ना पड़ा था। इसको एवेरोन के जंगली लड़के के नाम से जाना जाता है ऐसा माना जाता है कि वह 6 साल से जंगल में अकेला रह रहा था। जब उसे पकड़ा गया तो उसने बातचीत का कोई प्रयास नहीं किया। कई वर्षों के बाद भी उसने ठीक से अपनी बात समझाना व दूसरों की बात समझना नहीं सीखा। यह वाक्या "बच्चे भाषा कैसे सीखते हैं" के बारे में कई सवाल उठाता है क्या भाषा के नियम बना पाना और उनसे असंख्य शब्द बना पाना जैविक कारकों और जैविक विकास के कारण है ? या फिर भाषा परिवेश से ही सीखी जाती है? या फिर उसके जैविक कारण भी हैं, पर वह परिवेश से भी प्रभावित होती है? इन प्रश्नों के उत्तर जटिल हैं और अभी भी शोध का केन्द्र है।

भाषाओं व उनके विकास पर जीवशास्त्रीय प्रभाव, हालाँकि अलग-अलग लोग गणना के अलग-अलग अनुमान लगाते हैं, फिर भी सामान्यतः वैज्ञानिक मानते हैं कि इन्सानों ने लगभग 100,000 साल पहले भाषा हासिल की। इस प्रकार जैविक विकास के संदर्भ में भाषा एक काफी नई इन्सानी क्षमता है, लेकिन कई विशेषज्ञ मानते हैं कि जैविक विकास का ढाँचा जिसने इंसानों को भाषाई क्षमतावाला जीव बनाया, पूरी भाषाई क्षमता के आने के बहुत पहले ही इंसान के पास आ चुका था। हमारे पूर्वजों के दिमाग, तंत्रिका तंत्र और वाक् तंत्र (बोलने का ढाँचा) लाखों साल में बदले। एक बार जीव वैज्ञानिक क्षमता आने के बाद इन्सान आवाजें निकालने व चिल्लाने से बढ़कर धीरे-धीरे अमूर्त भाषा तक पहुँचे। इस भाषाई क्षमता ने इन्सानों को बाकी जानवरों के मुकाबले काफी बेहतर बना दिया और संघर्ष में उनके बचने की संभावना को भी बहुत बढ़ा दिया (पिंकर 1994)।

भाषा यानी अंतर्निहित क्षमता?

भाषा वैज्ञानिक नोम चौम्स्की (1975) उनमें से एक हैं जो कहते हैं कि इन्सान भाषा सीखने के लिए जीव वैज्ञानिक रूप से तैयार होकर पैदा होते हैं। यह उनमें अंतर्निहित है कि वे एक विशेष समय पर और विशेष तरह से भाषा सीखेंगे। चौम्स्की व कई और भाषा विशेषज्ञों के अनुसार भाषा के जीव वैज्ञानिक होने का पक्का सबूत यह है कि पूरी दुनिया के अलग-अलग भाषा बोलनेवाले व अलग-अलग मात्रा में अलग-अलग प्रकार के परिवेश से भाषाई अनुभव प्राप्त करनेवाले बच्चे भाषा सीखने के चरण विकास क्रम में लगभग साथ-साथ व उसी क्रम में हासिल करते हैं। जैसे कि कई ऐसी भी संस्कृतियाँ हैं, जिनमें जब तक कि शिशु एक साल के न हो जाएँ, वयस्क उनसे कोई बात नहीं करते, फिर भी शिशु भाषा सीख लेते हैं। इसके अलावा जितनी छोटी उम्र में बच्चे भाषा सीख लेते हैं उसको समझने के लिए जीव वैज्ञानिक कारकों के अलावा और कोई उपयुक्त नहीं लगता (लोक 1999, मारातोस 1999)। चौम्स्की कहते हैं कि बच्चे सुनकर व सुनी बात की नकल करके,

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

सारे नियम व भाषा का ढाँचा नहीं अख्तियार कर सकते। इसके स्थान पर यही मानना होगा कि प्रकृति ने हर बच्चे के दिमाग में सार्वभौमिक व्याकरण का स्वरूप पहले से ही डाल रखा है जो उन्हें किसी भी भाषा के बुनियादी नियमों को समझने और जो सुन रहे हैं उन पर लागू करने की क्षमता देता है वे भाषा सीख जाते हैं, बगैर उसकी संरचना के तर्कों को जाने।

जो लोग मानते हैं कि भाषा का एक जीव वैज्ञानिक आधार है, उनकी बात के समर्थन में बहुत से प्रमाण हैं। तंत्रिका-तंत्र विज्ञान में हुए शोध ने यह दिखाया है कि दिमाग में विशेष हिस्से होते हैं, जिनकी प्रकृति उन्हें भाषा के लिए उपयोग करने योग्य बनाती है, अभी जो प्रमाण इकट्ठे हो रहे हैं वे भी कुछ हद तक दिखाते हैं कि भाषा प्रसंस्करण (Processing) ज्यादातर बाएँ अर्द्धगोलार्ध में ही होता है (डिक व अन्य, 2004, ग्रॉडज़िंस्की, 2001)। उन्होंने जीवित व्यक्ति के काम कर रहे दिमाग की छवि देखकर ऐसा कहा। (यह प्रक्रिया जिसे (Imaging Technique कहते हैं Photography या तस्वीर बनाने से फर्क होते हैं। यहाँ छवि बनाना फोटो लेने अन्य होलोग्राम के) शोधकर्ताओं ने पता किया है कि लगभग 9 महीने के शिशु के दिमाग का वह हिस्सा जो स्मृति का भंडार व उसकी विषय सूची है, पूरी तरह से कार्य करने लगता है (Bloom नेल्सन और लेजरसन 2001)। इस दौरान शिशु शब्दों को अर्थ देने में सक्षम बनता प्रतीत होता है इससे भाषा, संज्ञान व दिमाग के विकास में संबंध दिखता है।

परिवेश व भाषा

व्यवहारवादी भाषा को जीव वैज्ञानिक रूप से निर्धारित नहीं मानते। वे कहते हैं कि भाषा मुख्यतः परिवेश के प्रभाव से निर्धारित होती है। उदाहरण के तौर पर स्किनर (1957) ने कहा कि भाषा अन्य व्यवहारों जैसे चलना, भागना आदि जैसा ही एक और व्यवहार है। उन्होंने कहा कि सभी व्यवहार (भाषा भी) अभ्यास पुनरावर्ती व पुरस्कार (Reinforcement) से सीखे जाते हैं। अनर्बर बंदुश (1977) ने बाद में इस बात पर भी जोर दिया कि भाषा नकल द्वारा सीखी जाती है।

रोजर ब्राउन (1973) ने छोटे बच्चों व उनके माता-पिता को अंतःक्रिया करते समय कई-कई घंटों तक देखा। वह इस बात का प्रमाण चाहते थे कि बच्चे माता-पिता के पुष्टीकरण व शाबाशी (मुस्कराहट, प्यार से भींचना, पीठ थपथपना, ठीक करने के लिए फीड बैंक) से भाषा के नियम सीखते हैं। उन्हें पता चला कि हालाँकि माता-पिता उनके सही वाक्य बोलने पर मुस्कराते और शाबाशी देते थे लेकिन कई बार वह व्याकरणिय रूप से ग़लत बात पर भी शाबाशी दे देते थे। ब्राउन का निष्कर्ष था कि इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि पुष्टीकरण, सुदृढ़ीकरण (Reinforcement) भाषा के नियमों की समझ के विकास में मदद करता है। बच्चे बहुत से नये वाक्य बोलते हैं, क्योंकि ये वाक्य बच्चों ने कभी सुने नहीं होते। एक बच्चा यह वाक्य सुनेगा कि 'प्लेट ज़मीन पर गिर गई', परन्तु तत्काल ही यह भी कह पाएगा कि 'मेरा गिलास टेबल पर गिर गया।' नकल व पुष्टीकरण इस क्षमता को समझा ही नहीं सकते।

हालाँकि नकल (Imitation) व पुष्टीकरण बच्चों द्वारा भाषा के नियम पकड़ने के लिए जिम्मेदार नहीं हैं, फिर भी यह आवश्यक है कि बच्चे भाषा की क्षमता रखने वाले लोगों के बीच रहें (स्नो 1999)। ऐवरोन के जंगल से आया लड़का बचपन की शुरुआत में ऐसे लोगों के साथ नहीं रहा था, जो भाषा जानते हों, इससे उसके भाषाई विकास को नुकसान पहुँचा था।

बातचीत, समझ व भाषा का विकास

भाषा सीखने के ढंग पर अध्ययन का एक और विषय, माँ का शिशु के सामने बोलना व भाषाई क्षमता के विकास के सम्बन्ध का है, (Huttertocher अन्य, 1991)। वे माँ जो शिशुओं के साथ भाषा का उपयोग ज्यादा करती थीं, उनके बच्चों के शब्दकोश अन्य बच्चों से काफी अधिक थे। दूसरे जन्मदिवस तक आते-आते शब्द क्षमता के ये अंतर काफी स्पष्ट दिखते थे।

भाषा सीखने में मदद कैसे हो

शिशुओं के साथ बात करने के अच्छे तरीके क्या हो सकते हैं? इनमें से कुछ हैं (बैसेन 1992) :

- एक सक्रिय बातचीत करनेवाले साथी बनें। वयस्क, शिशु से बातचीत करने में पहल करें। अगर बच्चा पूरे दिन किसी बालवाड़ी में रहता है, तो सुनिश्चित कर लें कि उसे पर्याप्त भाषाई उद्दीपन (भाषा के साथ सम्पर्क) मिलता है।
- यह मानकर बात करें कि आप क्या कह रहे हैं शिशु समझ रहा है कि वयस्क अगर ऐसा मानेंगे, तो आपका यह मानना सच होने लगेगा और बच्चे समझने लगेंगे। इसमें 4-5 साल लग सकते हैं। लेकिन धीरे-धीरे जो भाषाई मॉडल प्रस्तुत किए जा रहे हैं उनके स्तर तक बच्चे पहुँच जाते हैं।
- जिस प्रकार की भाषाई शैली में आप व बच्चा सहज हैं, वही इस्तेमाल करें। यह चिन्ता न करें कि आपकी बातचीत बाकी वयस्कों को कैसी लग रही होगी। जो भावना आपकी बातचीत से महसूस होती है वह शिशु के लिए ज़्यादा महत्वपूर्ण है, बनिस्बत उससे, जो आप कह रहे हैं। बच्ची के पहले साल में जिस भी तरह की बातचीत में आप सहज महसूस करें, वह करें।

भाषा सीखने पर परिवेश के प्रभाव के संदर्भ में शोध इसके बुनियादी कारणों की समझ को उलझा देते हैं। भाषा सीखने की वास्तविक दुनिया में न तो बच्चे सिर्फ जीव वैज्ञानिक कारणों से स्वतः भाषा सीखने के लिए पूरी तरह तैयार दिखते हैं और न ही वे सिर्फ समाज व परिवेश से ही सीखते हैं (रेट्नर 1993)। जैसा कि मनोविज्ञान के हर पहलू के साथ होता है, हमें यह देखना होगा कि जीव विज्ञान व परिवेश अंतःक्रिया कैसे करते हैं।

शुरुआती भाषा का विकास व अवधारणाएँ

भाषाई विकास के बारे में एक रोचक बात यह है कि बच्चों की अन्य वयस्कों व माता-पिता के साथ होनेवाली भाषाई अंतःक्रिया कुछ नियमों का पालन करती है (Machhinney, 1999)। यद्यपि बच्चे शब्दावली व अवधारणाएँ एक छोटी उम्र से ही सीखते रहते हैं। वे साथ-साथ यह भी सीखते हैं कि भाषा कैसे गुँथती है। भाषा सीखने की इस पहल पर एक महत्वपूर्ण अध्ययन में जीन बेर्को (1958) ने स्कूल पूर्व व कक्षा एक के बच्चों को कुछ जैसे कार्ड दिखाए। बच्चों को इनको देखना था, जबकि एक वयस्क उस पर लिखे शब्दों को जोर से पढ़ता था। बच्चों को वह शब्द ढूँढना था जो कि खाली स्थान पर भरा जा सकता है इसका सही जवाब वुग्स (Wugs) था। वुग्स ढूँढ़ पाना आपको आसान लग सकता है, पर उसे ढूँढ़ने के लिए बहुवचन के अंत में आनेवाली अंतिम ध्वनि की सही समझ की ज़रूरत है यद्यपि बच्चों के उत्तर हमेशा सही नहीं होते थे फिर भी वे बेतरतीब यानी बगैर किसी समझ व नियम से उभरे उत्तरों के क्रम से बहुत बेहतर थे। इस अध्ययन की महत्वपूर्ण बात यह है कि ये शब्द काल्पनिक थे और इस अध्ययन के लिए ही गढ़े गए थे। इसलिए जवाब पुराने अनुभवों के आधार पर नहीं दे सकते थे और वे नियमों (पैटर्न) की मदद लेने को बाध्य थे।

क्या भाषाई क्षमता की जगह व अन्य अवधारणाओं की जगह पूर्व निर्धारित व अलग है

साठ के दशक में, एरिक लेनन बर्ग 1917) ने कहा कि 18 माह में वयस्कता (प्यूबर्टी) के बीच का समय अति संवेदनशील (critical) अंतराल है, इसी दौरान ही बच्चे को अपनी पहली भाषा और उसके नियम को हासिल करना है इस बात की पुष्टि के लिए लेनन बर्ग ने कुछ बच्चों व वयस्कों जिनके मस्तिष्क के बाएँ अर्द्ध गोलार्द्ध पूरे ठीक नहीं थे, कुछ बहरे बच्चे, जिनके दिमाग का विकास नहीं हुआ था और कुछ अन्य वयस्क लोग जो सामान्य तरह से भाषा नहीं सीख पाए थे को लिया। उसने इन सबका अध्ययन किया (Toger - Lusberg 1994, 1999)। लेनन बर्ग ने पाया कि अध्ययन में शामिल बच्चे तो अपनी भाषाई क्षमता पुनः प्राप्त कर पाए, किन्तु वयस्क नहीं कर पाए। लेनन बर्ग का मानना है कि फर्क यह है कि बच्चों के दिमाग में लचीलापन

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

(प्लास्टिसिटी) था और वे भाषाई क्षमताओं को उन हिस्सों को दे पाए जिनमें कोई भी चोट नहीं थी। चूँकि वयस्कों के दिमाग ढल चुके थे और एक प्रकार से ज्यादा सख्त हो गए थे, इसलिए वयस्कों में यह क्षमता नहीं बची थी कि वे भाषाई क्षमता पुनः हासिल कर लें।

हाल ही में मिले कुछ और बच्चे जो एवेरान की तरह जंगल में रहते थे, इस बात की पुष्टि करते हैं। उनकी भाषाई क्षमता भी अधूरी ही रही यानी वह भी भाषा हासिल करने के लिए महत्वपूर्ण विशेष समय को पार कर चुके थे। 1970 में कैलिफोर्निया के एक सामाजिक कार्यकर्ता को 13 वर्षीय एक लड़की जिनी मिली। इसे दुनिया से अलग ताले में रखा गया था और यह पूरा बचपन भर खुलकर हिलने-डुलने से भी प्रतिबंधित थी व बिल्कुल अकेलेपन में रखी गई थी। जिनी, न तो बोल सकती थी और न ही सीधे खड़ी हो सकती थी। जब भी वह कोई आवाज़ निकालती उसका पिता उसे मारता। वह उससे शब्दों में बात नहीं करता था और उस पर गुर्गता और भौंकता था। जिनी ने पुनर्वास (rehabilitation) कार्यक्रमों में कई वर्ष गुजारे। इसमें चलने-फिरने व बोलने के भी कार्यक्रम थे (कर्टिसन, 1977, राइमर 1993)। वह आखिर तक कई शब्दों को समझना सीख गई और टूटे-फूटे वाक्य भी बोलने लगी लेकिन वह बहुत कम था। सामान्य बच्चे जिस तरह के सवाल पूछते हैं, ऐसा जिनी नहीं कर पाई थी और वह व्याकरण भी नहीं समझ पाती थी। वह अलग-अलग सर्वनामों के बीच विभेद नहीं कर पाती थी और सक्रिय (active) व निष्क्रिय (passive) क्रिया भी अलग नहीं कर पाती। वयस्क होने के बाद भी वह छोटे-छोटे बेतरतीब वाक्यों में ही बोलती थी। जैसे 'पिता ने टाँग मारा' (Father hit leg)] "Bigwood", और जिनी चोट (Ginne hurt)। इस बच्ची की यह कहानी इस बात की पुष्टि करती है कि लोगों को बचपन में ही भाषा के नियम सीखने होते हैं, वरना वह भाषा में पूर्ण सक्षम होने से रह जाएँगे।

भाषा सीखने के चरण

सौभाग्य से ज्यादातर लोग बचपन में ही अपनी-अपनी भाषा के ढाँचे की स्पष्ट समझ व एक बड़ी शब्दावली पा लेते हैं। उदाहरण के लिए अमेरिका देश में ज्यादातर वयस्क 50,000 या इससे अधिक शब्द सीख जाते हैं। जिस प्रक्रिया से भाषा के यह पहलू विकसित होते हैं उसमें शोधकर्ताओं ने बहुत रुचि ली है कई अध्ययनों के माध्यम से वे भाषा अख्तियार करने की प्रक्रिया के प्रमुख पड़ाव अब समझते हैं।

ध्वनि से सार्थक ध्वनि व अर्थ

अपने पहले शब्द बोलने से पहले शिशु तुतलाते (Babble) हैं। याने एक ही आवाज़ और अक्षर (Syllable) को बार-बार बोलते ही जाना। जैसे- बा, बा, बा अथवा दा, दा, दा। इसकी शुरुआत 3 से 6 माह की उम्र में होती है और प्राकृतिक विकास व शारीरिक तैयारी से होती है न कि सुदृढ़ीकरण (reinforcement) अथवा सुनने की क्षमता से (लोक 1993)। बहरे शिशु भी काफी देर तक तुतलाते (Babble) रहते हैं (लेनन बर्ग, रेबेलेस्की और निकोलस 1963)। तुतलाने (Babbling) की यह प्रक्रिया शिशुओं के स्वर तंतुओं की कसरत करवा देती है और उसे अलग-अलग आवाज़ को तौल पाने में मदद करती है।

पैट्रिशिया के शोध में बच्चे को टेप पर संग्रहित आवाज़ें, जिसमें आवाज़ों के टुकड़े, (अक्षर) (Syllable) दोहराए गए हों सुनाते हैं। जब आवाज़ (अक्षर) (Syllable) बदल जाती है, बच्चे जल्दी से सामने रखे खिलौने भालू की ओर देखना सीख जाते हैं। इस तरीके का उपयोग कुहल ने दिखाया है कि लगभग 6 माह तक बच्चे सार्वभौमिक भाषाविद (व्याकरणविद) होते हैं।

बोलना शुरू करने के बहुत पहले से ही शिशु बोली गई, बहुत सी आवाज़ों से 6 अर्थपूर्ण आवाज़ों को छॉट पाते हैं। पैट्रिशिया कुहल (1993, 2000) कहती हैं कि जन्म से लगभग 6 महीने की उम्र तक बच्चे सार्वभौमिक भाषाविद होते हैं। वे उस हर आवाज़ को अलग पहचान सकते हैं जो इन्सानी भाषा बनाती है लेकिन 6 महीने की उम्र तक आते-आते वे अपनी स्वाभाविक (Native) भाषा की आवाज़ों पर केन्द्रित होने लग जाते हैं।

10 से 13 माह की उम्र के बीच बच्चे के पहले शब्द आते हैं। इनमें सबसे पहले महत्त्वपूर्ण शब्द हैं क़रीबी लोगों के सम्बोधन। वह सबसे पहले यही सीखती है कि उन्हें कैसे पुकारूँ (दादा, नाना, मामा, नानी, मौसी आदि को)। इसके अलावा अन्य शब्द हैं परिचित जानवरों के नाम (किटी), गाड़ियाँ, खिलौने (बॉल), खाना-पीना (दूध), शरीर के अंग, (आँख) कपड़े (टोपी), घर का सामान (घड़ी) और अभिवादन (इलम)। शिशुओं के पहले शब्द 50 साल पहले भी यही थे और आज भी शिशुओं के पहले शब्द यही हैं (क्लार्क 1983)।

वाक्य, लम्बे वाक्य, ज्यादा उलझे विचारों से सामना

बच्चे जब 18 से 24 माह की उम्र में पहुँचते हैं वे सामान्यतः दो शब्द वाले कथन बोलने लगते हैं। वे अवधारणाओं को व्यक्त करने का महत्त्व जल्दी से समझ लेते हैं और भाषा बातचीत व संप्रेषण में क्या भूमिका अदा करती है, यह भी जान जाते हैं (शेफर, 1999)।

दो शब्दोंवाले कथनों से अपनी बात को सार्थक ढंग से व्यक्त करने के लिए बच्चे हाव भाव, बोलने का ढंग, उतार-चढ़ाव व संदर्भ का बहुत उपयोग करता है और दो शब्दों की अभिव्यक्ति से ही बच्चे बहुत सारा अर्थ व्यक्त कर पाते हैं (स्लोविच 1972)।

जैसे : पहचानने के लिए : कुत्ता देखो
वस्तु की जगह दिखाने के लिए : किताब वहाँ
दोहराने के लिए : और दूध
कुछ बचा नहीं : सब गई चीज़
नकारने के लिए : भेड़िया नहीं
मिलिक्यत : मेरी टॉफी
गुण बताना : बड़ी कार
कर्ता-कार्य : माँ चलो
क्रिया सीधे किसी पर : तुम्हें मारूँगा (Fist you)
क्रिया सीधे नहीं : पापा को दो (Give papa)
क्रिया-उपकरण : चाकू काटो
सवाल : गेंद कहाँ?

यह उदाहरण उन बच्चों की बात के अनुवाद हैं, जिनकी पहली भाषा अंग्रेज़ी, जर्मन, रूसी, फिनीश, टर्किश और समोअन थीं। हर भाषा में बच्चे द्वारा उपयोग किए गए पहले दो शब्द वाले कथनों में तार (Telegram) में उपयोग होनेवाली भाषा जैसे गुण होते हैं, यह बहुत ही संक्षिप्त होती है और इसमें सब ग़ैर ज़रूरी शब्द छोड़ दिए जाते हैं। तार जैसे गुणोंवाली भाषा दो शब्द वाले उच्चारणों तक सीमित नहीं होती। जैसे-जैसे बच्चे दो - शब्द वाला चरण छोड़ते हैं, वे जल्दी ही तीन, चार और पाँच शब्द वाले उच्चारणों जैसे "माँ आइसक्रीम दो," या माँ टोनी को आइसक्रीम दो," बोलने लग जाते हैं।

माता-पिता व अन्य परिवार के सदस्यों के साथ हुई अनौपचारिक अंतःक्रिया भाषा की क्षमता के शुरुआती विकास में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान अदा करती है। लेकिन, स्कूल की औपचारिक शिक्षा इसके आगे के विकास के लिए ज़रूरी है यहाँ बच्चे भाषा संरचना के ज्यादा गहरे/विस्तृत नियम सीखते हैं, अपने शब्दकोश को बढ़ाते हैं और भाषा का उपयोग, व्यापक अवधारणाएँ सीखने में करते हैं। नीचे दी गई तालिका भाषा सीखने के पड़ाव इंगित करती है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि सभी सामान्य बच्चे ठीक इसी तरह नहीं सीखते, इनमें से कुछ थोड़ा पहले और कुछ थोड़ा बाद में उस चरण तक पहुँचते हैं।

चित्र भाषा सीखने के चरण

0 – 6 माह	स्व ध्वनियों में अन्तर, 6 महीने तक आते-आते ब ब... जैसी ध्वनि निकालना
6 – 12 माह	ब ब ब... ध्वनियाँ जो धीरे-धीरे बोली जा रही भाषा के शब्दों तक पहुँचे संकेत जो वस्तुओं को इंगित करें, 10 – 13 माह में पहले शब्द
12 – 18 माह	औसत शब्दावली 50 + शब्द
18 – 24 माह	औसत शब्दावली 200 शब्द, 2 शब्दों के जोड़े
2 साल	लगातार तेजी से बढ़ती शब्दावली बहुवचन का सही उपयोग, भूतकाल का प्रयोग
3 – 4 साल	औसत बोले गए शब्द समूह 3-4 (वाक्य रूप) हो। हाँ या न का उपयोग, ऐसे सवाल जो हाँ न में हो, क्यों, क्या, कैसे, कहाँ जैसे प्रश्न नकारात्मक व आदेशात्मक वाक्य उपयोग की उपयुक्तता की ज़्यादा समझ।
5 – 6 साल	10,000 शब्दों की औसत शब्दावली सरल वाक्यों को जोड़कर उपयोग
6 – 8 साल	लगातार बढ़ती शब्दावली भाषा नियमों का ज़्यादा सक्षम बातचीत की क्षमता का उपयोग और विकास
9 – 11 साल	शब्द परिभाषाएँ जो समानार्थी शब्द शामिल करती हैं। बातचीत के तरीके बेहतर ज़्यादा।
11 – 14 साल	ज़्यादा अमूर्त शब्द शब्दावली में शामिल – जटिल व्याकरणीय प्रकारों की समझ – शब्दों की वाक्य में भूमिका की ज़्यादा बेहतर समझ। – तुलना, व्यंग्य, अलंकार आदि की समझ
15 – 20 साल	वयस्कों के साहित्य को समझ पाना।

कुछ प्रश्न :

- यह लेख भाषा को संवाद व संप्रेषण का माध्यम मानता है? अभी तक पढ़ी सामग्री के आधार पर क्या आप इससे सहमत हैं ? अपने उत्तर को विस्तार से समझाएँ।
- अध्याय में लेखक कहता है इंसानों व जानवरों के गैर-शाब्दिक संप्रेषण में कुछ-कुछ समानता है। (1) क्या समानताएँ हैं लिखिए। (2) कुछ अंतर भी होंगे, उन्हें भी लिखें।
- पाठ भाषा के हम पर असर के बारे में क्या-क्या कहता है?
- (अ) इस सूची के साथ-साथ हर उम्र तक अन्य क्षमताओं में इन्सान क्या-क्या हासिल कर लेता है? सोचकर लिखें।
जैसे 2 साल तक वह माँगा गया सामान ला सकता है, चल सकता है, रास्ता बता सकता है—
- (ब) यह कर पाने के लिए उसे क्या-क्या आना चाहिए और उसमें क्या-क्या क्षमताएँ होनी चाहिए?
- व्यवहारवादी जीव वैज्ञानिक मानते हैं कि “भाषा मुख्यतः परिवेश के प्रभाव से निर्धारित होती है?” क्या आप इस बात से सहमत हैं? हाँ तो क्यों? ना तो क्यों? व्याख्या कीजिए।



अध्याय — 8

भाषा का सीखने — सिखाने से संबंध

परिचय :

हम सभी जानते हैं कि भाषा बच्चा अपनी निहित क्षमता के द्वारा सीख लेता है लेकिन वह भाषा उसके मातृभाषा से सम्बन्धित होती है। अब सवाल यह उठता है कि बच्चे को भाषा किस प्रकार सिखाई जाए और भाषा सीखने-सिखाने से संबंध क्या है?

बच्चे को भाषा सिखाने से तात्पर्य है कि बच्चा अपने मन की बात को आसानी से दूसरों के सामने मौखिक, लिखित या अन्य किसी और तरीके से प्रदर्शित कर सके। बच्चा भाषा का कुछ अंश अपने आप सीखता है और कुछ अंश उसको सिखाया जाता है। ताकि बच्चा भाषा में अपने आपको कमजोर महसूस न करें। इस पाठ के अन्तर्गत प्रयास किया गया है कि बालक के अर्जित भाषा के ज्ञान को आधार बना कर ही भाषा विषय को सिखाया जाए।

उद्देश्य :

- मनुष्य के लिए भाषा की आवश्यकता क्यों है? की समझ को विकसित करना।
- भाषा सीखने-सिखाने के आधार के प्रति एक स्वस्थ दृष्टिकोण को विकसित करना।
- भाषा सीखने-सिखाने के संबंध के विषय में समझ बना पाना।
- बच्चों के भाषा संबंधित अर्जित समझ को समझ पाना।

भाषा क्यों जरूरी है?

प्राथमिक शिक्षा का सबसे अधिक महत्वपूर्ण पहलू है बच्चे का भाषा सीख पाना। यह तो सभी मानते हैं। यह सबसे अधिक महत्वपूर्ण पहलू क्यों है? इसके जवाब में बहुत सारी बड़ी सूची बनाई जा सकती है। भाषा ही बच्चे के लिए स्रोत का काम करती है और वह अभिव्यक्ति का भी औजार है। इसी से होकर शिक्षा के अन्य पहलुओं तक बालक की पहुँच हो पाती है विज्ञान, गणित, सामाजिक अध्ययन आदि भाषा में खासतौर पर औपचारिक व पुस्तक की भाषा पर पर्याप्त क्षमता हासिल किए बिना समझ पाना संभव ही नहीं है। भाषा के माध्यम से ही बालक विचार का ताना-बाना बुन पाता है, निर्णय के लिए तर्क गढ़ पाता है। यह भूमिका मात्र माध्यम के रूप में नहीं है। अक्सर इस पर विचार करते समय भाषा की भूमिका को समझने में एक खास तरह का एकांगीपन भी आ जाता है। जैसे यह समझा जा सकता है कि भाषा एक साधन है जो इन सब उद्देश्यों के लिए आवश्यक है ऐसा साधन जो हथौड़े की तरह या फिर दीवार पर चढ़ने के लिए उसके साथ खड़ी एक सीढ़ी की तरह। जिस प्रकार उद्देश्य छत पर चढ़ना है व सीढ़ी साधन उसी प्रकार भाषा भी एक साधन है, संप्रेषण का, विचार कर पाने का, विज्ञान, गणित आदि सीखने, निर्णय ले पाना, आदि का एक साधन है जो हमसे इतर है और सबके लिए एक सा ही है। यह बात एक तरह से ठीक है पर अधूरी है असल में जितनी ठीक है उतनी ग़लत भी है भाषा साधन होने के साथ-साथ बहुत कुछ और भी है यह हमारे व्यक्तित्व व अहम का आधार है, हमारी संस्कृति व समझ का भंडार भी है।

इंसान अपने आस-पास की दुनिया को केवल महसूस ही नहीं करता; वह उसे अपने लिए अर्थ भी देता है। मुझे आसमान में बादल दिखता है इस देखने से मैं जो महसूस करता हूँ, मेरे मस्तिष्क पर जो प्रभाव पड़ता है, मेरे काम पर जो प्रभाव पड़ता है, वह आसमान में अलग-अलग आकार व रंगवाली आकृति मात्र देखने का

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

प्रभाव नहीं है वह मेरे और 'बादल' के बीच और उस समय की मेरी स्थिति के बीच अंतःक्रिया का प्रभाव है।

बादल को बरसात से लेकर मोर के नाचने तक बहुत-सी चीजों से जोड़कर देखा जा सकता है। मेरे ऊपर पड़नेवाला प्रभाव आसमान के उस ख़ास रंग, व आकृति को जोड़ पाने का प्रभाव है तो यह प्रभाव स्वाभाविक है। यदि मेरे साथ ऐसा हो कि आसमान में मैं कोई आकृति देखूँ और उसे किसी भी अन्य चीज़ से जोड़ न पाऊँ, तो मेरे ऊपर इसका कोई प्रभाव नहीं होगा। मेरा उससे कुछ छवि जोड़ना ही उस आकृति को अर्थ देना है हम दुनिया की हर वस्तु को इसी प्रकार अर्थ देते हैं। उसे मात्र 'होने से ऊपर उठाकर' सार्थक होने के स्तर तक पहुँचाते हैं। यह सार्थकता हम अवधारणाओं के माध्यम से पैदा करते हैं।

ये अवधारणाएँ हमारे दिमाग में कैसे रहती हैं ? और विकसित होती हैं समझना एक वृहद् विषय है किन्तु हम यह ज़रूर कह सकते हैं कि इन अवधारणाओं पर चर्चा कर पाने के लिए हम व बच्चे इंगित करने के लिए अपने मानस में बहुत सारे प्रतीक बनाते हैं और फिर उन प्रतीकों व अवधारणाओं के बीच आपसी संबंधों की धारणाएँ बनाते हैं। इतने सारे प्रतीकों के बिना हम यह विचार-चर्चा व अपनी कल्पना का संचालन कर ही नहीं सकते। भाषा इसी प्रतीक के बनाने, इन्हें बदलने व आदान-प्रदान की नींव पर खड़ी होती है और वैसे यह स्पष्ट ही है कि इन सब प्रतीकों का आदान-प्रदान भाषा के बिना हो ही नहीं सकता व इसका आवश्यक व अविभाज्य अंग है बिना अवधारणाओं को, विचारों को नाम दिए हम इनके आपसी संबंध निर्धारण में तथा अन्य कार्यों में सक्षम नहीं हो सकते हैं। शब्द एक दृष्टि से देखें तो इन अवधारणाओं के नाम ही हैं। अवधारणा संरचना के इस ढाँचे को बना पाने को ही 'समझ बना पाना' कहते हैं अर्थात् समझ बना पाना और भाषा का विकास एक-दूसरे पर आधारित है। बिना एक के दूसरे का अस्तित्व संभव नहीं, भाषा मात्र साधन नहीं है वह समझ का व व्यक्तित्व का अविभाज्य अंग है। हर व्यक्ति का ढाँचा अलग है, उसके हिस्सों में अन्तर्सम्बन्ध अलग-अलग हैं।

कुछ प्रश्न :

- बालक विचार का ताना बाना भाषा के माध्यम से बुन पाता है? उदाहरण से समझाइए।
- भाषा केवल साधन नहीं और भी बहुत कुछ है? समझाइए।

मौखिक भाषा की छोटी से छोटी सार्थक इकाई शब्द है शब्द ध्वनियों का ऐसा समूह है जिसमें ध्वनियाँ एक निश्चित क्रम से उच्चारित की जाती हैं। यदि इस प्रकार के ध्वनि समूहों को किसी निश्चित अवधारणा से ना जोड़ा जाए तो वे सार्थक शब्द नहीं बनेंगे। शब्द ऐसा क्रमिक ध्वनि समूह है जो किसी अवधारणा को इंगित करता है। इस ध्वनि समूह तथा इसके द्वारा इंगित अवधारणा में संबंध किसी तर्क पर आधारित नहीं है। यह ठीक है कि सभी हिन्दीभाषी 'पेड़' के उच्चारण को सुनकर एक ही अर्थ समझते हैं, अर्थात् उच्चारण और अर्थ का संबंध सुस्थिर है तथा एक भाषा-भाषियों के समूह में सार्वभौम भी है, पर अन्ततः यह मनमाना ही है पेड़ के अर्थ को इंगित करने के लिए बंगाली बोलनेवाले 'गाछ' कहेंगे और अंग्रेजी बोलनेवाले लोग 'ट्री' कहेंगे। दूसरी बात, अर्थ के निर्माण के लिए शब्दों का प्रयोग निश्चित नियमों के अनुसार किया जाता है अर्थात् शब्दों के उच्चारण का क्रम निर्धारण नियमानुसार होता है। जब हम कहते हैं 'बंदर पेड़ पर चढ़ा' तो सुननेवाले एक अर्थ ग्रहण करते हैं और जब कहते हैं 'पेड़ बंदर पर चढ़ा'। तो दूसरा अर्थ बनता है ये नियम भी मूलतः मनमाने ही हैं। हमने तय कर लिया कि हिन्दी जब बोलेंगे तो उसमें बंदर पेड़ पर चढ़ा का अर्थ होगा, शब्द का उच्चारण, शब्द का अर्थ तथा इन सबके संबंध सुस्थिर तथा भाषा-भाषी समूह में कमोबेश सार्वभौम हैं। भाषा, ध्वनि समूहों से अर्थों (अवधारणाओं) के अनुबंध तथा इस प्रकार बने शब्दों को व्यवहार में लाता है। समूह के अंदर नियम मानने होते हैं और सभी को उन्हीं मान्य नियमों के अन्तर्गत चलना होता है। कोई यह नहीं कह सकता कि मैं तो अलग ही नियम चलाऊँगा या जब मन आए वैसे बोलूँगा अथवा लिखूँगा। मनमानापन इस बात में है कि

यह पहले से तय नहीं है वह नियमों का तंत्र है। और यह तंत्र सुव्यवस्थित तथा पूर्णतया मानवकृत है भाषा सीखने का अर्थ है इस तंत्र पर अधिकार तथा इसका अर्थ निर्माण, अर्थ ग्रहण करने व अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए दक्ष प्रयोग कर पाना। अर्थात् मौखिक-भाषा में हम सुनी गई ध्वनियों पर कुछ नियम लगाकर अर्थ ग्रहण करते हैं। इस प्रकार अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए निश्चित नियमानुसार ध्वनि उच्चारित करते हैं।

सुनकर समझना-

ध्वनियाँ अर्थ

अभिव्यक्ति-

अर्थ ध्वनियाँ

जिस तरह मौखिक भाषा में श्रव्य प्रतीकों (ध्वनियों) का प्रयोग होता है उसी तरह लिखित भाषा में दृश्य प्रतीकों (अक्षरों-यानी कागज़ पर बनी आकृतियों) का प्रयोग होता है अक्षर वास्तव में ध्वनि के लिए प्रतीक का काम करते हैं (चीनी व कुछ अन्य भाषाओं में लिपि की संरचना अलग है और उसमें ध्वनि व लिखने के चिह्नों में संबंध नहीं है)।

बोलने में हमारे पास एक तो आवाज़ में उतार-चढ़ाव के प्रयोग की स्वतंत्रता होती है दूसरी, भाव-भंगिमाओं से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होती है तथा तीसरे, क्योंकि संवाद आमने-सामने होता है अतः अस्पष्टता या भ्रामकता के स्पष्टीकरण के अवसर उपलब्ध होते हैं। ये तीनों सुविधाएँ लिखित भाषा के उपयोग में उपलब्ध नहीं होतीं। अतः एक तो लिखित भाषा में ध्वनि प्रतीकों के अलावा भी कुछ प्रतीक चिह्नों की आवश्यकता होती है। जैसे-पूर्ण विराम, अर्धविराम, प्रश्न वाचक चिह्न आदि। दूसरे लिखित भाषा में भाषा के नियमों की अनुपालना अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है ऐसा इसलिए क्योंकि संदर्भ से अन्य अर्थ निकालने की संभावना नहीं होती।

कुछ प्रश्न :

- भाषा में कहाँ मनमानापन है और कहाँ मनमानापन नहीं चल सकता? उदाहरण सहित समझाइए।

लिखित भाषा में अर्थ ग्रहण करने के लिए हम केवल दृश्य प्रतीकों को देखते हैं। उसमें आवाज़ का उतार-चढ़ाव, हाव-भाव कुछ नहीं होता। लिखित भाषा में लिखकर अभिव्यक्ति की प्रक्रिया इससे उल्टी होती है। यहाँ भी ध्वनि तथा दृश्य प्रतीक का संबंध सुनिश्चित तथा भाषा-भाषी समूह में सार्वभौम है तथा मनमाना भी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लिखित भाषा में अर्थ तक पहुँचने में मौखिक भाषा से अधिक चरण हैं। मनमाने संबंधों की स्मृति व नियमों का उपयोग दो बार करना पड़ता है, यह कर पाने के लिए तर्क क्षमता का दो तीन बातों को एक साथ दिमाग में रख पाने आदि सभी की क्षमता बढ़ाने की ज़रूरत होगी।

यहाँ यह सब लिखने का उद्देश्य किसी प्रकार की भाषा-शास्त्रीय विवेचना करना नहीं है बल्कि एक बहुत ही सीमित उद्देश्य है। यहाँ पर केवल उन्हीं मान्यताओं को सूचीबद्ध कर रहे हैं जो आरंभिक भाषा शिक्षण में सीधे उपयोग की हैं। भाषा के बारे में और भी बहुत कुछ कहा जा सकता है और उसका भाषा के विकास से संबंध भी हो सकता है। यहाँ हम मात्र वे चीज़ें लिख रहे हैं जो सीधे-सीधे उक्त सामग्री व विधि के मूल में हैं।

तो अभी तक के विवेचन से हम इन निष्कर्षों पर पहुँचे हैं -

1. बालक की समझ का विकास और उसकी भाषा का विकास एक दूसरे से गहरे रूप से सम्बन्धित हैं।
2. मौखिक भाषा में (और मूलतः भाषा मौखिक ही होती है) क्रमिक ध्वनि समूहों का अवधारणाओं से मनमाना संबंध होता है। इस संबंध के पीछे कोई तर्क नहीं होता। लेकिन अवधारणाओं का ढाँचा और उसमें पारस्परिक संबंध तर्कपूर्ण होता है और उसके आधार पर ही विचार आगे बढ़ते हैं।

1. डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

3. ध्वनि समूहों तथा अवधारणाओं का यह संबंध सुस्थिर तथा भाषा-भाषी समूह में सार्वभौम होता है। इन अवधारणा-अनुबंधित-क्रमित-ध्वनि समूहों (शब्दों) के उपयोग के नियम भी मनमाने, सार्वभौम तथा सुस्थिर होते हैं। इस प्रकार भाषा एक सुव्यवस्थित प्रतीक तंत्र है।
4. लिखित भाषा में अक्षर ध्वनियों के दृश्य प्रतीक होते हैं। आकृतियों व ध्वनियों का संबंध भी मनमाना, सुस्थिर तथा सार्वभौम होता है।
5. लिखित भाषा द्वारा अर्थ तक पहुँचने में मौखिक भाषा से अर्थ तक पहुँचने की तुलना में एक चरण अधिक आता है तंत्र-गत नियमों व अनुबंधों का प्रयोग दो बार करना पड़ता है।
6. लिखित भाषा में संदर्भ, उतार-चढ़ाव, हाव-भाव और कोई संकेत नहीं होते। इसमें व्यक्त बात को समझने के लिए व्यवस्थित विचार क्रम की आवश्यकता होती है, लिखित भाषा के साथ जूझने के लिए अमूर्त विचार-विमर्श की क्षमता भी चाहिए। पढ़ने की क्षमता बढ़ने से न सिर्फ़ स्रोतों तक पहुँच बढ़ती है वरन् अमूर्त विचार करने पाने की व तर्क कर पाने की क्षमता भी।

भाषा का सीखने-सिखाने से संबंध

किसी प्रक्रिया को शिक्षण की प्रक्रिया कहे जाने के लिए यह आवश्यक है कि उस प्रक्रिया में समझ का विकास हो रहा हो। अतः भाषा-शिक्षण पर ठीक से विचार करने के लिए हमें पहले समझ व समझ के विकास की कुछ यहाँ संगत मान्यताओं को समझना तो पड़ेगा ही। यहाँ समझ व समझ के विकास के विस्तृत विवेचन की नहीं है। मात्र उन मान्यताओं को समझने का प्रयास करेंगे जो हमारी सामग्री व शिक्षण-विधि में काम में ली गई है और उन मान्यताओं को भी तार्किक दृष्टि से स्थापित नहीं कर रहे हैं। हालाँकि हमारा मानना है कि ये सभी मान्यताएँ सामान्य अवलोकन व तर्क के आधार पर स्थापित की जा सकती हैं। पर हमें लगता है कि यहाँ इन्हें केवल समझने भर से काम चल जाएगा।

इंसान अपने आस-पास की दुनिया को देखता है, छूता है, सूँघता है, चखता है और सुनता है देखना, सुनना इत्यादि को हम इंद्रिय-संप्रेषण कह सकते हैं। इंसान इन इंद्रिय-संप्रेषणों को अपनी स्मृति में रख सकता है। उस स्मृति को जागृत कर सकता है। विभिन्न स्मृतियों व इंद्रिय-संप्रेषणों में संबंध देख सकता है इन क्षमताओं व संप्रेषणों के आधार पर वह 'विचार' बनाता है 'लाल', 'पीला' आदि रंगों के 'विचार'। 'चारपाई', 'पेड़' आदि वस्तुओं के 'विचार'। इन 'विचारों' को हम 'अवधारणाएँ' कह सकते हैं। इन अवधारणाओं में आपसी संबंध पहचानता है जैसे- 'भेड़', 'ऊन', 'कपड़ा', 'ठंड' में संबंध। 'आम', 'गर्मी', 'मीठा', 'केरी', 'अचार' में संबंध। और भी कई तरह के संबंध। इस प्रकार आपस में जुड़ी अवधारणाओं के समूह को हम 'अवधारणाओं की संरचना' कह सकते हैं। इस तरह इंसान अवधारणाओं की संरचनाएँ बना लेता है अब इन अवधारणा संरचनाओं के आधार पर वह अपने इंद्रिय-संप्रेषणों की व्याख्या करता है। समझ शब्द का उपयोग यहाँ दो अर्थों में किया जाएगा। एक, इस संपूर्ण अवधारणा-संरचना-तंत्र को इंगित करने के लिए। तथा, दो, मानव की अपने इंद्रिय-संप्रेषणों की व्याख्या कर पाने की क्षमता को इंगित करने के लिए। कहाँ कौन सा अर्थ वांछित है; यह संदर्भ से स्पष्ट हो जाएगा। जहाँ भ्रम की गुंजाइश होगी वहाँ स्पष्ट कर दिया जाएगा।

इंद्रिय-संप्रेषणों से होनेवाली सीधी दैहिक अनुभूति को हम यहाँ अनुभव कहेंगे। अनुभव शब्द का दूसरा अधिक विस्तृत अर्थ भी है पर यहाँ इसी सीमित अर्थ में इस शब्द का उपयोग करेंगे। समझ की ऊपर दी गई परिभाषा से ही स्पष्ट है कि इसका आधार व्यक्ति के अपने अनुभव ही हो सकते हैं। क्योंकि मूल अवधारणाएँ सीधे अनुभवों से ही बन सकती हैं। जैसे बिना देखे 'लाल' की अवधारणा बना पाना संभव ही नहीं है अर्थात् समझ का आधार अनुभव होते हैं। समझ का उपयोग अनुभवों की व्याख्या और वांछित अनुभव प्राप्ति के लिए होता है।

अनुभवों की व्याख्या अपनी ही समझ के आधार पर संभव है। किसी दूसरे की समझ के आधार पर जब मैं कुछ स्वीकार करता हूँ तब भी उनकी अपनी समझ में रूपांतरित करके ही स्वीकार करता हूँ। अतः बालक की समझ के विकास का एकमात्र रास्ता उसके लिए विभिन्न अनुभव देनेवाली परिस्थितियों का निर्माण करना तथा उसी की अवधारणाओं के माध्यम से उन अनुभवों को विवेचित/व्याख्यायित करने में मदद करना है। कोई अन्य व्याख्या उस पर आरोपित कर देने से समझ का विकास नहीं हो सकता। मात्र बालक को ढोंग करने के लिए बाध्य किया जा सकता है। समझ के विकास की गति हर बालक की अपनी होती है क्योंकि उसके अनुभव उसके अपने ही होते हैं। बालक की समझ के विकास की गति को प्रभावित तो किया जा सकता है पर कुछ सीमाओं के अंदर ही अर्थात् बहुत से बालकों की समझ की गति को समान बना पाना संभव नहीं है। यदि सबकी समझने की गति को समान बनाने की कोशिश करें तो कुछ की गति को घटाना पड़ेगा तथा कुछ को समझने का नाटक करने के लिए बाध्य करना पड़ेगा।

उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर हम शिक्षण विधियों के बारे में कुछ दिशानिर्देश प्राप्त कर सकते हैं—

- शिक्षण—विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जो बालकों के अनुभव के आधार को बढ़ाएँ। यह तभी हो सकता है जब वे नए अनुभव प्रदान करने के लिए बनाई गई परिस्थितियों व की जानेवाली गतिविधियों में स्वेच्छा से हिस्सा लें।
- बालक की अर्जित समझ को आधार बनाकर ही आगे बढ़ा जा सकता है उससे कटकर, हटकर या उसे नकारकर आगे बढ़ना संभव नहीं है।
- शिक्षण—विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जो बालक को आगे बढ़ने की गति को स्वतंत्रता दें।

पिछले अध्याय में हमने एक निष्कर्ष यह निकाला था कि बालक की समझ का विकास व भाषा का विकास एक दूसरे पर आश्रित होते हैं। एक दूसरे में मिले-जुले होते हैं। बालक जब विद्यालय में आता है तो उसकी अपनी एक समझ व अपनी भाषा दोनों ही होती हैं। अतः शिक्षण में, और विशेष रूप से भाषा-शिक्षण में, हमें आगे का काम इसी उपलब्ध आधार पर आरंभ करना चाहिए। हमें बालक की भाषा से ही आरंभ करना चाहिए। उसको इतना अवसर देना चाहिए कि वह अपनी मातृभाषा (जो सामान्यतः कोई स्थानीय भाषा होती है) से सहज रूप से मानक भाषा पर आ सके। बिना दबाव महसूस किए तथा बिना अपनी भाषा को हीन तथा त्याज्य महसूस किए।

ये भाषा-शिक्षण के बारे में सामान्य दिशा निर्देश हैं। अब विशेष रूप से पढ़ने-लिखने के बारे में विचार करने की ज़रूरत है। जैसा कि पहले कह चुके हैं मौखिक भाषा एक श्रव्य-प्रतीक तंत्र है इसी की तुलना में हम लिखित भाषा को दृश्य-प्रतीक तंत्र कह सकते हैं। पर यह एक बड़ी भूल होगी। भाषा को दृश्य-प्रतीक तंत्र कहने का अर्थ होगा कि दृश्य-प्रतीकों (अक्षराकृतियों) से हम सीधे अर्थ तक पहुँच सकते हैं। पर यह बात सही नहीं है अक्षराकृतियों से हम केवल ध्वनियों तक पहुँचते हैं। अर्थ का संबंध अक्षराकृतियों से नहीं बल्कि ध्वनि समूहों (शब्दों) से है। वास्तव में हम पढ़ने से पहले अक्षराकृतियों की ध्वनियों के रूप में व्याख्या करते हैं। और फिर ध्वनियों की सार्थक व्याख्या करते हैं। अर्थात् पढ़ने में हम दो भिन्न-भिन्न तंत्रों का क्रम से उपयोग करते हैं। इस सामान्य-सी बात को, जिसे सब जानते हैं, यहाँ इस प्रकार रेखांकित करके लिखने के दो कारण हैं। पहला, यह ठीक है कि इस बात को सब जानते हैं। पर साथ ही विद्यालयों में 'पढ़ना' सिखाने के तरीकों को और उन परिणामों को देखें तो पाएँगे कि वास्तव में पढ़ना सीखते समय इसको लगभग सभी लोग भूल जाते हैं। पढ़ना सिखाते समय सारा जोर अक्षराकृतियों की ध्वनियों के रूप में व्याख्या करके शब्दोच्चारण सिखा देने पर होता है। नतीजा यह होता है कि बालक पुस्तक को देखकर लिखे अनुसार उच्चारण करना सीख जाता है। शिक्षक मान लेता है कि वह पढ़ना सीख गया। वास्तव में उसने लिखे को देखकर उच्चारण मात्र किया

। डी.एल.एड. (द्वितीय वर्ष)

है, उसे अर्थ से तो जोड़ा ही नहीं अर्थात् उसने लिपि को एक 'अव्याख्यायित औपचारिक तंत्र के रूप में सीखा है दूसरा कारण इससे संबंधित है। अव्याख्यायित औपचारिक तंत्रों पर अधिकार प्राप्त करने में किसी गणितज्ञ या तर्कशास्त्री की तो रुचि हो सकती है, पर सामान्य बालकों को यह निरर्थक कवायद लगती है और वे इसे पसंद नहीं करते। अतः हम जैसा पढ़ना सिखाना चाहते हैं उसे भी वे बीच में ही छोड़ देते हैं।

कुछ प्रश्न :

- लिखित भाषा सीखना, मौखिक भाषा से कठिन क्यों लगता है? समझाइए।

इस समस्या से उबरने के लिए पढ़ना सार्थक रूप से सिखाना पड़ेगा। सार्थक रूप से पढ़ने का अर्थ है लगातार दो व्याख्याएँ साथ-साथ करते जाना। पहले अक्षराकृतियों को देखकर उनसे ध्वनियाँ बनाना। फिर ध्वनियों से अर्थ निकालना। कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि लिखित प्रतीक चिहनों (अक्षरों) से सीधे अर्थ तक पहुँचना पढ़ने की क्रिया है। यह बात स्पष्टतः गलत है अक्षर मात्र ध्वनियों से जोड़ते हैं और ध्वनियाँ अकेली अपने आप में अर्थहीन हैं। इस भ्रामक धारणा का कारण यह है कि सक्षम पाठक अपने पढ़ने की क्रिया में शब्दोच्चार नहीं करता। पूर्णतया मूक पठन द्वारा लिखित का अर्थ ग्रहण करता है पर यह स्थिति बहुत अभ्यास के बाद आती है। होता मात्र यह है कि सक्षम पाठक ने इस दक्षता में वह स्तर प्राप्त कर लिया है जहाँ बीच के चरण को वह अनदेखा कर सकता है।

जो भी हो पढ़ना सीखने के लिए लिपि पर अधिकार आवश्यक है लिपि मौखिक भाषा से कहीं अधिक औपचारिक तंत्र है। इसके नियम मौखिक भाषा से कम लचीले होते हैं। इन पर अधिकार के लिए व्यवस्थित अभ्यास आवश्यक है। इसके बिना समय अधिक लगेगा और गलतियाँ अधिक रहेंगी।

इस सबको देखते हुए हम पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए एक और दिशा-निर्देश प्राप्त कर सकते हैं। पढ़ना-लिखना सीखने के लिए पर्याप्त सुव्यवस्थित अभ्यास होना चाहिए। पर उस अभ्यास को सार्थक व रुचिकर तरीके से करना आवश्यक है।

ये बहुत मोटे-मोटे निष्कर्ष हैं। अभी इनका भाषा-शिक्षण की प्रक्रिया के स्वरूप पर ठीक-ठीक क्या प्रभाव पड़ेगा यह बहुत स्पष्ट नहीं है। इन निष्कर्षों को वास्तविक परिस्थितियों, आवश्यक दक्षताओं, क्षमताओं आदि से जोड़कर देखने पर हमें दिशा मिल सकेगी। इन अन्य चीजों का जिक्र यथास्थान करना ही उचित होगा।

सभार : रोहित धनकर

कुछ प्रश्न :

- मौखिक भाषा जितनी तेज़ बदलती है लिखित भाषा उतनी तेज़ी से नहीं बदलती है इसके क्या कारण हैं?
- पढ़ने का मतलब सिर्फ अक्षराकृतियों की ध्वनियाँ निकालना मात्र है या और कुछ है? समझाइए।

* अव्याख्यायित- यहाँ इसका संदर्भ लिपि संकेतों (अ,आ, कमल.....) को अर्थ देने से है। लेखक कहते हैं कि बच्चे पढ़ने वक्त लिपि संकेतों का उच्चारण कर लेते हैं जैसे कमल लेकिन कमल माने क्या? यह उनका पता ही नहीं होता।



इकाई-3

पुस्तकालय एवं बाल-साहित्य

अध्याय : 9. पुस्तकालय का उपयोग क्यों व कैसे :

अध्याय : 10. कक्षा में अन्य पुस्तकें :

अध्याय : 11. कहानी कथन कौशल :

अध्याय : 12. बाल साहित्य :

अध्याय : 13. क्या-क्या हो बच्चों की एक किताब में :

अध्याय : 14. संकलित बात साहित्य एवं गतिविधियाँ :

अध्याय – 9

पुस्तकालय का उपयोग क्यों व कैसे

परिचय—

यह तो सर्वविदित है कि 'पुस्तकें मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वाधिक विश्वसनीय मित्र हैं।' जिस व्यक्ति को पुस्तकों से लगाव है वह कभी भी स्वयं को एकाकी व कमजोर अनुभव नहीं कर सकता।

किसी भी समाज एवं राष्ट्र के उत्थान में पुस्तकालयों का अपना विशेष महत्व है। सभी को पुस्तकें उपलब्ध हों यह सुनिश्चित करने के लिए पुस्तकालय की अहम् भूमिका है। अतः प्राथमिक स्तर से ही प्रत्येक विद्यालय में पुस्तकालय होना नितान्त आवश्यक है। जिससे शुरुआत से ही बच्चों को पुस्तकों से लगाव हो, उनकी पुस्तकों से मित्रता हो, पढ़ने में रुचि हो। वे कुशल पाठक बने, उनकी सोचने, समझने, कल्पना करने की क्षमताओं में वृद्धि हो। यह स्थापित सत्य है कि अधिकतर अच्छे चिन्तनशील व्यक्ति कुशल पाठक भी होते हैं।

इस अध्याय में पुस्तकालय की उपयोगिता महत्व एवं संचालन से सम्बन्धित मुख्य बिन्दुओं पर चर्चा की गई है। साथ ही कक्षा-कक्षा के अनुभवों के आधार पर विभिन्न गतिविधियों को संचालित करने के तरीकों पर विस्तार से बातचीत की गई है।

उद्देश्य—

पुस्तकालय के उपयोग एवं महत्व को समझना

- पुस्तकालय के प्रमुख घटकों/कारकों को समझना।
- विद्यालय स्तर पर पुस्तकालय के कुशल संचालन की प्रक्रिया को समझना।
- कक्षा-कक्षा के अनुभवों के आधार पर विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से पुस्तकालय के उपयोग का समझना।
- पढ़ना-लिखना सीखने-सिखाने में पुस्तकालय की भूमिका समझ पाएँगे।
- पढ़ने की रुचि बढ़ाने में पुस्तकालय के महत्व को समझ पाएँगे।
- पुस्तकालय के रख-रखाव में बच्चों की भागीदारी कैसे हो? पर समझ बना पाएँगे।

1. पुस्तकालय क्या होता है?

एक निश्चित स्थान पर विभिन्न पाठ्य संसाधनों व सेवाओं के संग्रह को पुस्तकालय कहा जाता है, जिसको किसी सरकारी संस्थान, निकाय या किसी व्यक्ति की देख-रेख में चलाया जाता है। एक पुस्तकालय की सांस्कृतिक परिभाषा के हिसाब से, "यह किताबों का एक ऐसा संग्रह है जिसका कोई भी व्यक्ति अपनी रुचियों और जरूरतों के हिसाब से इस्तेमाल कर सकता है।" पुस्तकालय की एक और परिभाषा के मुताबिक यह, "सार्थक पाठ्य सामग्री का एक ऐसा संग्रह

है जिसका आम लोग इस्तेमाल कर सकते हैं।”

2. स्कूल पुस्तकालय क्या होता है?

स्कूल में चलने वाले पुस्तकालय को स्कूल पुस्तकालय कहा जाता है और स्कूल के विद्यार्थी, अध्यापक/अध्यापिकाएँ, अन्य कर्मचारी और बच्चों के अभिभावक इसका स्वेच्छापूर्वक प्रयोग कर सकते हैं। स्कूल पुस्तकालय का मुख्य उद्देश्य यह है कि उससे जुड़े लोग वहाँ मौजूद किताबों और अन्य संसाधनों का उपयोग कर सकें और वे जब चाहें, जहाँ चाहें उन किताबों को पढ़ सकें। उनके पास पुस्तकालय में उपलब्ध विभिन्न अधिसूचनाओं, जानकारीयों और संचार प्रौद्योगिकियों तक भी पूरी पहुँच होनी चाहिए।

3. स्कूल में पुस्तकालय का महत्व

स्कूल में एक पुस्तकालय की मौजूदगी सीखने की प्रक्रिया में बहुत गहरा महत्व रखती है। स्कूल पुस्तकालय बच्चों की जिज्ञासा को बढ़ाने और समस्या समाधान में एक अहम भूमिका अदा करता है। स्कूल में पुस्तकालय का समुचित उपयोग हो तो उससे विद्यार्थियों की समझदारी और सफलताओं में गहरा फर्क पैदा हो जाता है और पूरे स्कूल में पढ़ने – पढ़ाने और सीखने की प्रक्रियाओं को बल मिलता है। स्कूल का पुस्तकालय स्कूल के सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन में एक गहरी भूमिका अदा करता है। पुस्तकालय विभिन्न प्रकार की पठन प्रक्रियाओं, सांस्कृतिक गतिविधियों, सूचनाओं तक पहुँच, ज्ञान, सूचना व जीवंत चर्चा के लिए एक केंद्रबिंदु हो सकता है।

यूनेस्को के मुताबिक, “स्कूल का पुस्तकालय ऐसी जानकारीयों और विचारों का स्रोत होता है, जो आज के सूचना एवं ज्ञान आधारित समाज में सफलतापूर्वक काम करने के लिए आधारभूत महत्व रखता है। स्कूल का पुस्तकालय विद्यार्थियों को जीवन भर सीखते जाने के कौशल से लैस करता है और उनमें कल्पनाशीलता विकसित करता है, उन्हें जिम्मेदार नागरिकों के रूप में जीवन निर्वाह करने के योग्य बनाता है।” स्कूल में पुस्तकालय के महत्व को इन बिंदुओं के आधार पर और बेहतर ढंग से समझा जा सकता है—

- (क) प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के भीतर पढ़ने के प्रति लगाव पैदा करना।
- (ख) पढ़ने में रुचि और पढ़ने की आदत विकसित करना।
- (ग) विद्यार्थियों को अलग-अलग तरह के साहित्य को पढ़ने के मौके प्रदान करना।
- (घ) पाठ्यचर्या संबंधी शीर्षकों पर ज्ञानवर्धन करना।
- (च) बच्चों में मुद्रित सामग्री के प्रति लगाव पैदा करना।
- (छ) पाठ-योजना तैयार करते समय अध्यापकों को किताबों के इस्तेमाल में मदद देना।
- (ज) साक्षरता संबंधी गतिविधियाँ संचालित करना।

1. डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

4. स्कूल पुस्तकालय के संचालन में सहायक कारक

प्राथमिक स्कूल में पुस्तकालय का मुख्य उद्देश्य बच्चों में पढ़ने की आदत विकसित करना है। पुस्तकालय के सफलतापूर्वक संचालन के महत्वपूर्ण कारक इस प्रकार हैं—

- एक ऐसा साक्षर वातावरण जो पढ़ने की आदत को प्रोत्साहित करे
- उपयुक्त पाठ्य सामग्री की उपलब्धता
- पाठ्य सामग्री तक बच्चों की पहुँच
- पढ़ने का निश्चित एवं पर्याप्त समय
- शिक्षकों का व्यावसायिक विकास
- समुदाय एवं परिवारों की सहभागिता

5. किताबों का स्तरीकरण

स्तरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें किताबों को इस तरह श्रेणीबद्ध किया जाता है कि विद्यार्थी, अध्यापक, अभिभावक सभी अपनी रुचि के हिसाब से किताबों को आसानी से चुन सकें।

स्तरीकरण कई प्रकार से किया जा सकता है, कठिनाई के स्तरानुसार— जिसमें वाक्यों की संख्या, चित्रों के प्रकार और उनकी स्पष्टता तथा शब्दों की कठिनाई के आधार पर किताबों का स्तर या श्रेणी तय की जाती है।

विधाओं के अनुसार जैसे—कहानी, कविता, नाटक, चित्रा कथा आदि। विषयों के अनुसार जैसे—इतिहास, भूगोल, विज्ञान, साहित्य आदि। इन श्रेणियों को आसानी से याद रखने के लिए इनके रंग भी तय किए जा सकते हैं।

6. स्टॉक रजिस्टर्स में किताबों की प्रविष्टि

पुस्तकालय में आने वाली किताबों को बुक स्टॉक रजिस्टर में दर्ज किया जाना चाहिए। इसका आदर्श तरीका ये है कि हर किताब और पाठ्य सामग्री को अलग-अलग संख्या दी जाए। अगर किसी किताब की एक से अधिक प्रतियाँ हैं तो प्रत्येक प्रति को भी अलग-अलग संख्या दी जाएगी। स्टॉक रजिस्टर में कोई भी सूचना दर्ज करने से पहले स्कूल प्रधानाचार्य को रजिस्टर के उन पन्नों का प्रमाणन करना चाहिए। किताब को स्टॉक रजिस्टर में दर्ज करने के बाद उसको पुस्तकालय में लेनदेन के लिए उपलब्ध करवाया जाना चाहिए। स्टॉक रजिस्टर में किताबों के संख्या निर्धारण के लिए पुस्तकालय की एक मुहर भी होनी चाहिए।

7. पाठ्य सामग्री का डिस्प्ले/प्रदर्शन

बच्चों को आसानी से किताबें मुहैया कराने के लिए पाठ्य सामग्री का सही ढंग से डिस्प्ले करना बहुत जरूरी है। किताबों को सही ढंग से डिस्प्ले यह सुनिश्चित करता है कि पुस्तकालय सबके लिए उपलब्ध और खुला है। किताबों को बुक रैक, जूट की पुस्तक प्रदर्शन इकाई और रस्सियों के सहारे भी प्रदर्शित किया जा सकता है।

8. बुक रैक में किताबों का डिस्प्ले

- किताब का कवर पेज रैक के खुले हुए पक्ष की तरफ यानी सामने की तरफ होना चाहिए।
- किताबों का कवर पेज एक पारदर्शी जिलेटिन की शीट से ढका होना चाहिए ताकि किताबें सुरक्षित रहें। किताबों को सुरक्षित रखने के लिए उन पर जिलेटिन कवर की बाइंडिंग ही अच्छी रहती है।
- डिस्प्ले के लिए रखी गई किताबों पर जिलेटिन का कवर चढ़ा होना चाहिए।
- डिस्प्ले पर रखी गई किताबों को हर 8–10 दिन में बदलते रहना चाहिए।
- किताबों को इस तरह प्रदर्शित करें कि बच्चे आसानी से उन्हें उठा सकें।
- डोरी पर किताबों को प्रदर्शित करना
- कील या हुक के सहारे दीवार के समानांतर डोरी बाँध दें।
- यह डोरी दीवार से सटी नहीं होनी चाहिए। उसे दीवार से कुछ इंच दूर रखा जाना चाहिए ताकि दीवार की नमी किताबों को खराब न कर सके।
- इस जगह पर्याप्त रोशनी होनी चाहिए।
- दीवार पर जगह हो तो एक से ज्यादा डोरियाँ भी बाँधी जा सकती हैं।
- डोरी इतनी ऊँचाई पर हो कि बच्चे आसानी से किताबों को छू सकें।
- किताबों का एक दूसरे के ऊपर ढेर न लगाएं और डोरियों पर भारी किताबें प्रदर्शित न करें।
- डोरी को कस कर बांधें।

9. पोस्टर्स का डिस्प्ले

- पोस्टर्स को किसी ऐसी जगह प्रदर्शित करें जहाँ वह बच्चों की ऊँचाई पर हों और वे पोस्टर पर अपनी उँगली रख कर कविताओं को पढ़ सकें या चित्रों को छू कर देख सकें।
- पोस्टर्स को फ्रेम करके भी दीवार पर लगाया जा सकता है ताकि आप उन्हें आसानी से अदल-बदल सकें। पोस्टर्स का फ्रेम लकड़ी, प्लाईवुड या थर्मोकोल का बना हो सकता है।
- किसी भी दीवार पर 2–3 से ज्यादा पोस्टर न लगाएं। पोस्टर्स के बीच उपयुक्त फासला होना चाहिए।

10. पुस्तकालय प्रभारी का चयन

अधिकतर प्राथमिक विद्यालयों में लाइब्रेरियन या पुस्तकालय अधीक्षक का पद नहीं होता। सभी शिक्षक आवश्यकतानुसार पुस्तकालय का उपयोग करते हैं किन्तु व्यवस्था की दृष्टि से स्कूल में पुस्तकालय के सहज और प्रभावी संचालन के लिए एक पुस्तकालय प्रभारी का चुनाव जरूरी होता है।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

उसकी निश्चित भूमिका एवं दायित्व निर्धारित होने चाहिए। नियमित रूप से निर्धारित समय पर पुस्तकालय की गतिविधियों, अनुभवों का आदान प्रदान एवं संचालन की गुणवत्ता की समीक्षा होनी चाहिए।

11. पुस्तकालय प्रबंधन समिति का गठन

बच्चों में पुस्तकालय के प्रति अपनेपन का भाव पैदा करने के लिए हमें पुस्तकालय के कामों में उनकी सहभागिता बढ़ानी चाहिए। रीडिंग क्लब या पुस्तकालय बाल प्रबंधन समिति के गठन के पीछे यही मुख्य सोच है। इसमें समिति के प्रत्येक सदस्य को पुस्तकालय संचालन के प्रमुख कार्यों की जिम्मेदारी दी जाती है जैसे— पुस्तकों का वितरण, रजिस्टर संधारण, पुस्तकों का डिस्प्ले या प्रदर्शन, पुस्तकों पर आधारित गतिविधियों के दौरान बच्चों द्वारा बनाए/लिखे गए चित्रों/विचारों का डिस्प्ले आदि। इससे बच्चों को ये लगने लगता है कि ये हमारा पुस्तकालय है और उनमें किताबों से लगाव और पढ़ने का शौक पैदा होता है।

पुस्तकालय के प्रभावी संचालन के लिए बेहद ज़रूरी है बच्चों को पुस्तकों से रूबरू होने के भरपूर मौके दिये जाएँ। बच्चे अपनी पसंद की पुस्तकें स्वयं चुन सकें।

प्राथमिक स्तर पर बच्चों की किताबों से दोस्ती हो। वो कहानियाँ सुने सुनाये, पात्रों के बारे में बात करे, कहानी को अपने शब्दों में बोल पाएँ, चित्र बना पाएँ। इसके लिए बहुत सी गतिविधियाँ आयोजित करनी होंगी।

माध्यमिक स्तर पर विषयों के अनुसार स्रोत सामग्री की तरह भी पुस्तकों का उपयोग होता है। पुस्तकालय ज्ञानवर्धन एवं मनोरंजन दोनों के लिए अत्यंत उपयोगी है।

(पुस्तकालय के अनुभव के लिए लेख पढ़ें)

कुछ प्रश्न :

- आपका पुस्तकालय से संबंधित कोई अनुभव हो तो अपने दोस्तों के साथ बाँटें।
- आपने पिछले एक वर्ष में कौन-कौन सी किताबें या पठन सामग्री पढ़ी हैं? इसमें से किन्हीं चार के नाम लिखिए।
- कौन-सी किताब आपको सबसे अच्छी लगी और क्यों?



अध्याय – 10

कक्षा में अन्य पुस्तकें

परिचय :

एक छोटा अध्ययन जो इस विषय पर एक शिक्षिका ने किया था उसको हमने इस इकाई में सम्मिलित किया है। आप भी अपनी कक्षा में ऐसा अध्ययन करके यह समझने का प्रयास कर सकते हैं कि पढ़ने व भाषाई क्षमताओं में क्या संबंध है? शोध के निष्कर्षों के साथ-साथ यदि गहराई से इस मुद्दे पर विचार करें तो भी पुस्तकों को पढ़ने व भाषाई क्षमताओं के संबंध में दो-तीन बातें मानी जा सकती हैं। वह यह कि इंसान की प्रकृति हमेशा कुछ नया जानने व करने की होती है और पुस्तकें इसका एक ज़रिया बन सकती हैं, दूसरा पढ़ने से ही पढ़ना आता है और पढ़ने की आदत बनाने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि बहुत सी पुस्तकें पढ़ने व उन पर बातचीत के मौके उपलब्ध हों।

उद्देश्य :

- भाषा शिक्षण में कक्षा-कक्ष पुस्तकालय के महत्त्व को समझ पाएँगे।
- पाठ्यपुस्तक के बाहर की सामग्रियों का भाषा शिक्षण में उपयोग को समझ पाएँगे।
- कक्षा-कक्ष पुस्तकालय में बच्चों के योगदान में महत्त्व को समझ पाएँगे।

पिछले लेख में हमने पुस्तक संस्कृति से जुड़ी ज़रूरी समस्याओं और साधनों आदि प्रश्न पर गौर किया। ये सही हैं कि समस्याएँ रही हैं और काफी व्यापक तौर पर रही हैं परन्तु यह भी सही है कि इनका हल भी हमें ही निकालना है और शायद यही छोटे प्रयास हमें और हमारी पुस्तकालय संस्कृति को वहाँ ले जाए जहाँ हमें होना चाहिए। ऐसा ही एक प्रयास यहाँ पर वर्णित किया जा रहा है। जहाँ पर शिक्षिका ने यह कोशिश की कि यदि बच्चे किताबों के पास नहीं जाते या जा पाते तो किस तरह से किताबों को बच्चों के पास ले जाया जा सकता है। विद्या भवन बुनियादी माध्यमिक विद्यालय की प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ाने वाली अध्यापिका श्रीमती शहनाज के अपने कक्षा पुस्तकालय के बारे में अनुभव इस प्रकार हैं—

मेरा स्कूल विद्या भवन बुनियादी माध्यमिक विद्यालय, रामगिरि गाँव में स्थित है। और उदयपुर शहर से 7 किलोमीटर दूर है। विद्यालय में इस समय 411 विद्यार्थी कक्षा 1 से 10 तक अध्ययन कर रहे हैं। स्कूल में आस-पास के 8 गाँव से विद्यार्थी आते हैं। मैं पिछले तीन वर्षों (2005) से अपनी कक्षा तीसरी और चौथी के बच्चों को दीगर किताबें देने का कार्य कर रही हूँ। इस संदर्भ में सबसे पहले अपने स्कूल में आनेवाले बच्चों के बारे में बताना चाहती हूँ।

विद्यालय आनेवाले अधिकांश बच्चे निम्न-मध्यम वर्गीय परिवारों से हैं। अधिकतर बच्चों के माता-पिता खेती, दूध बेचने का, ड्राइविंग और मज़दूरी जैसे व्यवसायों से जुड़े हैं। इसलिए बच्चों की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति करना ही कई बार उनके लिए मुश्किल होता है। ऐसी स्थिति में कोई अन्य खर्च नहीं उठा पाते हैं। अतः घर में पाठ्यपुस्तकों के अलावा किसी और पुस्तक के होने की कोई संभावना नहीं होती और न ही उनके

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

माता-पिता पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त पुस्तकों की आवश्यकता समझते हैं।

माता-पिता का शैक्षिक स्तर भी 8 वीं से 12 वीं तक का है। इस कारण वे पढ़ाई में पुस्तकालय के महत्त्व को भी बेहतर तरीके से नहीं जान पाते। पाठ्यपुस्तकें पढ़कर अच्छे अंक लाना ही बच्चों का काम है। इसके अतिरिक्त किसी अन्य पुस्तक की आवश्यकता बच्चों को नहीं है, वे ऐसा सोचते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चों की भाषा की समझ नहीं बन पाती और उनसे पाठ्यपुस्तकों को पढ़कर समझने की उम्मीद नहीं की जा सकती।

कक्षा में बच्चों की पढ़ने और समझने की समस्या को लेकर बहुत परेशानी होती है। वर्ष 2005 में चौथी कक्षा के साथ काम करते हुए मुझे बहुत दिक्कत हो रही थी। मेरी कक्षा में तीन बच्चे ऐसे थे जिन्हें अक्षर-ज्ञान ही था और वे शब्द नहीं पढ़ पाते थे। कई बच्चे ऐसे

थे जो शब्दों का उच्चारण तो कर लेते थे परन्तु अर्थ समझना उनके लिए संभव नहीं था। इनकी पढ़ने की समस्या दूर करने के लिए मेरे दिमाग में बार-बार एक ही विचार आता कि इनकी पढ़ने की रुचि बढ़े और ये किताबों की तरफ आकर्षित हों लेकिन कैसे? क्योंकि उनके पास पढ़ने के लिए केवल पाठ्यपुस्तकें ही थीं। वो भी एकदम नीरस और बेजान जिसे बार-बार पढ़ना, बच्चों की किताबों से दूरी को और बढ़ा रहा था। घर पर उनके पास कोई किताब होती नहीं है, लाइब्रेरी उन्होंने कभी देखी नहीं, स्कूल की लाइब्रेरी में भी छोटे बच्चों के लिए कोई किताब नहीं होती और न ही रीडिंग का कोई पीरियड दिया जाता है। ऐसे हालात में उनकी पढ़ने की क्षमता को बेहतर करने के लिए मुझे एक रास्ता दिखाई दिया। मैंने अपनी स्कूल की लाइब्रेरी में चकमक की पुरानी किताबें देखी थीं जिनको मैं क्लास में ले आई। बच्चों से कहा कि ये आपके लिए हैं। जब चाहो पढ़ना। ये सुनकर बच्चे चकमक पर टूट पड़े। ऐसा लगा जैसे किसी भूखे को खाना मिल गया हो। मैंने सोचा कि जब ये बच्चे पढ़ने को इतने लालायित हैं तो इनकी इस रुचि को क्यों नहीं बढ़ाया जाए? मुझे लगा कि इनके लिए मुझे क्लास में ही किताबें लाने का इन्तज़ाम करना पड़ेगा। और मैंने अपनी कोशिश शुरू कर दी। स्कूल की प्रमुख लाइब्रेरी से मैंने कुछ बच्चों के पढ़ने लायक किताबें छाँटी और उनको अपनी क्लास में रख दिया। ये किताबें मेरे नाम से इश्यू की गई थीं इसलिए इनके खोने की जिम्मेदारी भी मेरी थी। बच्चे इस बात को समझ रहे थे और वे उसे क्लास में पढ़कर, सँभालकर रख देते। धीरे-धीरे अधिकांश बच्चों का रुझान किताबों की तरफ बढ़ने लगा और वे मन लगाकर पढ़ने लगे। कुछ बच्चे किताबों की तरफ ध्यान नहीं देते थे क्योंकि उनको किताब पढ़ना ही नहीं आता था। मैंने उनके साथ कुछ गतिविधि करना शुरू किया।



चकमक के 'खिलौने का पन्ना' और 'कागज़ से बनाओ' वाले पेज से उनको परिचित करवाया और कुछ चीज़ें बनाकर दिखाई जिससे वे बिना निर्देश पढ़े भी संकेतों को समझकर कुछ-कुछ चीज़ें बनाने लगे और किताबों को हाथ में लेने लगे। इससे उनकी किताबों से दूरी कुछ कम हुई।

मैंने अपनी कक्षा के एक कोने में टेबल पर किताबों को एक साथ रख दिया क्योंकि शुरुआत में मेरे पास केवल चकमक किताबें ही थी इसलिए उसे छाँटने की कोई ज़रूरत नहीं थी। बच्चों को सप्ताह के तीन दिन ही केवल एक-एक पीरियड पढ़ने के लिए दिया गया था। परन्तु वे जब भी कक्षा में विषय का अपना काम कर चुके होते तो उन्हें किताबें देखने की छूट थी।

कुछ सप्ताह बाद मुझे लगने लगा कि बच्चों का किताबों से मन भर गया है क्योंकि उनके पास एक ही तरह की किताबें थीं जो सभी की रुचि और पसंद के अनुसार नहीं थी। तब मैंने बच्चों का ध्यान आकर्षित करने के लिए चकमक से कुछ गतिविधि करवानी शुरू की। बच्चों के साथ मिलकर मैंने वर्ग-पहेली हल की, 'कागज़ से बनाओ' के तहत हमने मिलकर चीज़ें बनाई, 'अपना खिलौना बनाओ' वाली एक्टिविटी उन्होंने घर ले जाकर भी की। इस तरह कुछ सप्ताह बच्चे किताबों में लगे रहे। इसी बीच जो बच्चे पढ़ने से जी चुराते थे वे धीरे-धीरे थोड़ा पढ़ने लगे और जो पहले से थोड़ा पढ़ते थे उनकी पढ़ने की गति बढ़ने लगी।

अब बच्चे अगली कक्षा में आ गए थे और यहाँ की भी टीचर मैं ही थी। क्लास लाइब्रेरी के काम को आगे बढ़ाने के लिए इस साल (2006) भी मुझे ही काम करना था। अब तक यह बात स्पष्ट रूप से समझ में आ गई थी कि कुछ बच्चे जिन्हें पढ़ना नहीं आता है वे भी किताबों में कम से कम चित्र तो देखते हैं और चित्रों को पढ़ते हैं, चित्रों पर बातचीत करते हैं। इसलिए उनके लिए वे किताबें ज़्यादा उपयोगी थीं जिनमें केवल चित्र हों और लिखा हुआ कम हो। अब दूसरे प्रकार के बच्चे जिन्हें पढ़ना तो आता था परन्तु उनको पढ़ी गई बात समझ में नहीं आती थी इसलिए चकमक में उनकी कोई ज़्यादा रुचि नहीं थी। उसमें से वे केवल सरल कविताएँ ही पढ़ते थे। कोई भी लम्बा पाठ्य या बड़ी कहानी बच्चे नहीं पढ़ पाते थे। और तीसरी तरह के बच्चे जो पढ़ा हुआ समझ भी पाते थे, उनकी संख्या काफी कम थी लेकिन इनकी रुचि सब तरह की किताबों में थी। वे कविताएँ, कहानियाँ, विज्ञान की बातें, वर्ग-पहली, नाटक आदि सभी तरह की रचनाओं को पढ़ने में रुचि दिखाते थे।

इस प्रकार अलग-अलग तरह के बच्चों के लिए मैंने स्कूल की प्रमुख लाइब्रेरी से तीन-चार प्रकार की किताबें छाँटीं जिनमें केवल चित्रवाली (गुब्बारा, कौवा, आम), सरल कहानियोंवाली (नाव चली, बिल्ली के बच्चे आदि) और सीबीटी, एनबीटी आदि की कहानियों की किताबें थीं परन्तु इन सब किताबों की संख्या बहुत ही कम थी। किताबों की देखभाल की ज़िम्मेदारी बच्चों ने अपने ऊपर ले ली। वे अपने पढ़ने के समय में किताबें लेकर पढ़ते और उसे सँभालकर फिर रखते क्योंकि किताबें ज़्यादा नहीं थीं, इसलिए फटते ही फिर वे इसे चिपका देते और रैक पर रख देते। वे जानते थे कि वे ऐसा नहीं करेंगे तो उन्हें पढ़ने के लिए किताबें मिलना मुश्किल है।

जब बच्चों को पढ़ने में मज़ा आने लगा तो वे किताबों को घर ले जाने की माँग करने लगे। मैं तो यही चाहती थी कि उनके साथ-साथ उनके घर के लोग भी इसका फ़ायदा उठा सकें। इस काम को मैंने कक्षा मॉनिटर और रोल नंबर से एक-एक की मदद से किया। एक रजिस्टर में बच्चों के नाम का हर पेज

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

लिख दिया और पूरे महीने वे जितनी किताबें घर ले जाते उसका रिकॉर्ड रजिस्टर में रखते। यह काम ज़्यादा नहीं चल पाया। बच्चों ने बताया कि इश्यू करनेवाले को पढ़ने का समय ही नहीं मिल पाता है। इसलिए इस प्रक्रिया को बदलना पड़ा। फिर बच्चे कौन-कौन सी किताबें घर ले गए उनका रिकॉर्ड भी मैं ही रखती। लेकिन बच्चे कई बार किताबें लाना भूल जाते और इस तरह से साल के अंत में कुछ किताबें खो गईं। इस वजह से लाइब्रेरियन मुझ पर नाराज़ भी हुईं।

जब बच्चों ने किताबों के साथ लापरवाही बरती तो उन्हें इस बात का एहसास कराना ज़रूरी था कि वे ग़लत काम कर रहे हैं। इसलिए मैंने सोचा कि जो किताबें खो गईं वो सबसे आखिरी बार किसे दी गई थी वो उसे जमा कराएँ तभी उसे नई किताब मिलेगी। जब तक किताब जमा नहीं करते तब तक केवल क्लास में पढ़ सकते हैं घर नहीं ले जा सकते। इसका कुछ प्रभाव पड़ा और बच्चे किताबें लाना याद रखने लगे।

प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों का किसी भी चीज़ से मन जल्दी भर जाता है और वे फिर उससे बेरुखी दिखाने लगते हैं। इसलिए मैं पूरे सालभर की किताबें एक साथ क्लास में नहीं लाती थी। पत्रिकाओं की तो हर महीने एक-एक कॉपी नई आ जाती थी साथ ही सीबीटी और एनबीटी की किताबें भी। मैं 30-30 का सेट पूरा बदल करके लाइब्रेरी से नया ले आती जिसमें तरह-तरह की कहानियाँ आदि होती हैं। मैंने अभी तक किताबों को इससे ज़्यादा श्रेणियों में नहीं डाला था और मेरे पास ज़्यादा किताबों को रखने की जगह भी नहीं थी, न ही पैसा था। इसलिए हर बार, हर बच्चे की पसन्द को ध्यान में रखते हुए मुझे किताबों का चयन करना पड़ता था। लेकिन हर महीने किताबें बदलने से उनकी किताबों में जिज्ञासा बनी रहती और वे नया कुछ पढ़ने के इन्तज़ार में रहते। ठीक यह बात वेलिंगटन ने लिखी है कि बच्चों का पढ़ने की तरफ़ रुझान बढ़ाने के लिए हर बार नई किताबें शामिल करना ज़रूरी है।

कक्षा पुस्तकालय की उपयोगिता केवल पढ़ने के लिए नहीं है बल्कि इसका उपयोग इससे कहीं अधिक है जैसे बच्चों के पढ़ने और लिखने के कौशल को बढ़ाना। पाठ्यपुस्तकों के अलावा छोटी कक्षा के बच्चों को और अधिक पुस्तकें उपलब्ध कराना और उनको आपस में बातचीत के अवसर उपलब्ध कराना। बच्चे स्वयं अपने स्तर पर पढ़ सकें और अपने पाठ्यक्रम का विस्तार कर सकें।

पिछले वर्ष हम कीड़ों के बारे में पढ़ रहे थे। पुस्तकालय में हमारे पास मकड़ी के बारे में एक किताब थी जिसे मैंने पढ़कर बच्चों को सुनाया। इसके बाद हर बच्चे ने उस किताब को बहुत ध्यान से पढ़ा। इसी तरह पिछले महीने हम अंग्रेज़ी की कक्षा में 'जंतुओं के बच्चे' पढ़ रहे थे। बच्चों ने कक्षा पुस्तकालय की किताबों से ढूँढ़कर वो किताब निकाल ली जिसमें कई जानवरों के उनके बच्चों के साथ चित्र थे और कुछ नए नाम उन्होंने अपने आप सीख लिए।

बच्चों को जब अपने स्तर पर पढ़ने और अपने साथियों के साथ बातचीत करने का मौका मिलता है तो शब्दों का भंडार बढ़ता है, वे कई सारे नए शब्दों को नए-नए संदर्भों में पढ़ते हैं व उनका अपने वाक्यों में प्रयोग करते हैं। साथ ही वे जितना ज़्यादा पढ़ते हैं उतनी ही उनकी समझ बढ़ती है जिससे उनको अपनी पाठ्यपुस्तकों को समझने में भी मदद मिलती है। जब बच्चे स्वयं अपने हिसाब से पढ़ते हैं तो उन्हें बार-बार पढ़ने पर कोई रोकता नहीं है, उनकी ग़लतियों पर उन्हें कोई टोकता नहीं है। इसलिए वे अपनी मन-पसन्द चीज़ों को पढ़ने का आनंद ले सकते हैं। इसके विपरीत जब उन्हें कक्षा में रोक-टोककर पढ़ाया जाता है तो

पढ़ना उनके लिए नीरस हो जाता है।

पठन का असर उनकी लेखन क्षमता पर भी दिखाई देता है। जो बच्चे कम किताबें पढ़ते हैं वे लिखने में हिचकिचाते हैं, उनके विचारों की अभिव्यक्ति ठीक से नहीं हो पाती है लेकिन ज़्यादा किताबें पढ़नेवाले विद्यार्थी अपने विचारों को बेहतर तरीके से व्यक्त कर पाते हैं।

कक्षा पुस्तकालय का लगातार दो साल तक उपयोग करनेवाले बच्चों की भाषा पर क्या प्रभाव पड़ा इसे समझने हेतु एक लघु शोध बच्चों के साथ किया गया जिसमें उन्हें एक क्लोज़ टेस्ट दिया गया। इसमें बच्चों को पैराग्राफ को पढ़ने के बाद उसमें छूटे हुए शब्दों को पूरा करना था। इस टेस्ट को करनेवाले बच्चों की भाषा के क्लोज़ टेस्ट के अंक को उनके द्वारा पढ़ी गई किताबों की संख्या से संबंध देखा गया। जिन बच्चों ने ज़्यादा किताबें पढ़ीं उन्होंने क्लोज़ टेस्ट में ज़्यादा अंक अर्जित किए। इन्हीं बच्चों का गणित के इबारती सवाल को पढ़कर हल करने का संबंध जाँचा गया जिसमें गणित की संक्रिया का मतलब उनकी समझ में आया कि नहीं। इसमें भी किताबों में रुचि रखनेवालों ने गणित में अधिक अंक प्राप्त किए थे। इससे यह बात समझने में मदद मिलती है कि बच्चों की भाषा की समझ पढ़ने से ही बेहतर होती है और इसका प्रभाव अन्य विषयों पर भी दिखाई देता है।

इसी कार्य को आगे बढ़ाते हुए मैंने पढ़ने का असर लेखन क्षमता पर भी देखना चाहा और पिछले वर्ष इस कार्य को बच्चों के साथ प्रारम्भ किया। पिछले वर्ष कक्षा पुस्तकालय में शामिल बच्चों का स्तर देखने के लिए उनसे कुछ विषयों पर एक-एक पैराग्राफ लिखवाए। साल के अन्त में फिर से उनसे लिखने को कहा गया तो पाया कि 6-7 वाक्य लिखनेवाले बच्चों ने साल के आखिर में उसी विषय पर 22-23 वाक्य लिखे हैं। और नए विषय पर लिखने की उनकी अभिव्यक्ति बढ़ी है। अभी इस पर आगे कार्य चल रहा है।

कक्षा पुस्तकालय में बच्चों का उत्साह बढ़ता जा रहा था परन्तु नई किताबें शामिल कहाँ से की जाएँ? क्योंकि बच्चों की किताबें कम थीं और नई लाने के लिए कोई व्यवस्था नहीं बन रही थी। अपने सहकर्मियों से भी किताबें एकत्र करने पर 15-20 से ज़्यादा किताबें इकट्ठी नहीं कर पाई। हमने किसी तरह से किताबें जुटाईं। अब हमारे पास किताबें तो हैं मगर मैं इसको लेकर हमेशा सजग रहती हूँ कि नई-नई और बढ़िया किताबें बच्चों को उपलब्ध करा सकूँ। और यह देख सकूँ कि आखिर बच्चे कैसे उनका उपयोग कर रहे हैं। कक्षा पुस्तकालय पर अध्ययन करने पर यह समझने में बेहद मदद मिली कि हमें यदि बच्चों में पढ़ने की ललक जगानी है तो उनके लिए किताबें उपलब्ध करानी ज़रूरी है।

कुछ प्रश्न :

- आप भी अपनी डी. एड. की कक्षा में एक दिन ऐसा कीजिए जैसा इस शिक्षिका ने किया। अपने पुस्तकालय से किताबें लाइए और दोस्तों के साथ पढ़िए। इस तरह पढ़ने के आपके क्या अनुभव रहे यह बड़े समूह में एक-दूसरे से बाँटिए।
- बच्चों के साथ कक्षा पुस्तकालय में की जा सकनेवाली कोई गतिविधि सोचिए, कक्षा में करवाइए और अपने अनुभव लिखिए।



कहानी कथन कौशल

परिचय :

भाषायी कौशलों के विकास में कहानी कहना किस तरह मददगार है। कहानियों का स्रोत क्या हों? कहानियाँ कक्षा-शिक्षण का रोजमर्रा का हिस्सा बने, शिक्षकों को कहानियाँ याद हों पर बल हो, नैतिक शिक्षा का उससे कुछ लेना-देना नहीं बल्कि भाषा विकास का सहायक होना, कहानी सुनने-सुनाने से अच्छे श्रोता विकसित होने की संभावना आदि बातों की चर्चा इस लेख में की गई है।

उद्देश्य :

- भाषा शिक्षण में कहानी के महत्त्व को समझ पाएँगे।
- अच्छी कहानियाँ क्या हों? पर समझ बना पाएँगे।
- कहानियाँ बच्चे की दुनिया को विस्तार देती हैं पर समझ बना पाएँगे।
- कहानी सुनाने में अंग संचालन के महत्त्व को समझ पाएँगे।

बच्चों को कहानी सुनाना वाकई एक हुनर है। आइए देखते हैं कौन-कौन सी बारीकियाँ होती हैं कहानी सुनाने में।

यह बड़े अफ़सोस की बात है कि हमारे प्राइमरी स्कूलों में पहली दो कक्षाओं के लिए प्रतिदिन कहानी सुनाने की कोई अलग 'घंटी' नहीं होती। यदि ऐसी व्यवस्था होती तो बच्चों को स्कूल में टिकाए रखने की समस्या कम-से-कम एक हद तक सुलझ जाती। बहुत से लोग कहेंगे कि मैं इस समस्या की गंभीरता की अवहेलना कर रहा हूँ। बहुत संभव है कि मेरा सुझाव सुनकर कई ऊँचे अधिकारी हिकारत के भाव से मुस्कराएँ। उनके विशाल अनुभव और प्रशासनिक ज्ञान ने यह समझ अवश्य उनके दिमाग से हटा दी होगी, जो मेरी समझ में उनके पास एक समय में ज़रूर रही होगी, कि कहानी सुनाने का बच्चों पर एक जादुई असर होता है।

यह बहुत ही गहरे अफ़सोस की बात है कि हमारी अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाएँ भी कहानी सुनाने को गंभीरता से नहीं लेतीं हालाँकि उनमें से कुछ अपने पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने के महत्त्व का ज़िक्र ज़रूर कर देती हैं।

मेरे मन में एक ऐसे दिन की कल्पना है जब छोटे बच्चों को पढ़ानेवाले हर शिक्षक से यह अपेक्षा की जाएगी कि कम-से-कम तीस पारम्परिक कहानियों पर उसका अधिकार हो। अधिकार से मेरा आशय है कि ये कहानियाँ उसे अच्छी तरह याद हों ताकि वह उन्हें इत्मीनान और आत्मविश्वास के साथ सुना सके। यह एक ऐसे समाज के लिए कोई बड़ी बात नहीं है जिसके पास हज़ारों कहानियों की एक लंबी विरासत है। तीस ऐसी कहानियाँ, जिन्हें अध्यापक अपनी मर्जी से जब चाहे सुना सके, प्राइमरी स्कूल के पहले दो दर्जों का माहौल बदलकर रख देंगी। शर्त इतनी भर है कि दैनिक पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने को एक सम्मानजनक जगह इस खातिर दी जाए कि कहानी सुनाना अपने आप में महत्त्वपूर्ण है।

कहानियाँ कहाँ से लाएँ?

पिछले पैराग्राफ में मैंने एक विशेषण का इस्तेमाल किया है जिसे मैं अब आगे बढ़ने से पहले स्पष्ट करना चाहता हूँ। मैंने लिखा है कि मैं पारम्परिक कहानियाँ सुनाने के पक्ष में हूँ। युवा अध्यापकों को कहानी सुनाने का प्रशिक्षण देने का मेरा अनुभव बताता है कि जब उनसे सुनाने लायक कहानियाँ तलाशने को कहा जाता है, तो वे प्रायः बच्चों की किसी पत्रिका में छपी हुई कहानियाँ ले आते हैं। उनमें से कुछ लोग कॉमिक्स कथाएँ उठा लाते हैं और कुछ लम्बे चुटकुले और असली घटनाओं के बयान याद करके ले आते हैं। यह सही है कि इस किस्म की सामग्री को भी 'कहानी' की श्रेणी में रखा जा सकता है, लेकिन इस तरह की प्रत्येक कहानी से हम प्राइमरी स्कूल में पढ़नेवाले छह या सात साल के बच्चों पर जादुई असर करने की उम्मीद नहीं कर सकते।

परम्परा से मिली हुई कहानियों में ऐसी विशेषताएँ होती हैं जो समकालीन कहानियों में, जिन्हें हम विविध रूपों और माध्यमों में देखते हैं, अनिवार्यतः नहीं पाई जातीं। इन विशेषताओं की चर्चा हम जल्दी करेंगे, लेकिन पहले मैं पारम्परिक कहानियों के कुछ स्रोतों का जिक्र करना चाहूँगा। सबसे पहले पंचतंत्र, जातक, महाभारत, सहस्र रजनी चरित्र, विक्रमादित्य की कहानियाँ और विभिन्न इलाकों की लोक-कथाएँ सहज और समृद्ध स्रोतों की श्रेणी में रखी जा सकती हैं। इनके बाद हम कथा सरितसागर, गुलिस्ताँ और बोस्ताँ की कहानियाँ और दुनियाभर की लोक-कथाओं को रख सकते हैं। ये स्रोत आसानी से उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए यदि कोई पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने को एक नियमित जगह देना चाहता है तो उसे इन तमाम स्रोतों से चुनी गई कहानियों का एक संकलन बनाना होगा।

कहने लायक कहानी

एक अच्छी कहानी में कौन-सी विशेषताएँ होती हैं, यह जानने के लिए एक सरल रास्ता एक ऐसी कहानी की जाँच करने का है जिसे बच्चे पीढ़ियों से आनंदपूर्वक सुनते आ रहे हैं। पंचतंत्र की शेर और खरगोश की कहानी एक ऐसा उदाहरण है। इस कहानी का कथानक उतना आसान नहीं है जितना हम कहानी से अपने परिचय के कारण मान लेते हैं। क्यों न हम पहले इस कहानी के प्रमुख मोड़ याद कर लें।

कहानी में एक दिन वह आता है जब नन्हे खरगोश को बूढ़े शेर के सामने पेश होना होता है। शेर के दरवाजे तक पहुँचने में खरगोश ने इतनी देर कर दी है कि शेर भूख के मारे पागल हो रहा है। यह निर्णायक क्षण शेर के साथ किसी भी तरह की सौदेबाजी के लिए एकदम अनुपयुक्त है क्योंकि शेर गुस्से से बुरी तरह भरा बैठा है, लेकिन खरगोश अनुपयुक्त क्षण में अपनी बात रखता है कि उसे इतनी देर कैसे हो गई? रास्ते में एक दूसरे शेर से मिलने की बात पूरी तरह झूठ है, लेकिन यह बात भूखे, नाराज़ शेर के शाही दिमाग में बैठ जाती है। अब वह पहले अपने प्रतिद्वंद्वी से निपटना चाहता है और इसके लिए वह खरगोश के साथ उस कुएँ की तरफ चल पड़ता है जहाँ दूसरे शेर के रहने की बात उसे बताई गई है। इस दूसरे निर्णायक क्षण में खरगोश अपनी धोखेबाजी और शेर की पागल नाराज़गी और ईर्ष्या, जिसे उसी ने जगाया है, पर भरोसा करके आगे बढ़ता है। कुएँ में अपनी परछाई देखकर शेर आपा खो बैठता है और कूदकर मर जाता है।

आइए, इस पुरानी, परिचित कहानी को ज़रा बारीकी से देखें। पहली बात तो यह है कि कहानी की विषयवस्तु में कोई उपदेश नहीं है। उल्टे, यह कहानी सीधे-सीधे इस तरह के गंभीर सवालों से जूझती है—जैसे कि किसी भी पाश्विक ताक़त के सामने या मौत के वास्तविक ख़तरे से अपने को कैसे बचाया जाए? आमतौर पर बच्चों से बातचीत के दौरान हम ऐसे प्रश्नों को नहीं उठाते, लेकिन जाहिर है कि बच्चों की ऐसे प्रश्नों में गहरी रुचि होती है। हम पूछ सकते हैं कि इस रुचि का क्या कारण है? पर इस सवाल की चर्चा मैं

कुछ देर में करूँगा। इस बीच मैं एक और बड़ी विशेषता पर विचार करना चाहता हूँ। यह कहानी एक ऐसे छोटे प्राणी की है जो एक बड़े ताकतवर प्राणी द्वारा पैदा की गई मुसीबत से जूझ रहा है। इस मुसीबत से बचने के लिए छोटा प्राणी एक ऐसी तरकीब का प्रयोग करता है जिसे हम आमतौर पर अनैतिक कहते हैं।

इस तरकीब पर अमल करते समय खरगोश व्यक्तित्व के कुछ उम्दा गुणों की मिसाल पेश करता है। इन गुणों में साहस, खतरे के सामने आत्मविश्वास, किसी घटना के अंतिम क्षण तक अपना दिमाग़ ठंडा रखने की क्षमता और अपने से ज़्यादा ताकत और उम्रवाले से उचित बर्ताव करना शामिल है।

हमें इस बात पर भी गौर करना चाहिए कि कहानी कितनी तेज़ गति से आगे बढ़ती है। शुरुआत में एक अजीब-सी व्यवस्था लागू की जाती है जिसके तहत रोज़ एक जानवर स्वेच्छा से बूढ़े राजा का शिकार बनेगा। इस तरह की दैनिक व्यवस्था स्थापित होने के बाद जल्दी ही छोटे खरगोश की बारी आती है और कहानी का केन्द्रीय हिस्सा प्रकट होता है। बाकी घटनाएँ बहुत तेज़ी से घटती हैं, क्योंकि अपने को बचाने की एक ख़तरनाक रणनीति तय कर लेने के बाद खरगोश एक भी क्षण बर्बाद नहीं कर सकता। कहानी सुनने वाला संवादों के ज़रिए एक के बाद एक स्थिति से 'धक्का खाते हुए' आगे बढ़ता है। यह स्पष्ट रहता है कि सुननेवाले के पास इस बात का कोई विकल्प नहीं है कि वह स्थिति को खरगोश की निगाह से देखे।

यह संक्षिप्त विश्लेषण उन कारणों की पहचान के लिए पर्याप्त है जिनसे इस कहानी को बच्चों के बीच भारी लोकप्रियता मिली है। सबसे पहली बात यह है कि कहानी उन्हें एक ऐसा चरित्र यानी हीरो देती है जिसके साथ वे पूरा तादात्म्य बैठा सकते हैं। यह चरित्र है खरगोश। कहानी में उसकी भूमिका उसी तरह की चुनौतियों और मुसीबतों से गुज़रती है जैसी कि बच्चे अपने दैनिक जीवन में अक्सर महसूस करते हैं। वह छोटा और शक्तिहीन है, उसे एक ऐसा काम करना है जो वह करना नहीं चाहता, उसे एक ऐसे प्राणी के हाथों मारे जाने का डर है जिसके पास पूरी सत्ता भी है और शारीरिक ताकत भी। खरगोश की परिस्थिति के इन पहलुओं से मिलते-जुलते पहलू हर बच्चे की ज़िन्दगी में उभरते रहते हैं। यद्यपि हम उन्हें अक्सर देख नहीं पाते क्योंकि हम माता-पिता और अध्यापक की भूमिकाएँ निभाने में बेहद व्यस्त रहते हैं। उदाहरण के तौर पर हममें से बहुत कम लोग यह जानते हैं कि अचानक होनेवाली मृत्यु का डर बचपन में चिन्ता के सबसे बड़े स्रोतों में शामिल है। किसी बड़े और मज़बूत व्यक्ति से आमना-सामना होने की आशंका भी इसी प्रकार की चिन्ता पैदा करती है।

कहानी शुरू होते ही बच्चों का ध्यान इसलिए खींचती है क्योंकि बच्चे स्वयं को कहानी में देख सकते हैं। इसके बाद कहानी में होनेवाली घटनाओं से उनके आकर्षण को बल मिलता है। नन्हा खरगोश एक रणनीति चुनता है और वह कारगर सिद्ध होती है। वह न केवल उसके लिए सफल होती है, बल्कि समस्या को हमेशा के लिए और सबके लिए ख़त्म कर देती है। छोटे बच्चों को इसी तरह का हल पसंद आता है। खरगोश की रणनीति के आकर्षण का एक और कारण यह है कि वह बच्चे में हमेशा पाई जानेवाली एक भोली-भाली इच्छा पर आधारित है— बहाना बनाने की इच्छा। देरी से आने के खरगोश द्वारा दिए गए बहाने में एक और आकर्षण यह है कि उसका उद्देश्य अपनी जान बचाना नहीं, शेर को मारना भी है। वास्तव में खरगोश की दुविधा इसलिए इतनी कठिन है कि क्योंकि वह अन्यायी को जान से मारे बग़ैर खुद को बचा नहीं सकता। इसी तरह कहानी बच निकलने का एक ज़बरदस्त नाटक पेश करने के लिए, बहादुरी से किए गए नाश का इस्तेमाल करती है। यदि उसमें कोई नैतिकता है तो वह आत्म-रक्षा की नैतिकता ही है। इस बात को भी हम तभी ठीक से देख सकते हैं जब हम कहानी को बच्चे की निगाह से देखें। यदि हम बड़ों की निगाह से इस कहानी को देखने की ज़िद करें तो हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि यह एक अनैतिक कहानी है— जैसी कि वह दरअसल है भी।

ज़रूरत क्या है?

अब तक यह स्पष्ट हो गया होगा कि बच्चों के लिए एक अच्छी कहानी सुनने का नैतिकता या नैतिक शिक्षा से कोई संबंध नहीं है या कम-से-कम सीधा संबंध नहीं है। अधिक गहरे स्तर पर खरगोश और शेर की कहानी में एक प्रेरक बात है। वह दिखाती है कि ख़तरे के सामने दिमाग़ ठंडा रखने के क्या फ़ायदे हैं। कहानी यह भी दिखाती है कि सोच-समझ और कल्पना से काम लेना कितना महत्त्वपूर्ण है। लेकिन ये बातें पारम्परिक अर्थ में 'नैतिक शिक्षा' नहीं कही जा सकती। वास्तव में महान पारम्परिक कहानियाँ शायद ही पारम्परिक अर्थ में नैतिक शिक्षा देती हों। हमारे लिए ज़्यादा ज़रूरी इस बात पर गौर करना है कि कहानी सुनाने का उद्देश्य बच्चे का नैतिक विकास करना नहीं है। कहानी सुनाने से होनेवाले लाभ काफी अलग हैं, और वे इस प्रकार हैं :

कहानियाँ अच्छी तरह सुनने की क्षमता का विकास करती हैं

अच्छा श्रोता कौन है? वह जो अन्त तक सुनता रहे। यह बात हम बहुत से लोगों के बारे में नहीं कह सकते। यहाँ तक कि औपचारिक बहसों के दौरान भी लोग लगातार टोकते रहते हैं। इसका कारण उनकी यह मानकर चलने की आदत है कि उन्हें पहले से पता है कि बोलनेवाला क्या कहेगा? एक और कारण यह है कि उनमें सुनने का धैर्य नहीं होता। आश्चर्य की बात नहीं कि सुनने को अब सिर्फ़ एक कौशल नहीं, बल्कि एक रवैया माना जाने लगा है जिसे प्रोत्साहित करने के लिए ऊँचे स्तर के प्रबंधन और प्रशासन के कोर्स उपलब्ध हैं। कहानी सुनाने से हमारी जिन्दगी के उस निर्णायक दौर में धैर्यपूर्वक सुनने की क्षमता विकसित होती है जब सुनने की आदत और उसमें निहित रवैया जीवनभर चलनेवाली आदतों का रूप ले सकते हैं।

यह बात थोड़ी अजीब है कि अच्छे श्रोता हमारे उस देश में दुर्लभ हो गए हैं जहाँ एक पुरानी और मजबूत मौखिक संस्कृति रही है। मेरा अंदाज़ है कि इस परिस्थिति का संबंध बचपन में कहानी सुनाने की अवहेलना से है। ऐसा लगता है कि आधुनिक भारत के पास बच्चों को नियमित रूप से कहानी सुनाने का समय नहीं है। इस कमी के परिणाम अब स्पष्ट होते जा रहे हैं।

कहानी सुनाने से अंदाज़ लगाने का प्रशिक्षण मिलता है

अपनी पसंद की कहानियाँ बच्चे बार-बार सुनना चाहते हैं। इसका कारण यह है कि कहानी से एक बार अपना परिचय हो जाने पर वे इस परिचय का इस्तेमाल गौर से सुनने की अपनी बढ़ती हुई क्षमता का परीक्षण करने के लिए करते हैं। स्वाभाविक है कि ये परीक्षण अनजाने में होता है। बच्चों को इस बात से खुशी होती है कि कहानी को दूसरी या तीसरी बार सुनते समय वे सफलतापूर्वक अंदाज़ लगा सकते हैं कि आगे क्या होगा? अंदाज़ के सही सिद्ध होने का आनन्द ही वह इनाम है जो कहानी सुनने से एक अनुभवी श्रोता को मिलता है और यह सिर्फ़ आनन्द नहीं है। इससे कहानी सुननेवाले बच्चे की अंदाज़ लगाने की क्षमता से विश्वास भी बढ़ता है। सर्वांगीण विकास में इस विश्वास की एक गहरी भूमिका होती है— ख़ासकर पढ़ने की क्षमता के विकास में। यह क्षमता स्कूल के शुरुआती दो वर्षों की सबसे बड़ी चुनौती होती है। साक्षरता और पढ़ने की क्षमता के विकास में अंदाज़ लगाने की क्षमता के योगदान की विस्तृत चर्चा मैंने अपनी पुस्तक 'बच्चे की भाषा और अध्यापक' में की है।

अंदाज़ लगाने की क्षमता का महत्त्वपूर्ण योगदान अन्य विषयों, विशेषकर गणित और विज्ञान में भी है। गणित की पढ़ाई में नियमों के इस्तेमाल से समस्या का हल निकालने का सैद्धांतिक महत्त्व है। कहानियों में भी नियम होते हैं। फ़र्क़ यही है कि ये नियम रूपकों की शक्ल में होते हैं। मिसाल के तौर पर कई कहानियाँ

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

इस नियम का पालन करती हैं कि छोटे प्राणी बड़ों को धोखा देकर विजय प्राप्त करते हैं। खरगोश और शेर की कहानी में यही होता है। कहानियाँ सुनते-सुनते बच्चे उनमें निहित नियम पकड़ लेते हैं और यह पकड़ उनकी अंदाज़ लगाने की क्षमता को बेहतर बनाती है।

कहानियाँ हमारी दुनिया को फैलाती हैं

मैं उस दुनिया की बात कर रहा हूँ जिसे हम अपने सिर या दिमाग में लेकर चलते हैं। कहानियाँ उसे इस अर्थ में फैलाती हैं कि हम उनके ज़रिए ऐसे लोगों और स्थितियों को जान लेते हैं जिनसे हमारा वास्ता अपनी ज़िन्दगी में कभी नहीं पड़ा।

सवाल है कि ऐसे लोगों या स्थितियों को जानने से क्या फ़ायदा है? फ़ायदा यह है कि वे जीवन का अंग हैं। भले हम व्यक्तिगत रूप से उन्हें न जानते हों पर वे हमें दिमागी रूप से परेशान करती हैं, खासकर बचपन में— लेकिन एक सामान्य अर्थ में यह परेशानी जीवनभर चलती है। उदाहरण के लिए छोटे बच्चे बुरे आदमियों की फ़िक्र करते रहते हैं, भले ही उनके आसपास कोई बहुत बुरा आदमी न हो। इसी तरह वे भीतर यह आशा करते हैं कि उन्हें किसी बेहद होशियार, सुन्दर या अच्छे इंसान से मिलने का मौका मिलेगा। आदर्श रूप की कल्पना और भयंकर विपत्ति का डर, दोनों ही बाल-मनोविज्ञान में शामिल हैं। पारम्परिक कहानियाँ इस मनोविज्ञान को व्यंजित करती हैं, और इसीलिए वे बच्चों को आसानी से खींच लेती हैं। कहानी सुनने से छोटा बच्चा, जो अभी साक्षर नहीं बना है, अपनी वास्तविक दुनिया से कहीं बड़ी दुनिया के कल्पित रूप का अनुभव पा लेता है।

एक बात और भी है कि कहानियों से मिलनेवाला अनुभव बेतरतीब नहीं होता। उल्टे, यह अनुभव हमारी अराजक दुनिया को एक संतोषजनक क्रम या बुनावट में ढाल देता है। एक गहरे अर्थ में यह एक 'नैतिक बुनावट' होती है — लेकिन एक आम अर्थ में नहीं। कमज़ोर जीतता अवश्य है, लेकिन कई बार ग़लत साधनों का प्रयोग करके। भूखे शेर से खरगोश का झूठ बोलना एक उदाहरण है।

कहानी सुनाना और पढ़ना

अंत में, कहानी कहने का महत्त्व हम बच्चे के भाषाई साधनों के विस्तार में देख सकते हैं। शब्द एक बहुत ही निजी सम्पत्ति होते हैं। वे हमें एक बहुत निजी अर्थ में संसार की चीज़ों को अलग-अलग नाम देने की क्षमता देते हैं। लेकिन दूसरी तरफ़ शब्द एक ऐसी सामाजिक सम्पत्ति भी है जिसका इस्तेमाल हम दूसरों से अपने अनुभव बाँटने के लिए करते हैं। शब्दों की यह दो-तरफ़ा प्रकृति ही उन्हें अर्थ देती है। उदाहरण के लिए बच्चे को अपने निजी अनुभव से यह मालूम होता है कि भूख लगने पर शेर को कैसा महसूस हो रहा होगा। कहानी बच्चे को 'भूखा' शब्द का अर्थ इस तरह फैलाने में मदद देती है कि उसमें शेर भी शामिल हो जाए। बच्चे जितनी ज़्यादा कहानियाँ सुनेंगे, उनकी शब्दावली में उतना ही दूसरों के अनुभवों का अर्थ शामिल करने की सामर्थ्य आती जाएगी। इस तरह देखें तो बचपन में सुनी गई कहानियाँ आगे चलकर पढ़ने की क्षमता का आधार बनती हैं।

वास्तव में कहानी के संदर्भ में ऊपर कही गई चारों बातें पढ़ने पर भी लागू होती हैं। पढ़ने की क्षमता बच्चों का परिचय भाषा में निहित नियमों और संरचनाओं से कराती है। अच्छी तरह पढ़ने की क्षमता होशियारी से अंदाज़ लगाते चलने की आदत पर निर्भर है। भाषा के नियमों से परिचित होकर बच्चे यह अंदाज़ लगा लेते हैं कि वाक्य या कथन में आगे क्या आनेवाला है? इस दृष्टिकोण से कहानी सुनाना बच्चों को साक्षर बनाने के लिए उपयोगी है।

कहानी सुनाने का कौशल

कहानी सुनाने की कला पर अधिकार पाने के इच्छुक व्यक्ति के लिए ज़रूरी है कि वह स्मृति को गंभीरता से कहानी को लें। यदि कहनेवाले को कहानी ठीक से याद नहीं है तो वह अच्छी से अच्छी कहानी को भी चौपट कर सकता है। याद कर लेने से आत्मविश्वास बढ़ता है और कहानी कहनेवाला इत्मीनान महसूस करता है। कहानी सुननेवालों से रिश्ता बनाने के लिए इत्मीनान या चैन बहुत ज़रूरी है। दूसरी बात यह है कि जब कहानी अच्छी तरह याद हो जाती है तो कहनेवाला उसे एक खाके या खाली नक्शे की तरह इस्तेमाल कर सकता है।

इस नक्शे को अपनी सुविधा या सुननेवालों के मूड के अनुसार भरा जा सकता है। कहानी को छोटा या बड़ा करना बहुत महत्वपूर्ण होता है। किसी दिन आप चाहते हैं कि जल्दी-जल्दी उस बिन्दु पर पहुँच जाएँ जहाँ खरगोश शेर के सामने खड़ा है। किसी और दिन आपकी इच्छा होती है कि कहानी के पहले हिस्से को फ़ैलाएँ, इस बात की विस्तृत चर्चा करें कि भोजन के इंतज़ार में शेर के मन में कैसे-कैसे विचार आ रहे होंगे? और शेर की गुफा की तरफ़ जाते हुए खरगोश के दिमाग़ में कौन-कौन सी बातें और रणनीतियाँ उभर रही होंगी?

कहानी को लेकर बच्चों के साथ संवाद कई तरह के विकल्प पेश करता है। आप चाहें तो नाटकीय ढंग से दो आवाज़ों में बोलें, इशारों या मुद्राओं से भी काम लें। संवाद को सजीव बनाने के लिए आप हाथ की कठपुतलियों का प्रयोग भी कर सकते हैं। आप कमरे के एक कोने से दूसरे कोने तक चलकर दोनों भूमिका खुद निभा सकते हैं। ये सभी संभावनाएँ रोचक हैं और वे हमें इस बात की चुनौती देती हैं कि हम एक ही कहानी को साल-दर-साल या एक ही साल में कई बार सुनाते हुए अपनी सामर्थ्य बढ़ाते चलें।

कहानी सुनाना यदि किसी शिक्षक की दैनिक जिन्दगी में शामिल है तो वह कभी उबाऊ नहीं हो सकती। पर कहानी को रोज़ की घटना बनाने के लिए यह ज़रूरी है कि हम प्राइमरी स्कूल के पाठ्यक्रम की अपनी धारणाओं को गंभीरतापूर्वक बदलें।

कुछ प्रश्न :

- पुस्तकालय में जाकर कहानियाँ पढ़िए। जो कहानियाँ सबको अच्छी लगीं वे बच्चों को सुनाइए व उनके साथ हुए अपने अनुभव को लिखिए।
- निम्नलिखित वाक्यों को उदाहरण द्वारा समझाइए।
 - कहानियाँ अच्छी तरह सुनने की क्षमता का विकास करती हैं।
 - कहानी सुनने से अंदाज़ा लगाने का प्रशिक्षण मिलता है।
 - कहानियाँ हमारी दुनिया को फ़ैलाती हैं।



अध्याय – 12

बाल साहित्य माने क्या?

परिचय :

बच्चों के लिए बने साहित्य में सरल शब्दों, वाक्यों का प्रयोग इस तरह होना चाहिए, ताकि बच्चे उन्हें समझ सकें। बच्चों के लिए छोटी-छोटी कविताएँ और कहानियाँ छाँटी जाएँ ताकि जितनी देर उनका आकर्षण रहे उतनी देर में वो पूरी हो जाएँ। धीरे-धीरे बच्चों की सुनने की क्षमता, उनकी रुचि को देखते हुए उनकी लम्बाई बढ़ाई जा सकती है। बच्चों की कल्पनाशक्ति बहुत तेज होती है, इसलिए कई बार काल्पनिक कहानियाँ बाल साहित्य में देने के दो फायदे होते हैं, एक तो बच्चे इन्हें पसंद करते हैं, शौक से पढ़ते हैं, दूसरा ये उनकी कल्पना शक्ति को भी और सशक्त बनाती हैं, जो फिर भाषा में अभिव्यक्ति को आधार प्रदान करती हैं। इसके अलावा यदि इस तरह की सामग्री भी बच्चों को दी जा सके जिसमें बच्चों की अपनी भाषा हो तो बच्चे इसे बड़े मजे से पढ़ेंगे और फिर वे भी ऐसी कोशिश कर सकते हैं कि उनके द्वारा बोला गया भी कोई लिखे और उसे पढ़े।

यह तो हुई सामग्री की बात, लेकिन यही काफी नहीं है। इस सामग्री के संकलन का तरीका भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना सामग्री छाँटना। बच्चों को रंग बेहद पसंद होते हैं। अतः बाल साहित्य में रंगों का भरपूर प्रयोग होना चाहिए। पठन सामग्री से सम्बंधित रंग-बिरंगे चित्र भी शामिल किए जाने चाहिए। यदि ऐसा न हो सके तो खाली चित्रों में बच्चे स्वयं रंग भर सकते हैं। कई बार तो बच्चे चित्रों के माध्यम से ही कहानी को समझ जाते हैं या फिर कोई नई कहानी ही गढ़ लेते हैं। साथ ही शब्दों आदि का प्रयोग भी आकर्षक होना चाहिए। कहने का मतलब यह है कि बच्चे पढ़ते बाद में हैं, पहले चित्रों को देखते हैं और कई बार तो किताब उठाने का मुख्य आधार ही मुखपृष्ठ का चित्र होता है। जिस किताब का मुखपृष्ठ अच्छा होता है वे वही किताब उठाते हैं फिर शुरू होती है अंदर से किताब को उलटने-पलटने की प्रक्रिया। जब किताब इस प्रक्रिया से भी गुज़र जाती है तो अन्ततः बारी आती है पाठ्य सामग्री की। अतः किताब का बाहरी कलेवर भी बच्चों को किताबों और साहित्य के पास लाने में बहुत महत्वपूर्ण है। एक बार जब बच्चा पाठ्य सामग्री तक पहुँचकर इसका रस और आनन्द लेना सीख लेता है, उसके बाद में तो पढ़ने की यह प्रवृत्ति अनवरत रूप से उसके भाषा का विकास करने और स्वतंत्र रूप से सीखने में मदद करती रहती है।

उद्देश्य :

- बाल साहित्य माने क्या? पर समझ बना पाएँगे।
- अच्छे बाल साहित्य में क्या-क्या शामिल हो? पर समझ बना पाएँगे।
- बाल साहित्य के माध्यम में भाषायी कौशलों के विकास पर समझ पाएँगे।
- बाल साहित्य का संकलन कैसे करें पर समझ बना पाएँगे।

बाल साहित्य का अभिप्राय बच्चों के लिए लिखे जाने वाले साहित्य से रहा है। इसके अंतर्गत इस बात पर भी ध्यान देना जरूरी है किसी कहानी या कविता मात्र में बच्चों के होने से वह बाल साहित्य नहीं

हो जाता। इसके लिए जरूरी है कि वह बच्चों के जीवन से जुड़े अनुभवों, उनके द्वन्द्व एवं उनकी कल्पनाओं आदि को ध्यान में रखकर लिखा गया हो। इससे यह बात उभर कर आती है कि बच्चों के साहित्य पर विचार करने के लिए यह जरूरी है कि हमारे मन में बच्चों व बचपन के बारे में एक समझ हो। जिसमें बच्चे को एक जागरूक व जिज्ञासु इंसान के रूप देखना, बाल विकास से जुड़े मुद्दों को समझना व समाज को समझना आदि बातें इसमें शामिल हैं।

अगर हम इस दृष्टि से देखें तो यह बात समझ में आती है कि दुनिया में लिखित रूप से बाल साहित्य की शुरुआत अठारहवीं शताब्दी के दौरान हुई। इससे पहले का अधिकतर साहित्य मौखिक परंपरा का साहित्य था। उसमें बच्चों व बड़ों के लिए कोई विभाजन नहीं था। रामायण व महाभारत की कथाएँ, जातक कथाएँ, पंचतन्त्र की कथाएँ, लोक कथाएँ आदि सभी के सुनने के लिए थीं। इसी तरह पश्चिम में भी एसेप फेबिल्स, गुलीवर्स ट्रैवल्स व राबिन्सन क्रूसो जैसी रचनाएँ भी सभी के लिए थीं। इन पारंपरिक रचनाओं में अधिकतर रचनाएँ नैतिक मूल्यों व उपदेशों पर ही आधारित थीं।

इसके उपरांत पश्चिम में जब जान लॉक, कमेनियस व रूसो जैसे विचारकों ने भी बच्चों व उनकी शिक्षा के बारे में सोचना शुरू किया तब बच्चों के लिए अलग से लिखे जाने के बारे में सोच-विचार की शुरुआत हुई। परंतु उस दौरान भी बच्चों के बारे में समझ एक खाली स्लेट की ही थी। इसके साथ लिखी जानेवाली रचनाएँ भी समाज के उच्च वर्ग के बच्चों के लिए ही थीं। इन रचनाओं का मुख्य उद्देश्य भी बच्चों को नैतिक उपदेश देना या शिष्टाचार सिखाना ही था।

अठारहवीं शताब्दी के दौरान ही जॉन न्यूबेरी ने बच्चों के लिए अलग से साहित्य के बारे में विचार दिया तथा उन्होंने बच्चों के लिए चित्रात्मक पुस्तकें भी लिखीं। इस प्रकार ज्यों-ज्यों बच्चों के बारे में समझ गहरी हुई व प्रिंटिंग का विकास हुआ। उसके साथ ही बाल साहित्य भी विकसित हुआ तथा भिन्न-भिन्न प्रकार की पुस्तकें प्रकाशित होनी शुरू हुईं। चित्र पुस्तकों का प्रचलन भी शुरू हुआ। सिर्फ किताबी उद्देश्यों को पूरा करने का ही मकसद नहीं है उसके साथ-साथ पढ़ने के आनंद से भी जोड़ा गया है।

अगर हम अपने देश में भी लिखित बाल साहित्य की बात करें तो इसकी शुरुआत बीसवीं शताब्दी के दौरान ही मानी जा सकती है। इसके अंतर्गत रची जाने वाली अधिकतर सामग्री पर अगर हम गौर करेंगे तो हमें उस दौरान के राजनीतिक व सामाजिक संदर्भ को भी समझना होगा। इस समय के हिन्दी लेखक साहित्य की रचना को एक आत्मविश्वासी और अपनी सांस्कृतिक धरोहर से परिचित समाज का निर्माण मानता था। देशी संस्कृति में गर्व और आत्मनिर्भरता की भावना से ओत-प्रोत साहित्य देश की आज़ादी के संघर्ष में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था।

उस समय की अधिकतर रचनाएँ देशभक्ति व नैतिकता से ही केन्द्रित रही हैं जिन्हें हम अपने स्कूली दिनों के दौरान अपनी पाठ्यपुस्तकों में भी पढ़ते रहे हैं। उस दौरान के साहित्य में कहीं-कहीं आज़ादी के संघर्ष के माहौल में अडिग और आत्मविश्वासी बच्चों के चित्रण को भी देखा जा सकता है। ऐसी ही छवि का अंकन 1933 में प्रेमचन्द द्वारा लिखित कहानी 'ईदगाह' में मिलता है। यह कहानी बच्चे की स्वतंत्र रूप से सोचनेवाले एक आत्मविश्वासी बच्चे की छवि को दर्शाती है। बच्चे की यह छवि ही बच्चों के लिए अच्छे साहित्य का आधार के रूप में देखी जाती है।

आज़ादी के उपरांत तथा प्रकाशन व्यवस्था में परिवर्तन के साथ लोगों की सांस्कृतिक चेतना भी बदली।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

महानगरीय संस्कृति का विकास हुआ। इसके अंतर्गत बच्चे को एक नन्हे वयस्क की तरह ही देखा गया। इससे बच्चों के पालन—पोषण और विकास के प्रतिमानों में बदलाव आया। इन सबका बच्चों के साहित्य व उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनके बीच प्रतियोगिता की भावना को बढ़ावा मिला। उनसे यह अपेक्षा की जाने लगी कि वे जल्दी—जल्दी पढ़ना लिखना सीखें और दूसरों से आगे निकलें। इस तरह की सोच बच्चों की किताबों में भी आसानी से देखी जा सकती है जिनमें बच्चों की जगह बड़े ही सोचते हैं। उनकी सोच ही हावी दिखाई देती है।

धीरे—धीरे हमारे यहाँ भी बच्चों की शिक्षा में नए विचारों के साथ बाल साहित्य की समझ में बदलाव के प्रयास किए जा रहे हैं। आज बच्चों को ध्यान में रखकर अच्छी किताबें भी प्रकाशित हो रही हैं। इन किताबों का उद्देश्य बच्चों को पढ़ने का आनंद लेना कहा जा सकता है। इन्हें हमें पहचानना होगा। इस दृष्टि से ही बच्चों के साहित्य को देखा जाना चाहिए। इसके बारे में हम आगे पढ़ेंगे।

अब हम बच्चों के साहित्य से जुड़ी भिन्न—भिन्न विधाओं पर संक्षेप में विचार करेंगे—

चित्र—पुस्तकें

वर्तमान समय में बच्चों की किताबों के अंतर्गत चित्र—पुस्तकें काफी मात्रा में प्रकाशित हो रही हैं। ये पुस्तकें बच्चों के लिए रुचिपूर्ण भी मानी जाती हैं। इन किताबों में चित्रों के साथ लिखित पाठ्य भी होता है। इसमें चित्रों व पाठ्य की बराबर की भागीदारी होती है। आयु वर्ग के अनुसार चित्र व पाठ्य का अनुपात घटता—बढ़ता है। बच्चों की शुरुआती अवस्था की किताबों में केवल चित्रों में भी कहानी कही गई होती है। जैसे 'आम की कहानी', 'बाजार की सैर', 'रेलगाड़ी' आदि। इसके अतिरिक्त चित्र पुस्तकों में 'लालू पीलू', 'मैं भी', 'चूहे को मिली पेंसिल', 'बिल्ली के बच्चे', 'बुढ़िया की रोटी', 'प्यासी मैना', 'कजरी गाय झूले पर' आदि शामिल। इन किताबों का उपयोग बच्चों को पढ़ना सिखाने में भी प्रभावी ढंग से किया जा सकता है।

लोक कथाएँ

लोक साहित्य मुख्यतः मौखिक परंपरा की उपज है। इसके अंतर्गत हम लोककथाओं, परीकथाओं व अन्य पारंपरिक कथाओं को रख सकते हैं। इन कथाओं को हम दादी—नानी, रामायण, महाभारत, पंचतन्त्र व जातककथाओं के माध्यम से सुनते रहे हैं। इन कहानियों में उस दौरान की प्रचलित मान्यताओं, मूल्यों व सामाजिक व्यवस्था के बारे में पता चलता है। आजकल कुछ लोककथाएँ चित्रात्मक रूप से नए कलेवर में भी प्रकाशित हो रही हैं। इन कहानियों में जहाँ कथात्मकता दिखाई पड़ती है वहीं इनमें कहीं वर्तमान दृष्टि से कुछ रूढ़िवादी चरित्र भी दिखाई पड़ते हैं। जैसे कौए का चरित्र चालाक ही होगा। इस तरह से जाति व लैंगिक भेदभाव भी दिखाई पड़ेंगे। बच्चों के साथ उपयोग के लिए इन बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

कविताएँ

बाल कविताएँ अपनी लय, बिंब व शब्दों के खेल से बच्चों के बीच अपनी पहचान बनाती हैं। इन कविताओं को बच्चे गाते—गुनगुनाते हैं। शब्दों में तोड़—मरोड़ भी करते हैं। इनकी जगह नए शब्दों का इस्तेमाल करते हैं। हिन्दी में बच्चों के लिए बाल कविता लेखन में निरंकार देव सेवक, श्रीप्रसाद, सुभद्रा कुमारी चौहान, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना व प्रयाग शुक्ल आदि लोगों के नाम लिए जा सकते हैं। इन्होंने बच्चों के मनोभावों का ध्यान में रखकर अच्छी बाल कविताओं का सृजन किया है। बाल कविताओं के लिए नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'महके सारी गली—गली' नामक पुस्तक को देखा जा सकता है।

गतिविधि पुस्तकें

गतिविधि पुस्तकें हमारे देश में बच्चों के लिए नई विधा की पुस्तकें हैं। इन पुस्तकों का विकास विगत दो दशकों के दौरान ही हुआ है। इन पुस्तकों के अंतर्गत यह प्रयास होता है कि खेल-खेल में बच्चों की रचनात्मक प्रवृत्ति को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न खेल, गतिविधियों के द्वारा कुछ रचने के मौके दिए जाएँ। इन पुस्तकों में 'खेल-खेल में विज्ञान', 'कबाड़ से जुगाड़', 'विज्ञान के प्रयोग', 'गणित के खेल', 'ओरेगेमी' आदि पर कई सचित्र पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

कथेतर साहित्य

बच्चों के लिए कहानी-कविता के अलावा अन्य जानकारीपरक पुस्तकें, यात्रा वर्णन, जीवनियाँ आदि पुस्तकों को कथेतर साहित्य के अंतर्गत रखा जाता है। जानकारीपरक पुस्तकों में किसी अवधारणा या विषयवस्तु को बच्चों को ध्यान में रखकर सहज ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है। हाल के वर्षों में इस विधा के अंतर्गत कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

किशोर साहित्य

बाल विकास की दृष्टि से देखें तो किशोरावस्था के दौरान बच्चों की सोच व उनके मुद्दों में काफी बदलाव आ जाता है। इस दृष्टिकोण से इस आयु वर्ग के लिए अलग से साहित्य की जरूरत पड़ती है। इस आयु वर्ग के बच्चे साहसिक कथाएँ, बाल उपन्यास, जासूसी कथाएँ, जीवनी, आत्मकथा व जानकारीपरक पुस्तकों आदि में भी रुचि लेने लगते हैं। हालाँकि इस आयु वर्ग के लिए हिन्दी में उद्देश्यपरक साहित्य कम ही रचा गया है। इसके अंतर्गत सत्य प्रकाश अग्रवाल 'एक घर पाँच निडर' का उल्लेख किया जा सकता है। किशोरों के लिए कुछ अनूदित पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं जैसे – 'स्वामी के दोस्त', 'रस्ती के कारनामे' आदि देखे जा सकते हैं।

कुछ प्रश्न :

- इस आलेख में बच्चों के साहित्य को एक सामाजिक-राजनीतिक संदर्भ में समझने की ओर संकेत किया गया है। इस बात का क्या आशय है? अपने शब्दों में लिखें।
- आलेख में बच्चों के साहित्य को बच्चों व बचपन की अवधारणा से जोड़कर देखने की बात कही है। इस बात का क्या आशय है? अपने शब्दों में लिखें।
- अपने पुस्तकालय से कुछ बाल साहित्य की पुस्तकें चुनें। उसमें यह देखने का प्रयास करें कि पुस्तक में बच्चों व समाज की कैसी छवि प्रस्तुत की गई है?
- अपने पुस्तकालय से बच्चों की अच्छी कविताएँ इकट्ठी करें तथा कविता कक्षा में बच्चों को सुनाएँ।
- अपने पुस्तकालय से बच्चों की कुछ चित्र-पुस्तकें व गतिविधि पुस्तकें चुनें। उनमें यह देखने का प्रयास करें कि उनका कक्षा में बच्चों के साथ कैसे उपयोग करेंगे?



अध्याय – 13

क्या—क्या हो बच्चों की एक किताब में

परिचय :

पिछले आलेख में हमने बाल साहित्य का संक्षिप्त परिचय व उसकी विधाओं के बारे में पढ़ा। प्रस्तुत आलेख में बच्चों की एक अच्छी किताब में क्या—क्या तत्व होने चाहिए? इसके बारे में लिखा गया है जिससे हमें बच्चों की किताबों के चयन के बारे में समझ मिलेगी।

उद्देश्य :

- अच्छी किताब में क्या हो? पर समझ बना पाएँगे।
- किताबें बच्चों के जीवन कौशलों (खुद से निर्णय लेने में) के विकास में किस तरह मददगार हैं? पर समझ बना पाएँगे।
- बच्चों की सहज भाषा के महत्त्व को समझ पाएँगे।
- चित्र पढ़न को भाषायी विकास के कारक के रूप में महत्त्व को समझ पाएँगे।

बच्चों की किताबों के बारे में आमधारणा यह रहती है कि बच्चों के लिए रंग—बिरंगी, बड़े अक्षरों व सरल शब्दोंवाली किताबें अच्छी होती हैं। इसके साथ ही बाजार में उपलब्ध विभिन्न पुस्तकों में यह देखा जाता है कि कहानी के पात्र तो बच्चे व पशु—पक्षी हो सकते हैं लेकिन वे बड़ों की सोच के आधार पर अपने क्रियाकलाप करते हैं, अपना तर्क रखते हैं। ऐसी बहुत सी सामग्री से बाजार पटा हुआ है। इस कारण बच्चों की अच्छी किताबों को पहचानने के लिए हमें थोड़ी और गहराई से समझ बनाने की जरूरत पड़ती है। इसके लिए हमें बच्चों की किताबों से जुड़े अन्य पहलुओं पर भी समझ बनानी होगी। इस आलेख में हम बच्चों की अच्छी किताबों से जुड़े कुछ संकेतकों पर समझ बनाने का प्रयास करेंगे।

बच्चों की छवि

सर्वप्रथम हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि बच्चों की हमारे मन में क्या छवि है? इस छवि को मौजूदा बाल पुस्तकों में किस तरह से चित्रित किया गया है। इसके अंतर्गत यह ध्यान देना जरूरी है कि बाल साहित्य में बच्चे की स्वतंत्र छवि का होना जरूरी है जिसमें उसकी अपनी बात, अपनी सोच, अपनी कल्पनाशीलता व तर्कशीलता दिखाई दे। इसमें बच्चों की स्वयं निर्णय लेने की क्षमता, अपना तर्क रखने की क्षमता आदि आंतरिक मूल्य दिखाई पड़ने चाहिए। इसका उदाहरण प्रेमचंद की कहानी 'ईदगाह' में दिखाई देता है। इस कहानी में जहाँ एक बच्चे की अपनी दादी के प्रति संवेदनशीलता उभर कर आती है, वहीं दूसरी तरफ यह बात भी सामने आती है कि हामिद इस कहानी में कहीं न कहीं स्वतंत्र रूप से निर्णय ले सकने वाली स्थिति पर भी कायम रहता है। कहानी में हामिद चिमटा लेने के पक्ष में अपने तर्क मजबूती से रखता है और अपनी दादी के लिए चिमटा खरीद लेता है, जबकि उसके साथी विभिन्न प्रकार के खिलौने खरीदते हैं। यह बच्चों के लिए कहानी का एक ठोस आंतरिक मूल्य है, इसे समझने की जरूरत है।

इसी तरह नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'बस की सैर' की मुख्य पात्र वल्ली भी अपनी सहज जिज्ञासा का उपयोग करते हुए बस की यात्रा करती है। अपने तर्कों से वह बस कंडक्टर व बस के यात्रियों को संतुष्ट करती है। इस कहानी में एक बच्ची अपनी सोच, अपना तर्क और अपनी जिज्ञासा दर्शाती है जो कि एक आधुनिक सामाजिक मूल्य है।

नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित एक अन्य पुस्तक 'कजरी गाय झूले पर' में भी गाय के माध्यम से बच्चों के मनोभावों को समझा जा सकता है। यहाँ एक गाय अपने रोजमर्रा के कार्यों को छोड़कर स्वतंत्र रूप से सोचते हुए झूला झूलने का अनुभव लेना चाहती है।

बच्चों की किताबों के अन्य संकेतकों को समझने के लिए हम कुछ और किताबों पर निगाह दौड़ा सकते हैं। मसलन, चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक - 'बुढ़िया की रोटी' को एक लोककथा के रूप में गूँथा गया है। इसमें घटनाओं का बार-बार दोहराव है और यह कहानी बच्चों के परिवेश से सशक्त रूप से जुड़ी हुई है। इस तरह की कहानी में बच्चों को घटनाओं के दोहराव के माध्यम से यह अंदाज लगाने का मौका मिलता है कि आगे बुढ़िया किस-किस के पास जाएगी? और रोटी पाने का प्रयास करेगी। ताराबाई मोदक की कहानी 'खीरा खाऊँ कचर-कचर' में भी इसी किस्म का दोहराव है। अक्सर यह देखा गया कि इस तरह की कहानियाँ बच्चों को पसंद आती हैं।

कई दफा बचपन की घटनाएँ या बाल सुलभ अनुभव भी बच्चों को बहुत भाते हैं। उदाहरण के लिए चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'ननिहाल में गुजरे दिन' को याद कर सकते हैं। इसमें बचपन की घटनाएँ सहज रूप से एक के बाद एक सामने आती हैं। बच्चे इन्हें पढ़ते हुए कहीं न कहीं अपनी छवि को देखते हैं, अपने अनुभव से जोड़ते हुए उसमें आनंद पाते हैं।

चित्रों का महत्त्व

बाल साहित्य में चित्रों के बारे में मूलभूत बात यह है कि बच्चों की किताबों के चित्र पर चर्चा गत्यात्मक होनी चाहिए जिससे बच्चों को लगे कि इनमें कुछ घटित हो रहा है, बजाय केवल स्थिर चित्र होने के। ऐसी ही कुछ बात चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'महागिरी' के चित्रों में देखी जा सकती है। इसमें हाथी के चेहरे पर उजागर समस्त भाव देखे जा सकते हैं। इसी तरह 'प्यासी मैना' को भी देख सकते हैं। चित्रों के लिहाज से ऐसे ही कुछ और नाम याद आते हैं— नेशनल बुक ट्रस्ट की 'दादी ने की बुनाई', 'चौदह चूहे घर बनाने चले', 'कजरी गाय झूले पर', स्कॉलिस्टिक इंडिया की 'पाजी बादल' आदि। इन सभी में चित्र न केवल महत्त्वपूर्ण हैं वरन् वे किताब के पाठ्य को समृद्ध भी करते हैं। बच्चे इन चित्रों की बारीकियों में जा सकते हैं और चीजों को खोजने का प्रयास कर सकते हैं। इसके साथ ही जो बच्चे ठीक से पढ़ नहीं पाते वे भी चित्रों के माध्यम से कहानी को समझने की कोशिश करते हैं और उसका स्वयं विस्तार करते हैं।

चित्रों के अंतर्गत यह बात भी देखने की है कि चित्रों में समाज की छवि किस तरह से दिखाई गई है। चित्रों में अमीर-गरीब, शहरी-ग्रामीण, जातिगत व लैंगिक भेदभाव आदि तो नहीं दिखाया गया है।

तयशुदा चरित्र

बच्चों की अधिकतर पुस्तकों में बच्चों के चरित्र गढ़े हुए होते हैं और वे एक वयस्क के नजरिए से सोचते या क्रियाकलाप करते हैं। इससे कहानियाँ एक ही सपाट ढर्रे पर चल पड़ती हैं और उनमें बच्चों के कोई अनुभव नहीं दिखाई पड़ता।

आमतौर पर कहानियों के चरित्रों में एक तरफा नायकत्व के गुण भरे होते हैं जिससे आसानी से स्पष्ट हो जाता है कि कहानी में कौन नायक है? और कौन खलनायक? कहानी में नायक हर समस्या का निदान खोज लेता है और अंत में विजय प्राप्त करता है। ऐसी कहानियाँ बच्चों को कोई नई दृष्टि प्रदान नहीं करती। इन्हें 'चंपक' व विभिन्न प्रकार की कॉमिक्स में अक्सर देखा जा सकता है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान में बाल साहित्य में चली आ रही रूढ़ छवियों को तोड़ने की जरूरत है।

भाषा

भाषा के स्तर पर यह कहा जाता है कि बच्चों के लिए सरल वाक्य हों। परंतु यह ध्यान रखना चाहिए कि अगर भाषा में बच्चों के स्थानीय परिवेश के कई शब्द सहजता से आते हैं तो उनको लेकर समस्या नहीं होनी चाहिए। इस बात को भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि बच्चों के लिए भाषा बनावटी न हो। अगर सहज रूप से इस्तेमाल किए जाएँ तो कठिन शब्दों को भी बच्चे कहानी के संदर्भ द्वारा अनुमान लगाकर समझ सकते हैं। गुलजार द्वारा बच्चों के लिए रचित रचनाएँ 'पाजी बादल', 'बोस्की का पंचतंत्र', 'बोस्की के ब्राह्मण', 'पोटली बाबा' की आदि पुस्तकों में भाषा का प्रवाह और किस्सागोई देखने मिलती है और उर्दू के शब्द भी मिलते हैं। इससे कहानी समृद्ध ही होती है। ऐसी ही बातें 'ननिहाल में गुजरे दिन' में भी दिखाई देती हैं।

मूल्य

बाल साहित्य के संदर्भ में हमें यह भी समझना चाहिए कि हम एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में रहते हैं। उसका एक संविधान है। उसके कुछ संवैधानिक मूल्य—समता, न्याय, धर्मनिरपेक्षता आदि हैं। इन संवैधानिक मूल्यों को बच्चों की किताबों में देखा जाना चाहिए। तभी भारत जैसे एक बहुभाषी—बहुसांस्कृतिक देश में जातीय व लैंगिक भेदभाव, शहरी—ग्रामीण, अमीर—गरीब आदि के बीच संवेदनशीलता की बात पैदा हो पाएगी।

अगर नैतिक मूल्यों के विकास की बात करें तो हमें यह समझना चाहिए कि इनका विकास होना एक जटिल प्रक्रिया है। ये मूल्य निरपेक्ष भी नहीं हैं। इन्हें बच्चों की किताबों में जानबूझकर रखना या ढुँढना एक निरर्थक बात है। हमें यह भी सोचना चाहिए कि हमारे स्कूलों में अधिकतर गरीब व दलित बच्चे, स्लम के बच्चे, जनजातीय क्षेत्र के बच्चे, लड़कियाँ, अल्पसंख्यक बच्चे, विकलांग बच्चे भी पढ़ते हैं। इन बच्चों के जीवन व समाज के प्रति एक संवेदनशील नजरिए को उभारने वाली रचनाएँ बच्चों की किताबों में होनी चाहिए। इन मूल्यों को किताबों की कहानियों व चित्रों में देखा जाना चाहिए।

उक्त किताबों के उदाहरण के लिए स्कॉलिस्टक द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'बोनू और सलीम' 'बारिश का एक दिन', 'गाँव का बच्चा'। एकलव्य द्वारा प्रकाशित 'छुटकी उल्ली' व 'श्रम की महिमा'। तूलिका द्वारा प्रकाशित 'क्यों—क्यों छोरी', 'सॉरी बेस्ट फ्रेंड', 'मुकुन्द एंड रियाज', 'जू की कहानी', 'इस्मत की ईद' आदि किताबों को देखा जा सकता है।

कुछ प्रश्न :

- इस आलेख में बच्चों के लिए किताब चयन के किन—किन संकेतकों के बारे चर्चा की गई है ? इन्हें संक्षेप में अपने शब्दों में लिखें।
- अपने पुस्तकालय से उक्त संकेतकों के आधार पर कुछ अच्छी किताबों का चयन करें तथा उनके बारे में संक्षेप में लिखें।
- आलेख में बाल पुस्तकों में बच्चों की किस प्रकार की छवि देखने की बात कही गई है? इसे अपने शब्दों में लिखें।
- अपने पुस्तकालय से कुछ अच्छे चित्रांकनवाली पुस्तकें चुनें। इनके बारे में संक्षेप में लिखें।



अध्याय – 14

संकलित बाल साहित्य एवं गतिविधियाँ

परिचय :

इस अध्याय में कुछ कविताएँ, कहानियाँ, पहेलियाँ आदि विभिन्न तरह के टेक्स्ट (Text) व उन पर अभ्यास व गतिविधियाँ दी गई हैं। अपेक्षा है कि इससे आपको कक्षा में भाषा सीखने-सिखाने हेतु क्या-क्या किया जा सकता है? यह समझने में मदद मिलेगी। आप स्वयं भी यह अभ्यास करें तो आपको मज़ा आयेगा। जैसे आप:

- प्रत्येक कहानी तथा कविता को पढ़ें एक-दूसरे को सुनाएँ।
- जो अभ्यास दिए गए हैं वह भी करें और अपने जवाबों को दूसरे समूहों से बाँटें?
- यह भी बताने का प्रयास करें कि ये अभ्यास भाषा की कौन-सी क्षमताओं का विकास करने में मदद करते हैं?
- कहानी और कविता पर जो अभ्यास दिए गए हैं वो सिर्फ उदाहरणमात्र हैं आप स्वयं भी नए अभ्यास बनाएँ।

उद्देश्य :

- आस-पास उपलब्ध कहानी, कविता, लोकगीत, लोककथा, पहेली इत्यादि का संकलन कर सीखने-सिखाने में इस्तेमाल कर सकेंगे।
- अलग-अलग सामग्रियों पर नए-नए तरह के अभ्यास बनाने की समझ बना पाएँगे।
- अच्छे अभ्यास कैसे हों पर समझ बना पाएँगे।
- पाठ्यपुस्तक से बाहर की सामग्रियों से भी बच्चों में भाषायी कौशलों का विकास करने में सहायक है पर समझ बना पाएँगे।

आम

मुझे बहुत भाते हैं नानी मीठे-मीठे आम,
भर डलिया तू मुझे खिला दे, लूँगा तेरा नाम!
बहुत बड़ी है बगिया तेरी, छोटा मेरा पेट,
और पेट से भी छोटा है, मेरे मुँह का गेट!
घबरा मत ना खा पाऊँ मैं, बगिया भर के आम,
न दे टॉफी न दे बिस्किट, दे बस केवल आम!
आम खिलाकर करवा ले तू मुझसे सारे काम,
सिर्फ एक दिन को कर दे, सब बगिया मेरे नाम!

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

कविता सुनाने के बाद बच्चों से कुछ प्रश्न ऐसे पूछे जा सकते हैं—

— यदि तुम्हें डलिया भरकर आम दे दिए जाएँ तो तुम क्या करोगे?

— _____

— आम के अलावा और कौन-कौन से फल तुम्हें अच्छे लगते हैं?

— _____

— आम से बनी कौन-कौन सी चीजें तुम्हें अच्छी लगती हैं?

— _____

— तुम अपने घर में बोली जानेवाली भाषा में आम को क्या कहते हो ?

— _____

— अगर तुम्हें एक दिन के लिए आम की बगिया मिल जाए तो तुम क्या करोगे ?

— _____

ज़रा सोचो तो

— आम फलों का राजा है तो अंगूर क्या है?

— कौन किससे छोटा है— आँख, कान, नाक?

इस चर्चा में हर बच्चे की प्रतिक्रिया उसकी अपनी कल्पना तथा रुचि के अनुसार अलग-अलग होगी। जो बच्चे चर्चा में हिस्सा नहीं ले रहे हों उन्हें प्रोत्साहित करें ताकि वह अपनी बात सही ढंग से कह सकें।

कुछ प्रश्न ऐसे भी हो सकते हैं— तुम अपने घर में बोली जानेवाली भाषा में आम को क्या कहते हो? इस प्रकार की चर्चाओं से जहाँ बच्चों की झिझक दूर होगी और उनका आत्मविश्वास बढ़ेगा वहीं बच्चे एक ही शब्द को कई अन्य भाषाओं में भी जानेंगे। दूसरी भाषाओं के प्रति अपनेपन तथा सम्मान की भावना उनके हृदय में जगेगी।

अब कुछ प्रश्न आपके लिए :

- आपके अनुसार यह कविता किस कक्षा के बच्चों के लिए उपयुक्त होगी?
- आप भी कम से कम दो अभ्यास इस कविता पर बनाइये?

चित्रकार

चित्रकार सुनसान जगह में, बना रहा था चित्र।
इतने ही में वहाँ आ गया, यम राजा का मित्र।।
उसे देखकर चित्रकार के, तुरंत उड़ गए होश।
नदी, पहाड़, पेड़, पत्तों का, रह न गया कुछ जोश।।
फिर उनको कुछ हिम्मत आई, देख उसे चुपचाप।
बोला—सुन्दर चित्र बना दूँ, बैठ जाइए आप।।
उकरू—मुकरू बैठ गया वह, सारे अंग बटोर।
बड़े ध्यान से लगा देखने, चित्रकार की ओर।।
चित्रकार ने कहा हो गया, आगे को तैयार।
अब मुँह आप उधर तो करिए, जंगल के सरदार।।



बैठ गया वह पीठ फिराकर, चित्रकार की ओर।
चित्रकार चुपके से खिसका, जैसे कोई चोर।।
बहुत देर तक आँख मूँदकर, पीठ घुमाकर शेर।
बैठे—बैठे लगा सोचने, इधर हुई क्यों देर।।
झील किनारे नाव लगी थी, एक रखा था बाँस।
चित्रकार ने नाव पकड़कर, ली जी भरके साँस।।
जल्दी—जल्दी नाव चलाकर, निकल गया वह दूर।
इधर शेर था धोखा खाकर, झुँझलाहट में चूर।।
शेर बहुत खिसियाकर बोला, नाव ज़रा ले रोक।
कलम और कागज़ तो ले जा, रे कायर डरपोक!!
चित्रकार ने कहा तुरत ही, रखिए अपने पास।
चित्रकला का आप कीजिए, जंगल में अभ्यास।।



कुछ प्रश्न :

1. इस कविता को कहानी के रूप में लिखिए।

2. शेर को देखकर चित्रकार का जो हाल हुआ, वह कविता की किन पंक्तियों से पता चलता है?

3. इस कविता के लिए एक शीर्षक और दें।

4. कविता में शेर के लिए दो नामों का प्रयोग किया गया है? इन दोनों नामों को छँटकर लिखिए।

5. 'उकरू-मुकरू बैठ गया वह, सारे अंग बटोर

बड़े ध्यान से लगा देखने, चित्रकार की ओर'

इस कविता में शेर की जगह अगर शेरनी आई होती तो कवि इन दो लाइनों को किस प्रकार लिखता?

6. कविता में कई समान आवाज़वाले शब्दों का प्रयोग किया गया है, जैसे— चित्र—मित्र। कविता में आए ऐसी कम से कम 4 शब्द जोड़ियों को लिखिए।

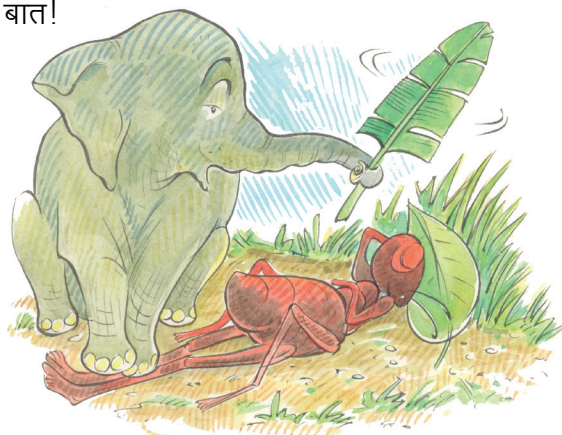
7. तुम भी कभी किसी मुसीबत में फसे होंगे तो तुम बताओ की इस मुसीबत से कैसे निकले?

मज़े की बात

सुनो, मज़े की बात, रे भैया

सुनो, मज़े की बात!

हाथी दादा दबा रहे हैं
चींटी जी के पाँव,
चूहे जी के डर से भागी
बिल्ली अपने गाँव।
नए दौर की नई—निराली
देखो यह सौगात!





रौब जमाता फिरता सब पर
नन्हा-सा खरगोश,
चीता सहमा हुआ खड़ा है
भूला अपने होश!
बाघ गँवाकर सारी ताकत
दिखा रहा अब दाँत!

भालू, गीदड़, सियार, लोमड़ी
रगड़ रहे हैं नाक,
खुलकर उड़ा रहे गधे जी
उनका खूब मजाक।
एक छछूंदर दुनियाभर में
मचा रही उत्पात।



बातचीत करो-

1. कविता में नन्हा खरगोश सभी पर कैसे रौब जमाता होगा?
2. तुम्हें सबसे ज़्यादा डर किस-किस से लगता है?
3. डर लगने पर तुम क्या-क्या करते हो?
4. कैसी बातों को सुनकर तुम्हें मजा आता है?

कविता पढ़ो और लिखो-

(क) चींटी के पाँव कौन दबा रहा है?

(ख) बिल्ली किसके डर से अपने गाँव भागी?

कविता पढ़ो और सही (✓) और गलत (X) का निशान लगाओ—

- (क) हाथी दादा झूम के चला।
(ख) रौब जमाता फिरता सब पर नन्हा—सा खरगोश।
(ग) चीता सहमा हुआ बैठा है।
(घ) छछूंदर उत्पात मचा रही है।
(ङ) बाघ ने दाँत दिखाया।

चित्रों में कौन-कौन से जानवर दिखाई दे रहे हैं, उनके नाम लिखो।

सोचो और लिखो—

चूहा बिल्ली के डर से भागता है।

बिल्ली के डर से भागती है।

कुत्ता के डर से है।

बंदर है।

बब्बू और झब्बू

घोड़ा लाए बब्बू जी,
आ के बोले झब्बू जी,
इस घोड़े पर नहीं चढ़ेंगे,
ये घोड़ा है लद्दू जी।
घोड़ा अच्छा मिला नहीं,
बब्बू बोले गिला नहीं।



आलू लाए बब्बू जी,
आ के बोले झब्बू जी,
आलू—वालू नहीं चलेगा,
हम खाएँगे कद्दू जी।
कद्दू अच्छा मिला नहीं,
बब्बू बोले गिला नहीं।

चिड़िया लाए बब्बू जी,
आ के बोले झब्बू जी,

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

ये तो बस चीं-चीं करती,
हमें चाहिए पट्टू जी।
पट्टू अच्छा मिला नहीं,
बब्बू बोले गिला नहीं।



आ के बोले झब्बू जी,
चीज यही है हमको भाती,
क्या करना है लड्डू जी।
झूम रहे हैं बब्बू जी,
नाच रहे हैं झब्बू जी।

बातचीत करो—

1. बब्बू जी क्या-क्या लाये?
2. झब्बू जी को क्या पसन्द था?
3. तुम किन-किन जानवरों की सवारी करते हो ?
4. तुम कौन-कौन सी सब्जियाँ खाते हो ?

कविता देखकर पंक्ति पूरी करो—

- (क) घोड़ा लाए,
आ के बोले,
इस घोड़े पर,
..... लड्डू जी।
- (ख) बब्बू जी,
..... झब्बू जी,
ये तो बस,
हमें चाहिए।

मिलान करो—

- | | |
|---------|----------------|
| घोड़ा | चहचहाती है। |
| कृत्ता | हिन-हिनाता है। |
| चिड़िया | भौंकता है। |
| हाथी | दहाड़ता है। |
| शेर | चिंघाड़ता है। |

खोजो, घेरो और लिखो—

ख	र	गो	श	ती
तो	क	ग	ला	त
ता	दू	हा	थी	र
ब	भा	लू	शे	ब
क	बू	त	र	त
री	चि	ड़ि	या	ख

तोता

पढ़ो और देखकर लिखो—

झब्बू बब्बू लद्दू लड्डू कद्दू

सोचो और लिखो—

नीचे मिठाइयों, पक्षियों, जानवरों और सब्जियों के नाम लिखे हैं। इन्हें सारणी में लिखो।

लड्डू, मैना, जलेबी, आलू, घोड़ा,
 मूली, कौआ, रसगुल्ला, हाथी, कबूतर,
 भिण्डी, सियार, कद्दू, चिड़िया, भालू, गुलाबजामुन।

क्र.सं.	मिठाई	पक्षी	जानवर	सब्जी
1.	रसगुल्ला	मैना	सियार	मूली
2.	_____	_____	_____	_____
3.	_____	_____	_____	_____
4.	_____	_____	_____	_____

पढो और लिखो—

1. झब्बू जी को क्या-क्या पसन्द नहीं आया ?

2. झब्बू जी घोड़े पर क्यों नहीं चढ़े?

3. तुम बाज़ार से क्या-क्या लाना पसन्द करोगे?

पढो और लिखो—

मिलती—जुलती आवाज़वाले नये शब्द बनाओ।

आलू लालू भालू _____

पट्टू _____

झब्बू _____

क्या तुम मेरी माँ हो?

एक 'माँ चिड़िया' अपने अंडे पर बैठी थी। अचानक अंडा थोड़ा उछला।

“अरे वाह!” जल्दी ही अंडे में से मेरा बच्चा बाहर आएगा! फिर उसे ज़ोर की भूख लगेगी।

“मुझे अपने चूजे के खाने के लिए कुछ लेकर आना चाहिए!” माँ चिड़िया ने कहा।

फिर माँ चिड़िया फुर से उड़कर चली गई।

अंडा उछला। वो इतना उछला—कूदा,

उछला—कूदा कि उसमें से चिड़िया का बच्चा बाहर निकल आया!

“मेरी माँ कहाँ है?” उसने कहा। उसने माँ को चारों तरफ़ खोजा। उसने ऊपर देखा। उसे माँ नहीं दिखी। उसने नीचे देखा। उसे माँ नहीं दिखी। “चलो, मैं माँ को जाकर ढूँढता हूँ”, उसने कहा। यह कहकर वह चल पड़ा। वह पेड़ से गिरा और फिर नीचे, और नीचे गिरता ही चला गया। चिड़िया का बच्चा अभी छोटा था। वह उड़ नहीं सकता था, पर वह चल सकता था। “चलो मैं अपनी माँ को तलाशने निकलता हूँ”, उसने कहा। उसने माँ को पहले कभी नहीं देखा था। वह अपनी माँ को पहचानता भी न था। चलते-चलते वह अपनी माँ के पास से गुज़रा। परंतु उसने अपनी माँ को नहीं पहचाना।

फिर वह एक छोटी बिल्ली के पास पहुँचा। “क्या तुम मेरी माँ हो?” उसने बिल्ली से पूछा। बिल्ली बस उसे टकटकी लगाए घूरती रही। उसने कुछ नहीं कहा। बिल्ली उसकी माँ नहीं थी, इसलिए चिड़िया का बच्चा आगे बढ़ा। फिर वह एक मुर्गी के पास पहुँचा। “क्या तुम मेरी माँ हो?” उसने मुर्गी से पूछा। “नहीं, मुर्गी ने जवाब दिया।” छोटी बिल्ली उसकी माँ नहीं थी।

मुर्गी भी उसकी माँ नहीं थी। इसलिए चिड़िया का बच्चा आगे बढ़ा। “मुझे अपनी माँ को खोजना है।” उसने कहा। फिर वह एक कुत्ते के पास जा पहुँचा। “क्या तुम मेरी माँ हो?” उसने कुत्ते से पूछा। “मैं तुम्हारी माँ नहीं हूँ।

मैं कुत्ता हूँ”, कुत्ते ने जवाब दिया।

छोटी बिल्ली उसकी माँ नहीं थी।

मुर्गी भी उसकी माँ नहीं थी।

कुत्ता भी उसकी माँ नहीं थी। इसलिए चिड़िया का बच्चा फिर आगे बढ़ा।

उसे एक गाय मिली। “क्या तुम मेरी माँ हो?” उसने गाय से पूछा। “मैं तुम्हारी माँ कैसे हो सकती हूँ? मैं एक गाय हूँ।” गाय ने कहा। छोटी बिल्ली और मुर्गी उसकी माँ नहीं थी। कुत्ता और गाय भी उसकी माँ नहीं थे।

क्या उसकी माँ थी भी?

“मेरी माँ थी”, “मुझे यह पक्का पता है। मुझे उसे खोजना ही पड़ेगा। मैं उसकी अवश्य तलाश करूँगा। पक्का!”

चिड़िया के बच्चे ने कहा।

अब चिड़िया के बच्चे ने चलना छोड़ दिया। वह छोड़ने लगा। उसे एक टूटी-फूटी मोटरकार दिखाई दी।

क्या मोटरकार उसकी माँ हो सकती थी? नहीं, यह संभव नहीं था। चिड़िया का बच्चा रुका नहीं। तेजी से दौड़ता रहा।

फिर उसने नीचे की ओर झुककर देखा। उसे एक नाव दिखाई पड़ी। नाव को देखकर उसने कहा, “वह रही मेरी माँ!” वह नाव की तरफ देखकर चिल्लाया, परंतु नाव रुकी नहीं। नाव चलती ही गई।

फिर उसने सिर ऊपर उठाकर देखा। उसे एक बड़ा हवाई जहाज़ दिखाई दिया। “माँ, मैं यहाँ पर हूँ। वह चिल्लाया।

परंतु हवाई जहाज़ नहीं रुका। वह उड़ता चला गया। तभी चिड़िया के बच्चे को बड़ी-सी चीज़ दिखाई दी। यह ज़रूर उसकी माँ होगी। “माँ वहाँ है! “वह मेरी माँ है!” वह चिल्लाया। और दौड़कर उसके एकदम पास आया। “माँ, माँ! मैं यहाँ हूँ माँ!” उसने उस बड़ी मशीन से कहा। परंतु उस बड़ी मशीन से केवल “भप्प” की ज़ोरदार आवाज़ आई। “तो तुम भी मेरी माँ नहीं हो”, चिड़िया के बच्चे ने कहा।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

“तुम तो एक बड़ी मशीन हो। मुझे यहाँ से निकलना चाहिए!” परंतु चिड़िया के बच्चे के लिए वहाँ से भागना मुश्किल हो गया। तुरंत बड़ी मशीन ऊपर और ऊपर उठी। वह ऊपर उठी। और उसके साथ-साथ चिड़िया का बच्चा भी ऊपर और ऊपर उठा।

पर देखो वह बड़ी मशीन अब कहाँ जा रही है? “अरे, बाप रे!” यह बड़ी मशीन अब मेरे साथ क्या करेगी?

मुझे यहाँ से जल्दी निकालो!”

बस तभी वह बड़ी मशीन रुक गई।

“मैं कहाँ हूँ?” चिड़िया के बच्चे ने कहा।

“मैं अब घर जाना चाहती हूँ। मुझे अपनी माँ चाहिए।”

तभी कुछ हुआ। बड़ी मशीन ने चिड़िया के बच्चे को उठाकर उसे वापिस घोंसले में रख दिया।

चिड़िया का बच्चा अंत में अपने घर सुरक्षित पहुँच गया। बस तभी माँ चिड़िया भी पेड़ पर वापिस आई।

“क्या तुम्हें पता है कि मैं कौन हूँ?” उसने अपने बच्चे से पूछा।

“हाँ मुझे मालूम है कि तुम कौन हो,” चिड़िया के बच्चे ने जवाब दिया।

“तुम छोटी बिल्ली नहीं हो। तुम मुर्गी नहीं हो। तुम कुत्ता नहीं हो। तुम गाय नहीं हो। तुम नाव नहीं हो, न ही तुम हवाई जहाज़ हो, न ही तुम बड़ी मशीन हो! तुम एक चिड़िया हो, और तुम मेरी माँ हो।”

कहानी सुनाने के बाद बच्चों के साथ कुछ ऐसी बातचीत की जा सकती है—

- छोटी बिल्ली ने चूजे की बात का जवाब क्यों नहीं दिया होगा? वह चूजे को क्यों घूर रही होगी?
- अंडे से निकलने के बाद चूजे को उसकी माँ क्यों नहीं मिली?
- चिड़िया का बच्चा उड़ क्यों नहीं सकता था?
- ऐसे कौन-कौन से काम हैं जो तुम पहले नहीं कर पाते थे? पर अब अपने-आप कर लेते हो।
- चूजा मोटरकार को देखते ही कैसे समझ गया कि यह उसकी माँ नहीं हो सकती?

सोचो

- “मुझे पक्का पता है कि मेरी माँ थी।” चूजे ने कहा। चूजे को कैसे पता था कि वह उसकी माँ थी? वह तो अब तक अंडे में था।
- जब बहुत देर तक चूजे को उसकी माँ नहीं मिली तो वह दौड़ने लगा। दौड़ते-दौड़ते वह क्या सोच रहा होगा?
- चिड़िया को तो पता भी नहीं चला कि उसके पीछे से चूजा कहाँ-कहाँ भटकता रहा। बताओ, चूजे ने अपनी माँ को अपनी कहानी कैसे सुनाई होगी? फिर माँ ने उसे क्या कहा होगा?

अंतर बताओ

चूजे की माँ बाकी सबसे अलग थी। बताओ, उसमें ओर बाकी जानवरों में क्या अंतर था?

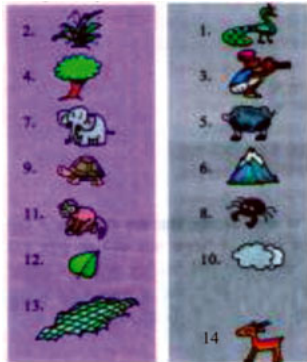
	चिड़िया	गाय	मुर्गी
पैर	-----	-----	-----
पंख	-----	-----	-----
पूँछ	-----	-----	-----
मुँह	-----	-----	-----
रंग	-----	-----	-----
आकार	-----	-----	-----

बच्चा अपनी समझ, अपनी भाषा में जो भी बोले उसे स्वीकार करें और उन्हें प्रोत्साहित करें। बच्चा जब इन सवालों के जवाब देगा तो आप यह देख सकेंगे कि उसके बोलने का कौशल कहाँ तक विकसित हुआ है। कहाँ उसे दिक्कत आ रही है। बच्चों से ऐसे सवाल जरूर करें जिनमें उन्हें बाहरी दुनिया से संपर्क करने के अवसर मिलें, जैसे—चिड़िया के बच्चे को क्या कहते हैं? अपने आसपास पता करो। इस अभ्यास के जवाब के लिए बच्चे अपने साथियों तथा अन्य लोगों से बात करेंगे।

उदाहरण 1— चित्र वर्ग पहेली भरो — बच्चों के पास विद्यालय आने से पहले अच्छा ख़ासा शब्द-भंडार होता है। वे शब्दों के धनी और शब्दों के जादूगर होते हैं। संकेतभर मिलने से ही वे अनेक शब्दों को गढ़ना सीख जाते हैं। उनकी इसी कुशलता, सृजनशीलता को ध्यान में रखकर चित्र वर्ग पहेली भरवाने का काम करवाया जा सकता है।

संकेत—

बाएँ ये दाएँ ऊपर से नीचे



1	6	2	3	5
	7		4	
8				
9			10	14
		11		
12		13		

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

उदाहरण 2 – कविता पूरी करो

धम्मक धम्मक आता
धम्मक धम्मक जाता
छम-छम, छम छम नाचे
टें टें करता शोर ।
..... कूदे इधर – उधर ।
..... ताके टुकर – टुकर ।

उदाहरण 3 – छोटी बिल्ली टकटकी लगाए चूजे को देखती रही । नीचे टकटकी की आवाज़ से मिलते-जुलते शब्द लिखे हैं । इनका इस्तेमाल करते हुए अपने दोस्तों को वाक्य सुनाओ-

- (क) टकटकी
- (ख) चटपटी
- (ग) फटफटी
- (घ) अटपटी
- (ङ) कटकटी
- (च) भटभटी

इस अभ्यास में बच्चों को दिए गए शब्दों से वाक्य बनाने हैं ।

उदाहरण 4 – सुनकर लिखो

बच्चों के साथ मिलकर उनकी कॉपी या कागज़ पर एक ऐसा वर्ग बनाएँ जिसमें कुल 16 ख़ाने हों । ख़ाने इतने बड़े हों कि बच्चे उसमें आसानी से चार अक्षरवाले शब्द भी लिख सकें । बच्चों से कहें कि-

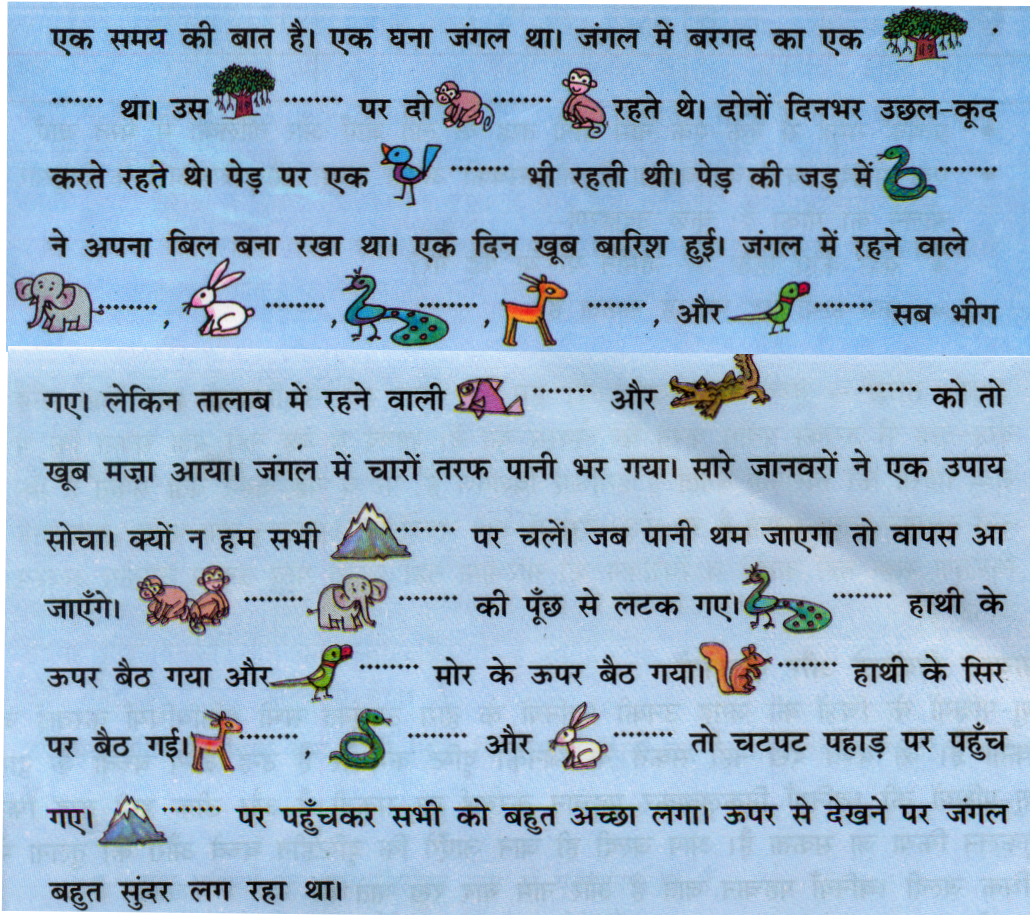
- मौखिक रूप से दिए गए निर्देश को ध्यान से सुनें ।
- सुनकर वर्ग में शब्द लिखें ।

कुछ निर्देश इस तरह दिए जा सकते हैं-

- पहली पंक्ति के पहले ख़ाने में अपना नाम लिखो ।
- दूसरी पंक्ति के तीसरे ख़ाने में अपनी मनपसंद मिठाई का नाम लिखो ।
- तीसरी पंक्ति के आखिरी ख़ाने में अपने दोस्त का नाम लिखो ।
- चौथी पंक्ति के दूसरे ख़ाने में सूरज का चित्र बनाओ, आदि ।

सलोनी			
		जलेबी	
			नेहा

उदाहरण 5— चित्र पर आधारित एक छोटी-सी मजेदार कहानी बनाएँ। इसमें एक रोचक बात यह रहेगी कि इस कहानी में पशु-पक्षियों के नाम की जगह केवल चित्र होंगे। बच्चे उन चित्रों की पहचान करते हुए उनके नाम लिखेंगे और कहानी को आगे बढ़ाएँगे। कहानी कुछ इस तरह है।



किसी से कहना मत

एक रात की बात है। टीटू अपने खेत की रखवाली कर रहा था। अचानक उसे दिखा— आसमान से उतरता पंखोंवाला हाथी।

हाथी बहुत मिलनसार निकला। वह टीटू से बात करने लगा। कुछ ही देर में दोनों में दोस्ती हो गई। हाथी ने टीटू को बताया— “हमारे यहाँ पर तो तरह-तरह की मिठाई और फल होते हैं, बहुत बड़े-बड़े। हमारे

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

अंगूर तुम्हारे सेब जितने और सेब तरबूज जितने बड़े होते हैं।” टीटू ने कहा— “अरे यार, कभी मुझे भी अपने साथ ले चलो।”

हाथी बोला— “ठीक है, अगली बार तुम्हें ले तो चलूँगा, पर किसी से कहना मत। कल ठीक इसी वक़्त मिलना यहाँ पर।” और हाथी उड़ गया आसमान में। अब टीटू से रहा न गया। उसने हाथीवाली बात अपनी पत्नी बसंती को बता दी। बसंती भी टीटू के साथ जाने की ज़िद करने लगी। टीटू ने कहा— “ठीक है, तुम भी चलना, पर किसी से कहना मत।” लेकिन बसंती से भी रहा न गया। उसने बता दिया चाची को, चाची ने बताया चाचा को, चाचा ने दादा को, दादा ने दादी को, दादी ने... और सब के सब आसमान की सैर के लिए आ गए बाग में।



हाथी आया। इतने आदमी— औरतों को देखकर घबराया; पर टीटू और उसकी पत्नी ने उसे सभी को ले जाने के लिए मनाया। फिर टीटू ने पकड़ी हाथी की पूँछ, बसंती ने पकड़े टीटू के पैर। इस तरह सब के सब लटक गए एक—दूसरे के पैर पकड़कर। हाथी उड़ चला आसमान में।



बसंती ने पूछा— “टीटू, वहाँ अंगूर कितने बड़े होते हैं?”

“सेब जितने बड़े।” “और सेब कितने बड़े होते हैं?”

“तरबूज जितने।” “तो तरबूज कितने बड़े होते हैं?”

“बहुत बड़े।” “कितने बड़े?” “ए... इतने बड़े!” टीटू ने हाथ फैलाकर बताया। फिर क्या! सब गिरे नीचे धड़ाम—धड़ाम। कोई पीठ के बल, तो कोई कंधे के बल गिरा। और सबके ऊपर गिरा टीटू आराम से।

बातचीत करो—

1. अगर वहाँ अंगूर सेब जितने, सेब तरबूज जितने होंगे, तो लड्डू, जलेबी, आम, केले आदि चीजें वहाँ कितनी बड़ी होंगी?
2. यदि तुम्हारे पंख होते तो तुम क्या करते?

3. टीटू ने हाथीवाली बात सबसे पहले किसे बताई?
4. लोगों को हाथीवाली बात का पता कैसे चला?
5. टीटू आसमान में उड़नेवाले हाथी के बारे में किसी को नहीं बताता तो क्या होता?
6. तुम अपनी बातें किन-किन को बताते हो?
7. यदि हाथी की सूँड़ न होती तो क्या होता?

देखो, सोचो और जोड़ी बनाओ—

जोड़ी बनाओ—

चाचा—चाची

दादा—दादी

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

एक जैसी आवाजवाले शब्द बनाओ।

टीटू

नीटू

.....

.....

टक

.....

.....

.....

चमचम

.....

.....

.....

इसी तरह के नए शब्द बनाओ।

सोचो और लिखो—

(क) चाचा बोले

चाची बोलीं

..... आये

मामी आईं

मौसा लाए

..... लाईं

दादा नाचे

..... नाचीं

..... हँसे

नानी हँसी

कहानी पढ़कर पंक्ति पूरी करो—

(मिलनसार, टीटू, रखवाली, पत्नी, आसमान)

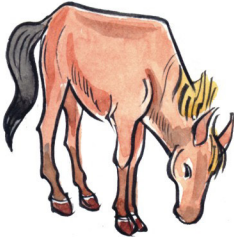
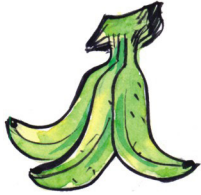
1. टीटू अपने खेत की कर रहा था।
2. बसंती भी के साथ जाने की जिद करने लगी।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

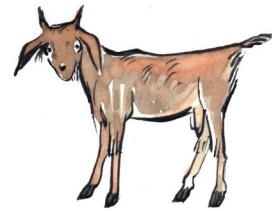
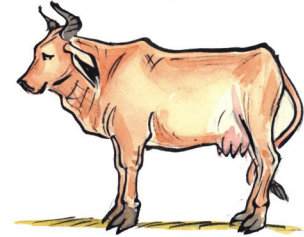
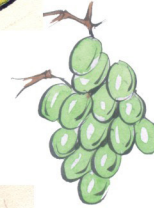
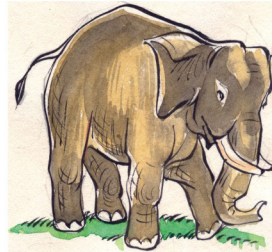
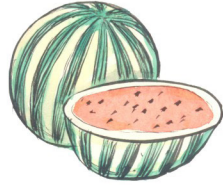
3. टीटू और उसकी ने उसे सभी को साथ ले जाने के लिये मनाया ।
4. हाथी उड़ चला में।
5. हाथी बहुत निकला ।

खोजो, घेरो और लिखो—

नीचे दिए गए चित्रों को देखकर सारणी में मिठाईयों, जानवरों और फलों के नाम ढूँढकर घेरा लगाओ और नीचे दिए गए खाली जगहों को भरो।



बं	अं	गू	र	ल	ड्	डू
द	गा	य	आ	र	क	ब
र	खा	जू	म	स	बु	क
त	र	बू	ज	गु	मे	री
अ	की	ज	के	ल्ला	चू	हा
ना	र	ले	ला	हा	थी	घो
र	जी	बी	प	पी	ता	ड़ा



बंदर

.....

.....

.....

.....

कहानी में 'अ' अक्षर से शुरु होनेवाले शब्दों को ढूँढकर लिखो।

.....

.....

.....

कहानी पढ़ो और लिखो—

1. टीटू ने हाथीवाली बात किसे बताई?

.....

2. सब लोग किस पर लटककर आसमान में उड़े?

.....

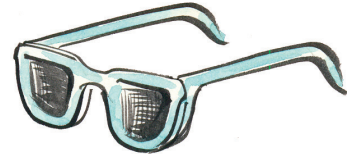
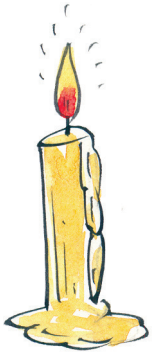
3. टीटू ने हाथी को कहाँ से पकड़ा?

.....

पहेलियाँ

पहेली बूझो—

- क) दिन में सोये, रात में रोये,
जितना रोये उतना खोये।
- (ख) राजा रानी सुनो कहानी
एक घड़े में दो रंग पानी।
- (ग) गोल हूँ पीला हूँ
खाओ तो मुँह खट्टा
- (ङ) चढ़े नाक पर, पकड़े कान,
बोलो – बोलो कौन शैतान।
- (च) हमने देखा ऐसा बन्दर
जो उछले पानी के अन्दर।



चित्र पहेली

क		ल		
ल				ला
	छ			
				घ
	री			



नीचे दी गई वर्ग-पहेली में से फलों के नाम खोजकर लिखो।

ली	अ	आ	म	के
ची	ना	ड	प	ला
अ	ना	र	पी	जा
क	स	म	ता	मु
ना	श	पा	ती	न

लीची

बूझो मेरा नाम बनाओ मेरा चित्र

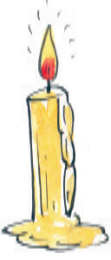


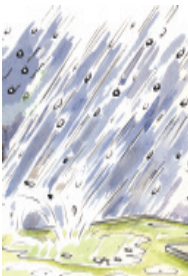
दोस्तों के साथ पहेली बनाने और बूझने का खेल खेलो।

मेरी लाल चोंच है हरे पंख हैं। -----	दो चक्केवाली हूँ घंटी मेरी बजती टिन-टिन। -----
लम्बी हूँ लिखने के काम आती हूँ। -----	लाल हूँ गोल हूँ मीठा हूँ। -----
पानी में रहता हूँ कड़ी पीठ है, धीरे-धीरे चलता हूँ। -----	चार पैर हैं, बैठने के काम आती हूँ। -----
कद के छोटे, काम के हीन, कान के पास बजाते बीन। -----	हरी-हरी मछली के हरे-हरे अण्डे, जल्दी से बूझो और खोजो ये अण्डे। -----

पहेलियाँ पढ़ो और सही चित्र के सामने लिखो।

काली हूँ, निराली हूँ,
मीठी बोली वाली हूँ।
आसमान से टपका हूँ,
बटन दबाते चमक दिखाऊँ,
अँधेरे को दूर भगाऊँ।
जल्दी से मुझको थामो,

मैं पिघलती हूँ पर बर्फ नहीं हूँ,
जलती हूँ पर दीपक नहीं हूँ।
न बाजार में बिकता हूँ,
ज्यादा देर न टिकता हूँ,
नहीं तो बस पानी मानो।

	<hr/> <hr/> <hr/> <hr/>
	<hr/> <hr/> <hr/> <hr/>
	<hr/> <hr/> <hr/> <hr/>
	<hr/> <hr/> <hr/> <hr/>



इकाई-4

साहित्य की अनुभूति

- साहित्य से हम क्या समझते हैं?
- साहित्य की विभिन्न विधाएँ
 - एक टोकरी-भर मिट्टी (कहानी)
 - उदात्त संगीत-मुक्तक (कविता)
 - पिस्ते बादाम (कहानी)
 - ढूँगी फूल कनेर के (कविता)
 - प्रायश्चित (कहानी)
 - गुलेलबाज लड़का (कहानी)

अध्याय – 15

साहित्य की अनुभूति

परिचय :

जब हम भाषा की किसी भी किताब में से किसी भी विधा को पढ़ने और उसमें डूबने लगते हैं तो उसका अर्थ होता है कि हम कुछ क्षणों के लिए संसार की जंजीरों से मुक्त हो जाते हैं। हमें इस स्वतन्त्रता का क्षणिक ही सही, एक अहसास साहित्य दिलाता है।

इसमें हम समझने की कोशिश करेंगे कि साहित्य क्या है? साहित्य की आवश्यकता क्यों है? साहित्य से हम क्या समझते हैं? साहित्य की विभिन्न विधाएँ कौन-कौन सी हैं व इन विधाओं को पढ़ने-पढ़ाने का तरीका क्या होना चाहिए। वस्तुतः हममें से अधिकतर व्यक्ति साहित्य की अनुभूति से अनजान होते हैं। प्रस्तुत इकाई में साहित्य की इन्हीं बातों पर चर्चा करने का प्रयास किया गया है।

उद्देश्य :

- साहित्य को क्यों पढ़ें? इस प्रश्न को समझ पाना।
- साहित्य क्या है? इस प्रश्न को हम समझ पाएँगे।
- साहित्य के विस्तृत रूप को समझ पाएँगे?
- साहित्य की विभिन्न विधाओं को कैसे पढ़ना-पढ़ाना चाहिए आदि की समझ बना पाएँगे।
- साहित्य की विभिन्न विधाओं को पहचान सकेंगे?
- साहित्य पर अपने स्वतन्त्र विचार प्रदर्शित कर सकेंगे।
- साहित्य का उपयोग स्कूली एवं सामाजिक जीवन में समझ सकेंगे।

साहित्य से हम क्या समझते हैं?

साहित्य एक ऐसा शब्द है जिसमें भाषा की सभी प्रकार की विधाओं का समावेश है। चाहे वह कहानी हो, कविता हो, गीत हो, व्यंग हो, पत्र हो, पहेली हो, संस्मरण हो, यात्रा-वृत्तान्त हो, डायरी-लेख हो, निबन्ध हो, हास्य हो या लोकगीत हो। इन सभी विधाओं को साहित्य की श्रेणी में रखा जाता है।

साहित्य की परिभाषा को दो-चार लाइनों में बाँधना एक कठिन कार्य है क्योंकि भाषा की किसी भी विधा से यदि व्यक्ति को आनन्द की अनुभूति होती है तो वह साहित्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। साहित्य की विधाओं को लेकर अलग-अलग लोगों के अपने-अपने अलग-अलग सोच-विचार हैं।

जब लोगों से इस बारे में जानना चाहा तो अलग-अलग विचार निकल कर सामने आए हैं। कुछ लोगों

ने जहाँ साहित्य का मतलब बहुत सारी कहानियों व कविता की किताबों से लिया है तो कुछ अन्य ने इसे कल्पना जगत में सैर कराने का माध्यम बताया है। कई लोगों ने साहित्य को अपनी भावनाओं को उकेरता हुआ आईना माना है जिसमें वह स्वयं के जीवन का, अपनी खुशी, अपने गम का प्रतिबिम्ब देख पाता है। साहित्य सामाजिक नियमों को समझने में मदद करता है, वहीं कहानियों आदि से पुरातनकालीन समाज को जानने समझने का अवसर मिलता है। कुछ का कहना है कि साहित्य इतिहास को तो नहीं बता पाता परन्तु उस काल की अलग-अलग सोच के बारे में बताता है। यदि इन सब विचारों का निचोड़ देखें तो हम पाते हैं कि साहित्य जीवन के विभिन्न पक्षों/आयामों से न केवल हमारा परिचय कराता है बल्कि उन आयामों का अनुभव भी कराता है बिना वास्तविक अनुभव किये। उदाहरण के लिए किसी ऐतिहासिक कहानी को पढ़ते हुए हम उस काल, उस समय के लोगों के जीवन, परिस्थितियों और कठिनाइयों, सभी को महसूस कर रहे होते हैं। साहित्य के बारे में एक पाठक का विचार है कि साहित्य माने एक कॉफी का कप, शान्ति और एक अच्छी सी किताब। वहीं एक पाठिका ने इसे गीत की पंक्तियों से कुछ इस तरह अभिव्यक्त किया है।

‘कोई ला के मुझे दे-दे

एक छुट्टी वाला दिन

एक अच्छी सी किताब’

इसके साथ ही जिन इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो सकती, साहित्य उनके बारे में सोचने की भी अनुमति देता है।

साहित्य की मुख्यतः दो विधाएँ हैं— गद्य और पद्य। सामान्यतः गद्य को विचार प्रधान साहित्य की कोटि में और पद्य को भाव प्रधान साहित्य की कोटि में रखा जाता है। पद्य अर्थात् कविता को भावात्मक तथा गद्य को बौद्धिक, तथ्यात्मक और सूचनात्मक अभिव्यक्ति की विधा माना जाता है। अतः दोनों की शिक्षण प्रविधि में भी अंतर हो जाता है।

यद्यपि गद्य-विधा में भी इस तरह की ललित रचनाएँ होने लगी हैं जिन्हें हम कविता के समान रसात्मक और भावोन्मेषकारी रचना कह सकते हैं तथापि गद्य मुख्यतः ज्ञान-विज्ञान की अभिव्यक्ति का माध्यम है। ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, दर्शन, मनोविज्ञान, कला-कौशल, वाणिज्य-व्यवसाय आदि से संबंधित रचनाओं का सृजन गद्य की विधा में ही संभव है। हमारे समस्त सामाजिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक क्रियाकलाप भी गद्य के ही माध्यम से सम्पन्न होते हैं। इस प्रकार गद्य का क्षेत्र बहुत व्यापक है और इसकी अनेक विधाएँ और अनेक शैलियाँ हैं। इनमें से कुछ उदाहरण हम आगे पढ़ेंगे।

क्या हमने कभी सोचा है कि हमें या हमारे समाज को साहित्य की आवश्यकता क्यों है? वे क्या कारण हैं कि लोगों को साहित्य का अध्ययन करना चाहिए। इस तरह के प्रश्नों का जवाब निश्चित तौर पर हर एक व्यक्ति का अलग होगा और सभी लोग साहित्य की आवश्यकता, लाभ एवं गुणों को अलग-अलग रूप में प्रदर्शित करेंगे।

इस तरह सभी अपने-अपने तरीके से साहित्य की आवश्यकता पर तर्क देते हैं। जैसे साहित्य के जरिए परम्परा बनती है, साहित्य हमें पढ़ने की आदत डालने में मदद करता है, इसके द्वारा हमें आनन्द व सुख

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

प्राप्त होता है, साहित्य के द्वारा हमें संस्कृति एवं इतिहास की जानकारी प्राप्त होती है, साहित्य से हमें जीवन जीने की सही प्रेरणा मिलती है आदि। इस प्रकार यदि हम मोटे तौर पर सोचें तो साहित्य पढ़ने का जो मुख्य उद्देश्य आएगा वह है साहित्य का सन्दर्भ जीवन मात्र से है क्योंकि जीवन में हमें जो क्षण सुख या आनन्द देते हैं ऐसा ही आनन्द व सुख हमें साहित्य को पढ़ने से मिलता है।

हमें साहित्य कुछ समय के लिए इस सांसारिक मोहमाया से दूर ले जाता है या यूँ कहें कि यह हमें इस भागम-भाग की दुनिया में कुछ समय आराम करने का मौका प्रदान करता है। आप सोच रहे होंगे कि ऐसा कैसे होता है? तो जरा आप लोग सोचिए कि जब हम साहित्य की किसी विधा को (कहानी, कविता, नाटक, जीवनी आदि) पढ़ने बैठते हैं तो हम उसमें डूबने लगते हैं और हमें यह पता नहीं होता कि हम कहाँ बैठे हैं, दुनिया में क्या हो रहा है, हमें इतना सारा कार्य या काम करना है। इस तरह साहित्य हमें इन बंधियों से मुक्ति दिलाता है। हमें वास्तविक स्वतन्त्रता का अहसास साहित्य ही दिलाता है चाहे वह क्षणिक ही क्यों न हो। साहित्य हमें स्वतन्त्र अभिव्यक्ति के द्वारा भी आनन्द व स्वतन्त्रता का अहसास कराता है। वह तब भी होता है जब हम साहित्य के पढ़े भाग का वर्णन स्वतन्त्र रूप से कहीं और कर रहे होते हैं।

अब आप लोग सोच रहे होंगे कि साहित्य का भाषा विषय में क्या उपयोग है? इस तरह के प्रश्न उठना लाजमी हैं लेकिन इस प्रश्न का उत्तर है साहित्य और भाषा का बहुत गहरा सम्बन्ध है क्योंकि जब हम साहित्य से विभिन्न प्रकार के सुख, आनन्द को प्राप्त करते हैं तो उसमें भाषा का बहुत बड़ा हाथ होता है। भाषा के द्वारा ही साहित्य की विधा को पढ़ते हैं। इस प्रकार साहित्य हमारी भाषा को समृद्ध बनाता है, सोच को विकसित व विस्तृत करता है।

यह मान सकते हैं कि साहित्य हमारे भाषा विकास के लिए एक अमूल्य धरोहर है। इसके सहारे भाषा समृद्ध और विकसित होती रहती है। भाषा को समझने, बोलने, पढ़ने, सुनने के लिए हमें साहित्य को हमेशा पढ़ते रहना चाहिए।

इस इकाई में इन रचनाओं को रखने का मुख्य उद्देश्य ही यही है : (1) पढ़ने की आदत विकसित करना। (2) विभिन्न प्रकार के एवं विभिन्न भाषाओं के साहित्यों से परिचित कराना। (3) अच्छे साहित्य के संकलन की प्रकृति को बढ़ावा देना।

कुछ प्रश्न :

- साहित्य के संदर्भ में आपके क्या विचार हैं? क्या आपको लगता है कि आपको, आपके मित्रों को, बच्चों को साहित्य पढ़ना चाहिए? और क्यों?
- 'फुरसत के क्षण साहित्य के संग' क्या मनोरंजन के वर्तमान साधनों के मध्य आज भी सार्थक है, क्यों और कैसे? अपनी पठन सामग्री के आधार पर विचार करें।

हम सभी अलग-अलग तरह से सोचते हैं, हमारे विचारों और अभिव्यक्तियों पर हमारे दृष्टिकोण, परिस्थितियों व अनुभवों का बहुत प्रभाव पड़ता है तथा यही प्रभाव लेखन की शैलियों में भी दिखाई देता है। विभिन्न लेखकों की रचनाओं को पढ़कर आप इनके लिखने की शैलियों को समझ पाएँगे। कुछ रचनाकारों ने समाज का यथार्थ

चित्रण अपनी रचनाओं में किया है कुछ ने कल्पना आधारित संसार बुना है तो कुछ ने व्यंग्य की शैली को अपनाते हुए अपने विचारों को पैना रूप दिया है।

कुछ रचनाओं में बाल मन की भावनाओं का बहुत ही सजीव वर्णन किया गया है और कुछ रचनाओं में आज़ादी, भ्रष्टाचार, जाति जैसे गंभीर मुद्दों पर सवाल उठाये गए हैं।

संकलन में कुछ कविताएँ—कहानियाँ तो ऐसी हैं जिनके साथ अभ्यास दिये गए हैं। ये अभ्यास आपको साहित्य को समझने में मदद करेंगे। साथ ही कहानी को विभिन्न आयामों से सोचने का मौका देंगे।

संकलन के दूसरे हिस्से में कुछ ऐसी कहानियाँ—कविताएँ हैं जिन्हें पढ़कर आप उसका आनन्द ले सकें, साहित्य को महसूस कर सकें। आप अपनी रुचि के साहित्य का अधिकाधिक अध्ययन एवं संकलन भी कर सकते हैं।

आप संकलित साहित्य का अध्ययन करने के साथ—साथ कुछ इस तरह की गतिविधियाँ भी कर सकते हैं, जिनसे साहित्य के प्रति आपकी समझ और पुख्ता होगी। मसलन—

- संकलित साहित्य का अध्ययन कर उसका अपनी भाषा में संक्षेपीकरण करें।
- नाटक को कहानी, कहानी को कविता में बदलना अर्थात् विधा परिवर्तन करके आप एक कहानी को कई तरह से उपयोग कर सकते हैं।
- किसी रचना का नाटक मंचन करना : मंचन करने में आप किन—किन बातों का ध्यान रखेंगे? जैसे—सारगर्भित भाषा शैली, शब्दों का चुनाव कैसा होगा, सृजनात्मकता व रोचकता का समावेश एवं प्रभावी प्रस्तुतीकरण आदि।
- किसी रचना को यदि आपको विभिन्न स्तर के श्रोताओं को सुनाना है तो आपकी तैयारी कैसी होगी या आप किन—किन बातों का ध्यान रखेंगे? जैसे अगर 6—7 साल के बच्चों को इस संकलन की कोई रचना सुनानी है तो उसकी भाषा में क्या बदलाव करेंगे, घटनाओं का क्रम कैसे रखेंगे और प्रस्तुतीकरण के समय किन—किन चीजों का ध्यान रखेंगे? ऐसे ही अगर आपका श्रोता 7वीं या 8वीं कक्षा का बच्चा है तो उसके साथ आप किन—किन बातों का समावेश करेंगे?

आपसे अपेक्षा है कि आप प्रत्येक रचना को ध्यान से पढ़ें एवं गहराई से समझें। रचनाओं को केवल घटनाओं का एक क्रम ही न समझें बल्कि इनमें दिख रहे पात्रों के भावों और उनके चरित्र के अलग—अलग पहलुओं को समझें। इन रचनाओं पर आपस में चर्चा करें।

आपने भी अब तक कई कहानियाँ सुनी या पढ़ी होंगी। अपने क्षेत्र के लेखकों की रचनाओं को भी सुना होगा या पढ़ा होगा। आप भी उन कहानियों का एक संकलन बनाएँ ताकि अन्य लोग भी इन्हें पढ़ें, ठीक वैसे ही जैसे आप अन्य लेखकों की रचनाएँ इस कोर्स में पढ़ रहे हैं। इसका एक प्रभाव यह भी होगा कि आपमें अच्छे साहित्य के संकलन की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलेगा। आपके साहित्य भंडार में वृद्धि होगी। तो इन रचनाओं को पढ़ें और साहित्य का आनन्द महसूस करें।

साहित्य की विभिन्न विधाएँ एक टोकरी-भर मिट्टी (कहानी)

किसी श्रीमान जमींदार के महल के पास एक गरीब अनाथ विधवा की झोंपड़ी थी। जमींदार साहब को अपने महल का हाथ उस झोंपड़ी तक बढ़ाने की इच्छा हुई। विधवा से बहुत बार कहा कि अपनी झोंपड़ी हटा ले। पर वह तो कई जमाने से वहीं बसी थी। उसका प्रिय पति और इकलौता पुत्र भी उसी झोंपड़ी में मर गया थे। पतोहू भी एक पाँच बरस की कन्या को छोड़कर चल बसी थी। अब यही उसकी पोती इस वृद्धाकाल में एकमात्र आधार थी। जब कभी उसे अपनी पूर्व स्थिति की याद आ जाती तो मारे दुःख के फूट-फूटकर रोने लगती थी और जब से उसने अपने श्रीमान पड़ोसी की इच्छा का हाल सुना तब से वह मृतप्राय हो गई थी। उस झोंपड़ी में उसका मन इतना लग गया था कि बिना मरे वहाँ से वह निकलना ही नहीं चाहती थी। श्रीमान के सब प्रयत्न निष्फल हुए। तब वे अपनी जमींदारी चाल चलने लगे। बाल की खाल निकालने वाले वकीलों की थैली गरम कर उन्होंने अदालत से झोंपड़ी पर अपना कब्जा कर लिया और विधवा को वहाँ से निकाल दिया। बिचारी अनाथ तो थी ही। पास-पड़ोस में कहीं जाकर रहने लगी।

एक दिन श्रीमान उस झोंपड़ी के आसपास टहल रहे थे और लोगों को काम बतला रहे थे कि इतने में वह विधवा हाथ में एक टोकरी लेकर वहाँ पहुँची। श्रीमान ने उसको देखते ही अपने नौकरों से कहा कि उसे वहाँ से हटा दो। पर वह गिड़गिड़ाकर बोली— “महाराज, अब तो यह झोंपड़ी तुम्हारी ही हो गई है। मैं उसे लेने नहीं आई हूँ। महाराज क्षमा करें तो एक बिनती है।” जमींदार साहब के सिर हिलाने पर उसने कहा— “जब से यह झोंपड़ी छूटी है तब से मेरी पोती ने खाना-पीना छोड़ दिया है। मैंने बहुत कुछ समझाया पर वह एक नहीं मानती। यही कहा करती है अपने घर चल, वहीं रोटी खाऊँगी। अब मैंने यह सोचा है कि इस झोंपड़ी में से एक टोकरी-भर मिट्टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी पकाऊँगी। इससे भरोसा है कि वह रोटी खाने लगेगी। महाराज, कृपा करके आज्ञा दीजिए तो इस टोकरी में मिट्टी ले जाऊँ।” श्रीमान ने आज्ञा दी।

विधवा झोंपड़ी के भीतर गई। वहाँ जाते ही उसे पुरानी बातों का स्मरण हुआ और उसकी आँखों से धारा बहने लगी। अपने आन्तरिक दुःख को किसी तरह समहालकर उसने अपनी टोकरी मिट्टी से भर ली और हाथ से उठाकर बाहर ले आई। फिर हाथ जोड़कर श्रीमान से प्रार्थना करने लगी— “महाराज, कृपा करके इस टोकरी को जरा हाथ लगाइए जिससे कि मैं उसे अपने सिर पर धर लूँ।” जमींदार साहब पहले तो बहुत नाराज हुए पर जब वह बार-बार हाथ जोड़ने लगी और पैरों पर गिरने लगी तो उनके भी मन में कुछ दया आ गई। किसी नौकर से न कहकर आप ही स्वयं टोकरी उठाने को आगे बढ़े। ज्यों ही टोकरी को हाथ लगाकर ऊपर उठाने लगे त्यों ही देखा कि यह काम उनकी शक्ति से बाहर है। फिर तो उन्होंने अपनी सब ताकत लगाकर टोकरी को उठाना चाहा पर जिस स्थान पर टोकरी रखी थी वहाँ से वह एक हाथ-भर ऊँची न हुई। वह लज्जित होकर कहने लगे— “नहीं, यह टोकरी हमसे न उठाई जावेगी।”

यह सुनकर विधवा ने कहा— “महाराज, नाराज न हों आपसे तो एक टोकरी-भर मिट्टी नहीं उठाई जाती और इस झोंपड़ी में तो हजारों टोकरियाँ मिट्टी पड़ी है। उसका भार आप जनम-भर क्या उठा सकेंगे? आप ही इस बात पर विचार कीजिए।”

जमींदार साहब धन-मद से गर्वित हो अपना कर्तव्य भूल गए थे पर विधवा के उपरोक्त वचन को सुनते ही उनकी आँखें खुल गईं। कृतकर्म का पश्चाताप कर उन्होंने विधवा से क्षमा माँगी और उसकी झोंपड़ी वापस दे दी।

माधवराव सप्रे

ढूढू-

1. इस कहानी में आए 05 मुहावरों का संकलन कीजिए व अर्थ लिखिए।
2. पं.माधवराव सप्रे की रचनाओं का संकलन करें।

अपनी समझ से-

1. इस कहानी का सारांश लिखिए।
2. इस कहानी की पात्र गरीब अनाथ विधवा का चरित्र 'पिस्ते बादाम' कहानी की दादी मां के चरित्र से किस अर्थ में समान है? स्पष्ट कीजिए।
3. इस कहानी से मिलने वाली शिक्षाएँ बच्चों के समक्ष कैसे रखेंगे?

गतिविधि-

1. एकांकी के रूप में बच्चों द्वारा इसका मंचन करावें।

भाषा की बात

1. नीचे कुछ उत्तर दिए गए हैं। आप इन उत्तरों के लिए प्रश्न बनाएँ—
(अ) जमींदार ने अदालत से झोपड़ी पर अपना कब्जा कर लिया।
(ब) इस झोपड़ी में से एक टोकरी मिट्टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी बनाऊँगी।
(स) जमींदार साहब धन-मद से गर्वित हो अपना कर्तव्य भूल गए थे।

उदात्त संगीत – मुक्तक (कविता)

माना कि विषमताएँ दुनिया को घेरे हैं
उस घेरे को भी घर धैर्य से बढ़े चलो।
उल्लास भरा है तो मंजिल तय ही होगी
मंजिल को भी सोपान बनाकर चढ़े चलो।। (1)

निश्चय समझें जो कभी तुम्हारा बाधक था
वह देख तुम्हारा तेज स्वयं साधक होगा।
तुम अपने आदर्शों के आराधक हो लो
पथ स्वयं तुम्हारे पथ का आराधक होगा।। (2)

किसको न बुढ़ापा आता है इस जीवन में
पर वह क्या, जिसकी यौवन में झुक जाय कमर।
जो होना है, जब होगा तब होगा, लेकिन
पहले ही ध्वस्त हुए क्यों अनहोने भय पर? (3)

जब तक जीना है तब तक मर न सकेंगे हम
मरने वाले का हाथ कौन है पकड़ सका?
यों तो प्राणों का खेल जगत भर में फैला
पर दो साँसों को कौन सदा को जकड़ सका? (4)

अकबर महान हो यदि अपने ऐश्वर्यों में
शंकराचार्य ने यदि दिमाग आला पाया।
तो मैं भी तो हूँ शहंशाह अपने दिल का
मैं क्यों मानूँ मैं छोटा ही बन कर आया।। (5)

—डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र

अपनी समझ से—

1. “ माना कि विषमताएँ दुनिया को घेरे हैं।

उस घेरे को भी घर धैर्य से बढ़े चलो।”

बच्चों के सामने इन पंक्तियों के अर्थ को सरल शब्दों में कैसे स्पष्ट करेंगे।

1. डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र की रचनाओं का संकलन कीजिए।

2. मुक्तक से क्या तात्पर्य है?

पिस्ते बादाम (कहानी)

“दादी माँ, यह देखो”, श्याम दौड़ता-दौड़ता अपनी दादी माँ के पास आया और बोला।

“क्या है?” दादी माँ काम में लगी थी, उसने उसकी ओर देखे बिना ही झल्लाकर पूछा।

“देखो ना, मैं क्या खा रहा हूँ”, श्याम ने मुट्ठी खोलते हुए कहा

“क्या खा रहा है, रे?” दादी माँ ने फिर पूछा।

“देखो ना, मेरे दोस्त सुनील की माँ ने दिए हैं”, श्याम ने उत्तर दिया।

“अरे, यह तो पिस्ते-बादाम हैं!” दादी माँ ने हैरत से कहा— “उसके यहाँ ये कहाँ से आए?”

श्याम बोला — “सुनील का बड़ा भाई दुबई से आया है ना! वह ले आया है। बहुत-सा सामान लाया है। सुनील कह रहा था, हम यह सामान बेचेंगे और खूब पैसा कमाएँगे।”

तब तक श्याम का छोटा भाई रमेश और छोटी बहन मोहिनी, दोनों भीतर के कमरे से बाहर आ गए थे। मोहिनी ने पूछा, “श्याम, तुम्हारे पास क्या है? मुझे भी खिलाओ ना!”

श्याम ने मुँह चिढ़ाते हुए कहा — “मुझे भी खिलाओ ना! चल हट तू मुझे कुछ खिलाती है।”

दादी माँ ने उसे डाँटते हुए कहा, “क्यों नहीं इन सबको खिलाते? दोनों को दो-दो पिस्ते बादाम दो”

श्याम ने रूठी-सी आवाज़ में कहा, “ये हैं ही कितने जो दोनों को भी खिलाऊँ?”

“देखें, कितने हैं?” रमेश ने कुछ सोच-समझकर प्रस्ताव रखा।

श्याम ने जैसे ही अपनी मुट्ठी खोली, रमेश ने झपटकर दो-चार पिस्ते-बादाम हथिया लिए और दो-चार पिस्ते-बादाम नीचे गिर गए, वे मोहिनी ने लपककर ले लिए।

रमेश ने मुफ्त में हाथ लगे पिस्ते-बादाम जल्दी से अपने मुँह में डाल लिए परंतु मोहिनी ऐसा न कर सकी। श्याम ने उसे एक घूँसा रसीद कर कहा, “क्यों री, तू क्यों झपट्टा मारती है?”

मोहिनी ने उसे फटकारते हुए कहा — “मैंने क्या झपट्टा मारा? मुझे तो ये भगवान की धरती से मिले।”

“भगवान की धरती से मिले!” श्याम ने उसकी चोटी पकड़ ली और कहा, “बड़ी आई है भगवान की धरती से उठानेवाली! इधर वापस कर मुझे!” लेकिन मोहिनी ने भी वे पिस्ते-बादाम जल्दी से अपने मुँह में डाल लिए। इतने में रमेश ने थू-थू कर पिस्ते-बादाम थूक दिए। वह बोला, “ये तो बड़े कड़वे हैं। मोहिनी, ये जहर जैसे कड़वे हैं, तुम नहीं खाना।”

मोहिनी ने आँखे मटकाते हुए कहा, “नहीं, नहीं, मेरेवाले तो बड़े मीठे हैं।”

रमेश ने दादी माँ से कहा, “माँ मुझे एक चवन्नी दो, मैं भी लाऊँगा।”

दादी माँ ने कहा, “पागल हुए हो क्या? चवन्नी के पिस्ते बादाम नहीं मिलते। एक चवन्नी में एक ही

बादाम मिलेगा।”

“अच्छा?” बच्चों की एक साथ चीख-सी निकल पड़ी।

“और नहीं तो क्या? पिस्ते बादाम सस्ते हैं क्या? सौ सवा सौ रुपए के एक किलो होंगे पिस्ते, और अस्सी रुपए के एक किलो से क्या कम होंगे बादाम। हम गरीब लोगों को भगवान की ये चीजें खाना मना है,” दादी माँ ने उन्हें समझाया।

“दादी माँ, मैंने ये पिस्ते-बादाम कभी देखे तक नहीं थे। आज ही देखें हैं।” मोहिनी ने अजीब से स्वर में कहा।

“बेटी, तुम देखती कैसे? घर में ये चीजें आएँ तब तो तुम देखो। आज पहले का-सा ज़माना तो नहीं” और दादी माँ थैले में से सब्ज़ियाँ निकालने लगीं।

रमेश ने दादी माँ से पूछा, दादी माँ, तुमने कभी पिस्ते-बादाम खाए हैं?”

दादी माँ ने उत्तर दिया, “खाए क्यों नहीं हैं?”

“तो तुमने हमें क्यों नहीं खिलाए?”

“अरे, अब यहाँ थोड़े ही खाए हैं। सिंध में खाए थे, उसके बाद तो”

दादी माँ उदास हो गई।

श्याम ने पूछा, “यह सिंध क्या है? कहाँ है?”

दादी माँ ने कहा, “सिंध हमारा वतन था। वह यहाँ से दो दिन के फ़ासले पर तो ज़रूर होगा।”

रमेश ने पूछा, “हम वहाँ चलकर क्यों नहीं रहते?”

दादी माँ ने उसे समझाते हुए कहा, “नहीं बेटे, हम अब वहाँ जाकर नहीं रह सकते।...वहाँ के लोगों ने हमें वहाँ से भगा दिया था। अब सिंध पाकिस्तान में है।”

मोहिनी ने जिज्ञासा व्यक्त की, “दादी माँ, पहले तुम लोग वहाँ रहते थे?”

दादी माँ ने कहा, “हाँ, बेटी, हम लोग कराची में रहते थे।”

श्याम को कुछ याद आ गया था। वह बोला, “हाँ, मैंने भूगोल की किताब में पढ़ा है कि कराची पाकिस्तान का बड़ा बंदरगाह है।”

“होगा, बेटे,” दादी माँ ने उदासीन स्वर में उत्तर दिया।

“दादी माँ, वहाँ के लोगों ने तुम को वहाँ से क्यों भगा दिया था?” रमेश ने जानना चाहा।

“न जाने हमारे नेता लोग कैसे थे, जिन्होंने हिन्दुस्तान-पाकिस्तान बनाया और हम लोगों को यहाँ आना पड़ा। हम अपने ही घर में बेघर हो गए।” दादी माँ की उदासी बढ़ गई थी।

मोहिनी ने दादी माँ के गले में बाहें डालकर पूछा, “दादी माँ, फिर तुम लोग सिंध छोड़कर कहाँ गए?”

गले से मोहिनी की बाँहे हटाते हुए दादी माँ ने कहा, “कहाँ जाते? यहाँ हिंदुस्तान में आ गए। जब से सिंध छोड़ा है, हम क्या कहीं आराम से बस पाए हैं? मुल्क तो क्या, रोज़ी-रोज़गार भी गया।”

मोहिनी ने पूछा – “दादी माँ, तुम वहाँ क्या करती थीं?”

दादी माँ को गुस्सा आ गया। वह बोली, “ख़ाक छानती थी। अरे, मैं वहाँ क्या करती? तुम सोचती हो, मैं भी शायद तुम्हारी मम्मी की तरह नौकरी करती थी। अरे, उन दिनों औरतें नौकरी नहीं करती थीं। मेरे पिताजी की मिठाई की दुकान थी। हमारी दुकान का पिस्ते-बादाम का हलवा बड़ा ही मशहूर था। मुट्ठियाँ भर-भरकर पिस्ते बादाम खाते थे हम लोग।” मोहिनी के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, “यहाँ बेचारे बच्चों ने ये आज से पहले देखे तक नहीं।”

श्याम ने पूछा, “परंतु दादी माँ, सुनील के यहाँ तो ढेर सारे पिस्ते-बादाम हैं। वे कहाँ से लाते हैं?”

दादी माँ ने ठंडी साँस छोड़कर कहा, “वे अमीर हैं। सुनील के भाई दुबई में कमाते हैं”

छोटी मोहिनी ने फिर पूछा, “हम अमीर क्यों नहीं हैं?”

अब दादी माँ उन सब को कैसे समझाए कि वे ग़रीब क्यों हैं? उसने इतना भर कहा, “बेटी, हम लोग भी सिंध में बड़े सुखी थे।”

दादी माँ सिंध को अभी भुला नहीं पाई हैं। उसने आगे कहा, “यहाँ हमारी किस्मत अभी तक जागी नहीं है। तुम लोग बड़े होकर ख़ूब पैसा कमाना फिर तो हम भी अमीर हो जाएँगे।”

रमेश ने अपनी छाती ठोंककर कहा, “हाँ, दादी माँ, मैं दुबई जाऊँगा, बहुत सारे पिस्ते-बादाम ले आऊँगा।”

श्याम की आँखों में भी चमक आ गई थी। वह बोला, “मैं भी विदेश जाकर ख़ूब कमाकर आऊँगा और फिर सुनील के भाई की तरह जेब में नोट डालकर घूमूँगा।”

मोहिनी ने कहा, “फिर हम भी इन गुजराती भाइयों की तरह मोटर-कार में घूमेंगे। ये भी बड़े ही अमीर हैं।” मेरी सहेली ने मुझसे एक दिन कहा, “नया फ़्रॉक पहनकर आओ तो तुम्हें कार में बिठाऊँ।” लेकिन मेरे पास तो नया फ़्रॉक है ही नहीं। सभी तो पुराने हैं। दादी माँ, यह देखो, यह भी यहाँ से फट गया है। उसकी आवाज़ में दुख भरा था।

दादी माँ भी बच्चों की बातें सुनकर दुखी हो उठी लेकिन वह अपने दुख को छिपाती हुई बोली, “अच्छा ... अच्छा, अब तुम सब जाओ और अपनी-अपनी किताबें लेकर पढ़ो। जब ख़ूब पढ़-लिखकर इम्तिहान पास करोगे, तभी विदेश जा सकोगे।”

परंतु पढ़ाई के संबंध में दादी माँ की यह बात बच्चों की समझ में नहीं आई। सुनील पढ़ाई में श्याम से भी कहीं ज़्यादा कमज़ोर है। फिर भी वह कहता है कि वह विदेश जाएगा। लेकिन वे चुप रहे, बोले नहीं।

रविवार का दिन था। बच्चे घर पर ही थे। उनकी मम्मी सुबह से ही घर के काम-काज में व्यस्त थी। पूरे हते का बचा-खुचा काम रविवार की छुट्टी के दिन करना पड़ता है। सुबह को दादी माँ ने नाश्ता तैयार किया तो मम्मी ने बरतन झाड़ू का काम निबटाकर कपड़े धोने शुरू किये। दादी माँ थैले में से सब्जियाँ निकालकर दोपहर के खाने की तैयारी में लगने को थीं कि उसे बच्चों ने आकर घेर लिया।

कमला कपड़े धोने के काम से फारिग हुई तो उसने देखा, बच्चे चुपचाप बैठे पढ़ाई कर रहे थे। वैसे तो छुट्टी के दिन बड़ा ही ऊधम मचाते हैं। उसने हैरत से पूछा, “आज ये शैतान कैसे चुपचाप बैठे हैं?”

मोहिनी ने आहिस्ते से कहा, “मम्मी, दादी माँ कहती हैं कि अगर हम पढ़ेंगे तो बड़े होकर अमीर बनेंगे।”

कमला को हँसी आ गई।

रमेश ने मम्मी से पूछा, “तुमने कभी पिस्ते-बादाम खाए हैं?”

कमला को और भी ज़्यादा अचरज हुआ। बोली, “क्यों पूछते हो? पिस्ते-बादाम, हाँ, शायद खाए हैं।”

श्याम ने कहा, “शायद नहीं, पक्की बताओ।”

कमला ने कहा, “बचपन में शायद दो-तीन बार पिताजी ने पिस्ते-बादाम खाने को दिए थे....।”

रमेश ने बीच में ही कहा, “कहाँ? सिंध में?”

कमला को फिर हँसी आ गई। वह बोली, “अरे मूर्ख, मैं तो यहाँ हिन्दुस्तान में जन्मी थी, मैंने सिंध नहीं देखा है।... लेकिन तुम आज पिस्ते-बादाम का यह किस्सा कहाँ से ले बैठे?”

श्याम ने बचाए हुए दो-तीन पिस्ते बादाम अपनी जेब से निकालकर मम्मी को दिखाए। कहा, “देखो, मेरे दोस्त सुनील की माँ ने दिए हैं। दो-तीन मोहिनी ले गई, ढेर सारे बदमाश रमेश ले गया।”

कमला ने गुस्से में आकर कहा, “बदमाश, ऐसे कैसे बोलते हो?”

दादी माँ ने कमला को बीच में ही टोककर कहा, “कमला, तुम भी तो ऐसे ही बोलती हो। तुमने भी तो ...।”

सभी हँसने लगे।

रमेश के दिमाग में अभी तक यह बात थी कि उसके पिस्ते-बादाम कड़वे निकले थे। उसने कहा, “मम्मी, हमें पिस्ते-बादाम लेकर दो।”

मम्मी के उत्तर देने से पहले ही दादी माँ बोली, “अच्छा बेटे! कमला, जब तुम्हें इस महीने तनख्वाह मिलेगी तो तुम बच्चों के लिए दस रुपए के पिस्ते-बादाम खरीद कर लाना।”

कमला असमंजस में पड़ गई। बोली, “लेकिन माँ, अभी तो कर्ज की कर्ई किस्ते देना बाकी हैं। ऐसे तो घर-खर्च के लिए दस-रुपए कम हो जाएँगे।”

दादी माँ ने कहा, “अरी बिटिया, जो दस रुपए तुम मुझे हर महीने दिया करती हो, इस बार न देना।... बच्चों के लिए पिस्ते-बादाम जरूर ले आना।”

बच्चे खुशी के मारे झूम उठे। कमला ने उन्हें डाँटकर कहा, “अच्छा, इस बार ले आऊँगी। लेकिन आगे कभी ऐसी महँगी चीज़ें लाने के लिए ज़िद मत करना।... अब उठो, नहा-धो लो, तो मैं तुम्हारे लिए खाना बना दूँ। तुम्हारे डैडी भी दुकान से आते ही होंगे।”

दादी माँ के चेहरे पर तो मुस्कराहट थी, पर आँखों में आँसू थे।

कहानी में ढूँढो—

1. श्याम को पिस्ते—बादाम खाते हुए देखकर दादी माँ को आश्चर्य क्यों हुआ?
2. श्याम के पास पिस्ते—बादाम कहाँ से आये?
3. किन—किन बातों की वजह से दादी माँ सिंध को अब तक भुला नहीं पाई थी?
4. कमला को रविवार के दिन भी बच्चों को चुप—चाप पढ़ाई करते हुए देखकर हैरत क्यों हुई?

अपनी समझ से—

1. अपने घर में अथवा आस—पास के बड़े बुजुर्गों से बात करें कि जब वे छोटे थे अथवा तुम्हारी उम्र के थे तब जमाना कैसा था और आज वे उससे क्या फ़र्क देखते हैं? क्या जो चीज़ें पहले थीं अब भी वैसी हैं? कौन—सी बदल गई हैं? कौन—सी है ही नहीं? और कौन—सी बिल्कुल नई हैं?
2. यदि आपको कभी अपना बसा—बसाया घर, रोज़गार, अपना गाँव छोड़कर कहीं और जाना पड़े तो आपको कैसा महसूस होगा?
3. एक शिक्षक ने इस कहानी पर निम्नलिखित सवाल बनाया: एक चवन्नी में एक बादाम मिलता है तो 15 बादाम ख़रीदने के लिए आपको कितने रुपये देने होंगे? इस कहानी पर यह सवाल देना उचित है या नहीं?

भाषा की बात—

1. नीचे कुछ उत्तर दिये गये हैं। आप इन उत्तरों के लिए प्रश्न बनाइये।

(अ) सुनील का बड़ा भाई दुबई से आया था।

.....
(ब) पिस्ते—बादाम बड़े कड़वे थे।

.....
(स) दादी माँ के पिताजी की मिठाई की दुकान थी।

.....
(द) दादी माँ ने नाश्ता तैयार किया और मम्मी ने बरतन, झाड़ू व कपड़े धोने का काम।

2. ‘दादी माँ ने झल्लाकर कहा’।

यहाँ रेखांकित शब्द क्रिया विशेषण है, क्योंकि यह शब्द क्रिया ‘कहा’ की विशेषता बता रहा है। कहानी में से इस तरह के कम से कम 6 वाक्य और ढूँढो और उनमें क्रिया विशेषण को रेखांकित करो।

ढूंगी फूल कनेर के (कविता)

आना मेरे गाँव तुम्हें मैं
ढूंगी फूल कनेर के।
कुछ कच्चे, कुछ पक्के घर हैं,
एक पुराना ताल है।
सड़क बनेगी, सुनती हूँ,
इसका नंबर इस साल है।
चखते आना टीले ऊपर
कई पेड़ हैं बेर के।
आना मेरे गाँव तुम्हें मैं
ढूंगी फूल कनेर के।
बाबा ने था पेड़ लगाया
बापू ने फल खाए हैं
भाई कैसे उसे काटने
को रहते ललचाए हैं।
मेरे बचपन में ही आएँ
दिन कैसे अँधेर के?
आना मेरे गाँव तुम्हें मैं
ढूंगी फूल कनेर के।
खड़िया—पाटी, कॉपी—बस्ते,
लिखना—पढ़ना रोज़ है।
खेलें—कूदें कभी न तो फिर,
यह सब लगता बोझ है।
कई मुखौटे तुम देखोगे,
मिट्टीवाले शेर के।
आना मेरे गाँव तुम्हें मैं,
ढूंगी फूल कनेर के।
हँसना—रोना तो लगता ही,
रहता है हर खेल में।
रूटे, कुट्टी कर ली लेकिन,
खिल उठते हैं मेल में।
मगर देखना क्या होता है,
मेरी चिट्ठी फेर के।
आना मेरे गाँव तुम्हें मैं,
ढूंगी फूल कनेर के।

गंगाप्रसाद

कविता में ढूँढो—

1. कविता से गाँव के बारे में क्या-क्या पता चलता है?
2. 'मेरे बचपन में ही आँ
दिन कैसे अँधेर के?'
कविता में यह पंक्तियाँ क्यों कही गयी है?

अपनी समझ से—

1. आपे अपने गाँव का विवरण लिखिए। विवरण ऐसा जिसे पढ़कर पढ़नेवाले के मन में आपके गाँव की छवि बन जाए।
2. खेल-खेल में बच्चों के बीच रूठना-मनाना चलता रहता है। अपने बचपन की किसी ऐसी घटना को लिखिए जिसमें आपका दोस्तों से झगड़ा हो गया हो। आपने उस झगड़े को कैसे सुलझाया।

भाषा की बात—

5. 'कुछ कच्चे, कुछ पक्के घर हैं।'
कविता की इस पंक्ति में रेखांकित शब्दों का अर्थ एक-दूसरे से उल्टा है। क्या कविता में ऐसी कोई और पंक्ति है जिसमें शब्दों का अर्थ एक-दूसरे से उल्टा है। अगर हाँ, तो ढूँढकर लिखिए और इन शब्दों को रेखांकित कीजिए।
7. 'खड़िया पाटी' शब्द दो भिन्न शब्दों—खड़िया, पाटी के बीच के 'और' को गायब कर उनके एक साथ प्रयोग से बना है। खड़ीया-पाटी मतलब खड़ीया (चॉक) और पाटी (स्लेट)।
(अ) कहानी में ऐसे 4 शब्द और दिए हुए हैं जो दो भिन्न शब्दों के मेल से बने हैं। इन्हें ढूँढकर नीचे लिखिए और प्रत्येक का वाक्य में प्रयोग कीजिए।

प्रायश्चित्त (कहानी)

अगर कबरी बिल्ली घर भर में किसी से प्रेम करती थी, तो रामू की बहू से, और अगर रामू की बहू घर भर में किसी से घृणा करती थी, तो कबरी बिल्ली से। रामू की बहू दो महीने हुए मायके से प्रथम बार ससुराल आई थी, पति की प्यारी और सास की दुलारी, चौदह वर्ष की बालिका। भंडार घर की चाबी उसकी करधनी में लटकने लगी, नौकरों पर उसका हुक्म चलने लगा, और रामू की बहू घर में सब कुछ। सास जी ने माला ली और पूजा-पाठ में मन लगाया।

लेकिन ठहरी चौदह वर्ष की बालिका कभी भंडार.घर खुला है, तो कभी भंडार-घर में बैठे-बैठे सो गई। कबरी बिल्ली को मौका मिला, घी-दूध पर अब वह जुट गई। रामू की बहू की जान आफ़त में और कबरी बिल्ली के छक्के-पंजे। रामू की बहू हॉडी में घी रखते-रखते ऊँघ गई और बचा हुआ घी कबरी के पेट में। रामू की बहू दूध ढककर मिसरानी को जिन्स देने गई और दूध नदारद। अगर बात यह यहीं तक रह जाती तो भी बुरा न था। कबरी रामू की बहू से कुछ ऐसा परच गई थी कि रामू की बहू के लिए खाना-पीना दुश्वार। रामू की बहू के कमरे में रबड़ी से भरी कटोरी पहुँची और रामू जब आए तब कटोरी साफ़ चटी हुई। बाज़ार से बालाई आई और जब तक रामू की बहू ने पान लगाया बालाई गायब।

रामू की बहू ने तै कर लिया कि या तो वही घर में रहेगी या फिर कबरी बिल्ली ही। मोरचाबंदी हो गई, और दोनों सतर्क। बिल्ली फँसाने का कठघरा आया। उसमें दूध, मलाई, चूहे और भी बिल्ली को स्वादिष्ट लगनेवाले विविध प्रकार के व्यंजन रखे गए, लेकिन बिल्ली ने उधर निगाह तक न डाली। इधर कबरी ने सरगर्मी दिखलाई। अभी तक तो वह रामू की बहू से डरती थी पर अब वह साथ लग गई, लेकिन इतने फ़ासले पर कि रामू की बहू उस पर हाथ न लगा सके।

कबरी के हौसले बढ़ जाने से रामू की बहू को घर में रहना मुश्किल हो गया। उसे मिलती थीं सास की मीठी झिड़कियाँ, और पतिदेव को मिलता था रूखा-सूखा भोजन।

एक दिन रामू की बहू ने रामू के लिए खीर बनाई। पिस्ता, बादाम, मखाने और तरह-तरह के मेवे दूध में औटाए गए, सोने का वर्क चिपकाया गया और खीर से भरकर कटोरा कमरे के एक ऐसे ऊँचे ताक पर रखा गया जहाँ बिल्ली न पहुँच सके। रामू की बहू इसके बाद पान लगाने में लग गई।

उधर बिल्ली कमरे में आई। ताक के नीचे खड़े होकर उसने ऊपर कटोरे की ओर देखा, सूँघा, माल अच्छा है, ताक की ऊँचाई अंदाज़ी और रामू की बहू पान लगा रही है। पान लगाकर रामू की बहू सास जी को पान देने चली गई और कबरी ने छलांग मारी, पंजा कटोरे में लगा और कटोरा झनझनाहट की आवाज़ के साथ फर्श पर।

आवाज़ रामू की बहू के कान में पहुँची। सास के सामने पान फेंककर वह दौड़ी, क्या देखती है कि फूल का कटोरा टुकड़े-टुकड़े, खीर फर्श पर और बिल्ली डटकर खीर उड़ा रही है। रामू की बहू को देखते ही कबरी चंपत।

रामू की बहू पर खून सवार हो गया। न रहे बाँस न बजे बाँसुरी। रामू की बहू ने कबरी की हत्या पर कमर कस ली। रात भर उसे नींद न आई। किस दाँव से कबरी पर वार किया जाए कि फिर जिंदा न बचे, यही पड़े-पड़े सोचती रही। सुबह हुई और वह देखती है कि कबरी देहरी पर बैठी बड़े प्रेम से उसे देख रही है।

रामू की बहू ने कुछ सोचा, इसके बाद मुस्कराती हुई वह उठी। कबरी रामू की बहू के उठते ही खिसक गई। रामू की बहू एक कटोरा दूध कमरे के दरवाजे की देहरी पर रखकर चली गई। हाथ में पाटा लेकर वह लौटी तो देखती है कि कबरी दूध पर जुटी हुई है। मौका हाथ में आ गया, सारा बल लगाकर उसने बिल्ली पर पटक दिया। कबरी न हिली-न-डुली, न चीखी-न-चिल्लाई, बस एकदम उलट गई।

आवाज़ जो हुई तो महरी झाड़ू छोड़कर, मिसरानी रसोई छोड़कर और सास पूजा छोड़कर घटनास्थल पर उपस्थित हो गई। रामू की बहू सिर झुकाए हुए अपराधिनी की भाँति बातें सुन रही है।

महरी बोली, “अरे राम! बिल्ली तो मर गई, माँ जी, बिल्ली की हत्या बहू से हो गई, यह तो बुरा हुआ।”

मिसरानी बोली, “माँ जी, बिल्ली की हत्या और आदमी की हत्या बराबर है, हम तो रसोई न बनावेंगी, जब तक बहू के सिर हत्या रहेगी।”

सास जी बोलीं, “हाँ ठीक तो कहती हो, अब जब तक बहू के सिर से हत्या न उतर जाए, तब तक न कोई पानी पी सकता है न खाना खा सकता है। बहू, यह क्या कर डाला?”

महरी ने कहा, “फिर क्या हो, कहो तो पंडित जी को बुला लाएँ।”

सास की जान-में-जान आई, “अरे हाँ, जल्दी दौड़ के पंडित जी को बुला ला।”

बिल्ली की हत्या की ख़बर बिजली की तरह पड़ोस में फैल गई। पड़ोस की औरतों का रामू के घर में तौंता बँध गया। चारों तरफ़ से प्रश्नों की बौछार और रामू की बहू सिर झुकाए बैठी।

पंडित परमसुख को जब यह खबर मिली, उस समय वे पूजा कर रहे थे। खबर पाते ही वे उठ पड़े, पंडिताइन से मुस्कराते हुए बोले, “भोजन न बनाना, लाला घासीराम की पतोहू ने बिल्ली मार डाली, प्रायश्चित्त होगा, पकवानों पर हाथ लगेगा।”

पंडित परमसुख चौबे छोटे-से, मोटे-से आदमी थे। लंबाई चार फीट, दस इंच और तोंद का घेरा अट्ठावन इंच। चेहरा गोल-मटोल, मूँछ बड़ी-बड़ी, रंग गोरा, चोटी कमर तक पहुँचती हुई। कहा जाता है कि मथुरा में जब पंसेरी खुराकवाले पंडितों को ढूँढ़ा जाता था, तो पंडित परमसुख जी को उस लिस्ट में प्रथम स्थान दिया जाता था।

पंडित परमसुख पहुँचे और कोरम पूरा हुआ। पंचायत बैठी-सास जी, मिसरानी, किसनू की माँ, छन्नू की दादी और पंडित परमसुख! बाकी स्त्रियाँ बहू से सहानुभूति प्रकट कर रही थीं।

किसनू की माँ ने कहा, “पंडित जी, बिल्ली की हत्या करने से कौन नरक मिलता है?”

पंडित परमसुख ने पत्रा देखते हुए कहा, “बिल्ली की हत्या अकेले से तो नरक का नाम नहीं बतलाया जा सकता, वह महूरत जब मालूम हो, जब बिल्ली की हत्या हुई, तब नरक का पता लग सकता है।”

“यही कोई सात बजे सुबह।” मिसरानी जी ने कहा

पंडित परमसुख ने पत्रे के पन्ने उलटते, अक्षरों पर उँगलियाँ चलाई, मत्थे पर हाथ लगाया और कुछ सोचा। चेहरे पर धुँधलापन आया, माथे पर बल पड़े, नाक कुछ सिकुड़ी और स्वर गंभीर हो गया, “हरे कृष्ण! हरे कृष्ण! बड़ा बुरा हुआ, प्रातःकाल ब्राह्म-मुहूर्त में बिल्ली की हत्या! घोर कुंभीपाक नरक का विधान है! रामू

की माँ, यह तो बड़ा बुरा हुआ।”

रामू की माँ की आँखों में आँसू आ गए, “तो फिर पंडित जी, अब क्या होगा, आप ही बतलाएँ!”

पंडित परमसुख मुस्कराए, “रामू की माँ, चिंता की कौन-सी बात है, हम पुरोहित फिर कौन दिन के लिए हैं? शास्त्रों में प्रायश्चित्त का विधान है, सो प्रायश्चित्त से सब कुछ ठीक हो जाएगा।”

रामू की माँ ने कहा, “पंडित जी, उसी लिए तो आपको बुलवाया था, अब आगे बतलाओ कि क्या किया जाए!”

“किया क्या जाए, यही एक सोने की बिल्ली बनवाकर बहू से दान करवा दी जाए। जब तक बिल्ली न दे दी जाएगी, तब तक तो घर अपवित्र रहेगा। बिल्ली दान देने के बाद इक्कीस दिन का पाठ हो जाए”

छन्नू की दादी, “हाँ और क्या, पंडित जी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली अभी दान दे दी जाए और पाठ फिर हो जाएँ”

रामू की माँ ने कहा, “तो पंडित जी, कितने तोले की बिल्ली बनवाई जाए?”

पंडित परमसुख मुस्कराए, अपनी तोंद पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा, “बिल्ली कितने तोले की बनवाई जाए? अरे रामू की माँ, शास्त्रों में तो लिखा है कि बिल्ली के वजन-भर सोने की बिल्ली बनवाई जाए; लेकिन अब कलियुग आ गया है, धर्म-कर्म का नाश हो गया है, श्रद्धा नहीं रही। सो रामू की माँ, बिल्ली के तौल-भर की बिल्ली तो क्या बनेगी, क्योंकि बिल्ली बीस-इक्कीस सेर से कम की क्या होगी। हाँ, कम-से-कम इक्कीस तोले की बिल्ली बनवा के दान करवा दो, और आगे तो अपनी-अपनी श्रद्धा!”

रामू की माँ ने आँखें फाड़कर पंडित परमसुख को देखा, “अरे बाप रे, इक्कीस तोला सोना! पंडित जी यह तो बहुत है, तोला-भर की बिल्ली से काम न निकलेगा?”

पंडित परमसुख हँस पड़े, “रामू की माँ! एक तोला सोने की बिल्ली! अरे रुपया का लोभ बहू से बढ़ गया? बहू के सिर बड़ा पाप है, इसमें इतना लोभ ठीक नहीं!”

मोल-तोल शुरू हुआ और मामला ग्यारह तोले की बिल्ली पर ठीक हो गया। इसके बाद पूजा-पाठ की बात आई। पंडित परमसुख ने कहा, “उसमें क्या मुश्किल है, हम लोग किस दिन के लिए हैं, रामू की माँ, मैं पाठ कर दिया करूँगा, पूजा की सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।”

“पूजा का सामान कितना लगेगा?”

“अरे, कम-से-कम सामान में हम पूजा कर देंगे, दान के लिए करीब दस मन गेहूँ, एक मन चावल, एक मन दाल, मन-भर तिल, पाँच मन जौ और पाँच मन चना, चार पंसेरी घी, और मन-भर नमक भी लगेगा। बस, इतने से काम चल जाएगा।”

“अरे बाप रे, इतना सामान! पंडित जी इसमें तो सौ-डेढ़ सौ रुपया खर्च हो जाएगा।” रामू की माँ ने रुआँसी होकर कहाँ

“फिर इससे कम में तो काम न चलेगा। बिल्ली की हत्या कितना बड़ा पाप है, रामू की माँ! खर्च को देखते वक्त पहले बहू के पाप को तो देख लो! यह तो प्रायश्चित्त है, कोई हँसी-खेल थोड़े ही है, और जैसी

जिसकी मरजादा! प्रायश्चित्त में उसे वैसा खर्च भी करना पड़ता है। आप लोग कोई ऐसे-वैसे थोड़े हैं, अरे सौ-डेढ़ सौ रुपया आप लोगों के हाथ का मैल है।”

पंडित परमसुख की बात से पंच प्रभावित हुए, किसनू की माँ ने कहा, “पंडित जी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली की हत्या कोई ऐसा-वैसा पाप तो है नहीं, बड़े पाप के लिए बड़ा खर्च भी चाहिए।”

छन्नू की दादी ने कहा, “और नहीं तो क्या, दान-पुन्न से ही पाप कटते हैं, दान-पुन्न में किफायत ठीक नहीं।”

मिसरानी ने कहा, “और फिर माँ जी आप लोग बड़े आदमी ठहरे। इतना खर्च कौन आप लोगों को अखरेगा।”

रामू की माँ ने अपने चारों ओर देखा-सभी पंच पंडित जी के साथ। पंडित परमसुख मुसकरा रहे थे। उन्होंने कहा, “रामू की माँ! एक तरफ तो बहू के लिए कुंभीपाक नरक है और दूसरी तरफ तुम्हारे ज़िम्मे थोड़ा-सा खर्चा है। सो उससे मुँह न मोड़ो।”

एक टंडी साँस लेते हुए रामू की माँ ने कहा, “अब तो जो नाच नचाओगे नाचना ही पड़ेगा।”

पंडित परमसुख ज़रा कुछ बिगड़कर बोले, “रामू की माँ! यह तो खुशी की बात है। अगर तुम्हें यह अखरता है तो न करो, मैं चला।” इतना कहकर पंडित जी ने पोथी-पत्रा बटोरा।

“अरे पंडित जी, रामू की माँ को कुछ नहीं अखरता। बेचारी को कितना दुख है, बिगड़ो न!” मिसरानी, छन्नू की दादी और किसनू की माँ ने एक स्वर में कहा। रामू की माँ ने पंडित जी के पैर पकड़े और पंडित जी ने अब जमकर आसन जमाया।

“और क्या है?”

“इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रुपए और इक्कीस दिन तक दोनों बखत पाँच-पाँच ब्राह्मणों को भोजन करवाना पड़ेगा।” कुछ रुककर पंडित परमसुख ने कहा, “सो इसकी चिंता न करो, मैं अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भोजन करने से पाँच ब्राह्मण के भोजन का फल मिल जाएगा।”

“यह तो पंडित जी ठीक कहते हैं, पंडित जी की तोंद तो देखो!” मिसरानी ने मुस्कराते हुए पंडित जी पर व्यंग किया।

“अच्छा तो फिर प्रायश्चित्त का प्रबंध करवाओ रामू की माँ, ग्यारह तोला सोना निकालो, मैं उसकी बिल्ली बनवा लाऊँ। दो घंटे में मैं बनवाकर लौटूँगा, तब तक सब पूजा का प्रबंध कर रखो, और देखो पूजा के लिए.....”

पंडित जी की बात खतम भी न हुई थी कि महरी हाँफती हुई कमरे में घुस आई और सब लोग चौंक उठे। रामू की माँ ने घबराकर कहा, “अरी क्या हुआ री?”

महरी ने लड़खड़ाते स्वर में कहा, “माँ जी, बिल्ली तो उठकर भाग गई!”

— भगवतीचरण वर्मा

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

भगवतीचरण वर्मा : (1903.1981) का जन्म शफीपुर गाँव में उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िले में हुआ। इन्होंने लिखना कविता लेखन से प्रारंभ किया और उपन्यासकार के रूप में प्रसिद्ध हुए। इन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार और पद्मभूषण से सम्मानित किया गया है। इनके कुछ प्रसिद्ध प्रकाशन हैं: चित्रलेखा, भूले बिसरे चित्र, अपने खिलौने, पतन, तीन वर्ष (उपन्यास); मेरी कहानियाँ, मोर्चाबंदी (कहानी संग्रह); मेरी कविताएँ (कविता संग्रह), मेरे नाटक, वसीयत (नाटक)।

कहानी में ढूँढो—

1. रामू की बहू, कबरी बिल्ली से क्यों घृणा करती थी?
2. आपको क्या लगता है, कबरी बिल्ली घर—भर में, रामू की बहू से ही क्यों प्रेम करती थी?
3. कहानी का मुख्य मात्र कौन है और क्यों?
4. आपको पंडित परमसुख कैसे आदमी लगे? कहानी से उदाहरण लेकर समझाइये।
5. जब पंडित परमसुख को पता चला कि बिल्ली मरी नहीं है, तो उन्हें कैसा लगा होगा?
6. आपको यह कहानी कैसी लगी?
7. कहानी पढ़कर दी गई घटनाओं को सही क्रम दीजिए।
 - पड़ोस की औरतों का घर में ताँता लग गया।
 - बिल्ली ने खीर का कटोरा टुकड़े—टुकड़े कर दिया
 - पंडित जी ने पत्नी को भोजन न बनाने को कहा।
 - बहू ने सारा बल लगाकर पाटा बिल्ली पर पटक दिया।
 - ग्यारह तोला सोने की बिल्ली बनाना तय हुआ।
 - रामू की माँ ने कहा, अब तो जो नाच नचाओगे नाचना ही पड़ेगा।
 - महरी ने हाँफते हुए कहा— बिल्ली तो भाग गई।
 - मेरे अकेले के भोजन करने से पाँच ब्राह्मणों के भोजन का फल मिल जाएगा पंडित ने कहा।
8. कहानी का सार लिखिए।

अपनी समझ से—

1. कहानी में पंडित जी ने बिल्ली को मारने पर प्रायश्चित्त का जो तरीका बताया उसके बारे में आप क्या सोचते हैं ?
2. इस कहानी का और क्या शीर्षक हो सकता है?
3. कहानी में नाप—तौल के लिए कई शब्दों का प्रयोग हुआ है,

जैसे— सेर, मन, तोला आदि।

(अ) आपके यहाँ माप-तौल के लिए किन-किन माप को काम में लेते हैं? पता कीजिए।

(ब) किलोग्राम में इन मापकों का कितना मान (वजन) होगा यह भी बताइये।

भाषा की बात—

1. कई बार प्रयोग के आधार पर एक ही शब्द के अलग-अलग अर्थ हो सकते हैं,

जैसे— 'भाग'

(अ) बिल्ली उठकर भाग गई।

(ब) बिल्ली ने रोटी का आधा भाग खा लिया।

यहाँ पहले वाक्य में भाग का मतलब है—भाग जाना। दूसरे वाक्य में भाग का अर्थ है—हिस्सा करना।

ऐसे ही कुछ शब्द नीचे दिए गए हैं, इनको वाक्यों में प्रयोग करके बताइये कि इनके क्या-क्या अर्थ हो सकते हैं।

फल, सोना, ताक, पान

(स) ऐसे ही कुछ शब्द आप भी ढूँढकर लिखिए।

गुलेलबाज़ लड़का

छठी कक्षा में पढ़ते समय मेरे तरह-तरह के सहपाठी थे। एक हरबंस नाम का लड़का था जिसके सब काम अनूठे हुआ करते थे। उसे जब सवाल समझ में नहीं आता तो स्याही की दवात उठाकर पी जाता। उसे किसी ने कह रखा था कि काली स्याही पीने से अक्ल तेज़ होती है। मास्टर जी गुस्सा होकर उस पर हाथ उठाते तो बेहद ऊँची आवाज़ में चिल्लाने लगता, “मार डाला! मास्टर जी ने मार डाला!” वह इतनी ज़ोर से चिल्लाता कि आसपास की जमातों के उस्ताद बाहर निकल आते कि क्या हुआ है। मास्टर जी ठिठककर हाथ नीचा कर लेते। यदि वह उसे पीटने लगते तो हरबंस सीधा उनसे चिपट जाता और ऊँची-ऊँची आवाज़ में कहने लगता, “अब की माफ़ कर दो जी! आप बादशाह हो जी! आप अकबर महान हो जी! आप सम्राट अशोक हो जी! आप माई-बाप हो जी, मेरे दादा हो जी, परदादा हो जी!”

क्लास में लड़के हँसने लगते और मास्टर जी झोंपकर उसे पीटना छोड़ देते। ऐसा था वह हरबंस। हर आए दिन बाग में से मेंढक पकड़ लाता और कहता कि हाथ पर मेंढक की चर्बी लगा लें तो मास्टर जी के बेंत का कोई असर नहीं होता, हाथ को पता ही नहीं चलता कि बेंत पड़ा है।

एक दूसरा सहपाठी था-बोधराज। उससे हम सब डरते थे। जब वह चिंहुटी काटता तो लगता जैसे साँप ने डस लिया है। बड़ा ज़ालिम लड़का था। गली की नाली पर जब बर्रे आकर बैठते तो नंगे हाथ से वह बर्रा, पकड़कर उसका डंक निकाल लेता और फिर बर्रे की टाँग में धागा बाँधकर उसे पतंग की तरह उड़ाने की कोशिश करता। बाग में जाते तो फूल पर बैठी तितली को लपककर पकड़ लेता और दूसरे क्षण उँगलियों के बीच मसल डालता। अगर मसलता नहीं तो फड़फड़ाती तितली में पिन खोंसकर उसे अपनी कापी में टाँक लेता।

उसके बारे में कहा जाता था कि अगर बोधराज को बिच्छू काट ले तो स्वयं बिच्छू मर जाता है, बोधराज का खून इतना कड़वा है कि उसे कुछ भी महसूस नहीं होता। सारा वक्त उसके हाथ में गुलेल रहती और उसका निशाना अचूक था। पक्षियों के घोंसलों पर तो उसकी विशेष कृपा रहती थी। पेड़ के नीचे खड़े होकर वह ऐसा निशाना बाँधता कि दूसरे ही क्षण पक्षियों की चों-चों सुनाई देती और

घोंसलों में से तिनके और थिंगलियाँ टूट-टूटकर हवा में छितरने लगते, या वह झट से पेड़ पर चढ़ जाता और घोंसलों में से अण्डे निकाल लाता। जब तक वह घोंसलों को तोड़-फोड़ न डाले उसे चैन नहीं मिलता था।

उसे कभी भी कोई ऐसा खेल नहीं सूझता था जिसमें किसी को कष्ट नहीं पहुँचाया गया हो। बोधराज की माँ भी उसे राक्षस कहा करती थी। बोधराज जब में तरह-तरह की चीजें रखे घूमता, कभी मैना का बच्चा या तरह-तरह के अण्डे या काँटेदार झाऊ चूहा उससे सभी छात्र डरते थे। किसी के साथ झगड़ा हो जाता तो बोधराज सीधा उसकी छाती में टक्कर मारता, या उसका हाथ पर काट खाता। स्कूल के बाद हम लोग तो अपने-अपने घरों को चले जाते, मगर बोधराज न जाने कहाँ घूमता रहता।

कभी-कभी वह हमें तरह-तरह के किस्से सुनाता। एक दिन कहने लगा, “हमारे घर में एक ‘गोह’ रहती है। जानते हो ‘गोह’ क्या होती है?”

“नहीं तो, क्या होती है ‘गोह’?”

“गोह, साँप जैसा एक जानवर होता है, बालिशतभर लम्बा, मगर उसके पैर होते हैं, आठ पंजे होते हैं। साँप के पैर नहीं होते।”

हम सिहर उठे।

“हमारे घर में सीढ़ियों के नीचे गोह रहती है,” वह बोला, “जिस चीज़ को वह अपने पंजों से पकड़ ले वह उसे कभी भी नहीं छोड़ती, कुछ भी हो जाए नहीं छोड़ती।”

हम फिर सिहर उठे।

“चोर अपने पास गोह को रखते हैं। वे दीवार फाँदने के लिए गोह का इस्तेमाल करते हैं। वे गोह की एक टाँग में रस्सी बाँध देते हैं। फिर जिस दीवार को फाँदना हो, रस्सी को झुलाकर दीवार के ऊपर की ओर फेंकते हैं। दीवार के साथ लगते ही गोह अपने पंजों से दीवार को पकड़ लेती है। उसका पंजा इतना मज़बूत होता है कि फिर रस्सी को दस आदमी भी खींचें, तो गोह दीवार को नहीं छोड़ेगी। चोर उसी रस्सी के सहारे दीवार फाँद जाते हैं।”

“फिर दीवार को तुम्हारी गोह छोड़ती कैसे है?” मैंने पूछा।

“ऊपर पहुँचकर चोर उसे थोड़ा सा दूध पिलाते हैं, दूध पीते ही गोह के पंजे ढीले पड़ जाते हैं।” इसी तरह के किस्से बोधराज हमें सुनाता।

उन्हीं दिनों मेरे पिताजी की तरक्की हुई और हम लोग एक बड़े घर में जाकर रहने लगे। घर नहीं था, बंगला था, मगर पुराने ढंग का, और शहर के बाहर। फर्श ईंटों के, छत ऊँची-ऊँची और ढलवाँ, कमरे बड़े-बड़े, लेकिन दीवार में लगता जैसे गारा भरा हुआ है। बाहर खुली ज़मीन थी और पेड़-पौधे थे। घर तो अच्छा था मगर बड़ा खाली-खाली सा लगता था और शहर से दूर होने के कारण मेरा दोस्त-यार भी यहाँ पर कोई नहीं था।

तभी वहाँ बोधराज आने लगा। शायद उसे मालूम हो गया था कि वहाँ शिकार अच्छा मिलेगा, क्योंकि उस पुराने घर में और घर के आँगन में अनेक पक्षियों के घोंसले थे, आसपास बंदर घूमते थे और घर के बाहर झाड़ियों में नेवलों के दो-एक बिल भी थे। घर के पिछले हिस्से में एक बड़ा कमरा था जिसमें माँ ने फालतू सामान भरकर गोदाम-सा बना दिया था। यहाँ पर कबूतरों का डेरा था। दिन-भर गुटरगूँ-गुटरगूँ चलती रहती। वहीं पर टूटे से रोशनदान के पास एक मैना का भी घोंसला था। कमरे के फर्श पर पंख और टूटे अण्डे और घोंसलों के तिनके बिखरे रहते।

बोधराज आता तो उसके साथ घूमने निकल जाता। एक बार वह झाऊ चूहा लाया, जिसका काला थूथना और कँटीले बाल देखते ही मैं डर गया था। माँ को मेरा बोधराज के साथ घूमना अच्छा नहीं लगता था, मगर वह जानती थी कि मैं अकेला घर में पड़ा-पड़ा क्या करूँगा। माँ भी उसे राक्षस कहती थी और उसे बहुत समझाती थी कि ग़रीब जानवरों को तंग नहीं किया करे।

एक दिन माँ मुझसे बोली, “अगर तुम्हारे दोस्त को घोंसले तोड़ने में मज़ा आता है तो उससे कहो कि हमारे गोदाम में से घोंसले साफ़ कर दे। चिड़ियों ने कमरे को बहुत गंदा कर रखा है।”

“मगर माँ, तुम खुद ही तो कहती थी जो घोंसले तोड़ता है उसे पाप चढ़ता है।”

“मैं यह थोड़े ही कहती हूँ कि पक्षियों को मारे। वह तो पक्षियों पर गुलेल चलाता है, उन्हें मारता

है। घोंसला हटाना तो दूसरी बात है।”

चुनांचे जब बोधराज घर पर आया तो मैं घर का चक्कर लगाकर उसे पिछवाड़े की ओर गोदाम में ले गया। गोदाम में ताला लगा था। हम ताला खोलकर अंदर गए। शाम हो रही थी और गोदाम के अंदर झुटपुटा—सा छाया था। कमरे में पहुँचे तो मुझे लगा जैसे हम किसी जानवर की माँद में पहुँच गए हों। बला की बू थी, और फर्श पर बिखरे हुए पंख और पक्षियों की बीट।

सच पूछो तो मैं डर गया। मैंने सोचा, यहाँ भी बोधराज अपना धिनौना शिकार खेलेगा, वह घोंसलों को तोड़—तोड़कर गिराएगा, पक्षियों के घर नोचेगा, उनके अण्डे तोड़ेगा, ऐसी सभी बातें करेगा जिनसे मेरा दिल दहलता था। न जाने माँ ने क्यों कह दिया कि इसे गोदाम में ले जाओ और इससे कहो कि गोदाम में से घोंसले साफ़ कर दे। मुझे तो इसके साथ खेलने को भी मना करती थी और अब कह दिया कि घोंसले तोड़ो।

मैंने बोधराज की ओर देखा तो उसने गुलेल सँभाल ली थी, और बड़े चाव से छत के नीचे मैना के घोंसले की ओर देख रहा था। गोदाम की ढलवाँ छतें तिकोन—सा बनाती थीं, दो पल्ले ढलवाँ उतरते थे और नीचे एक लम्बा शहतीर कमरे के आरपार डाला गया था। इसी शहतीर पर टूटे हुए रोशनदान के पास ही एक बड़ा—सा घोंसला था, जिसमें से उभरे हुए तिनके, रुई के फाहे और लटकती थिगलियाँ हमें नज़र आ जाती थीं। यह मैना का घोंसला था। कबूतर अलग से, दूसरी ओर शहतीर पर गूटरगूँ—गूटरगूँ कर रहे थे और सारा वक़्त शहतीर के ऊपर मटरगश्ती करते रहने में गुज़ारते थे।

“घोंसले में मैना के बच्चे हैं।” बोधराज ने कहा और अपनी गुलेल से निशाना साध लिया। तभी मुझे घोंसले में से छोटे—छोटे बच्चों की पीली—पीली नन्हीं चोंचें झाँकती नज़र आईं।

“देखा?” बोधराज कह रहा था, “ये विलायती मैना है, इधर घोंसला नहीं बनाती। इनके माँ—बाप ज़रूर अपने काफ़िले से बिछड़ गए होंगे और यहाँ आकर घोंसला बना लिया होगा।”

“इनके माँ—बाप कहाँ हैं?” मैंने बोधराज से पूछा।

“चुगगा लेने गए हैं। अभी आते होंगे।” यह कहते हुए बोधराज ने अपनी गुलेल उठाई। मैं उसे

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

रोकना चाहता था कि घोंसले पर गुलेल नहीं चलाए पर तभी बोधराज की गुलेल से फर्रर की आवाज़ निकली और इसके बाद जोर की टन की आवाज़ आई। गुलेल का कंकड़ घोंसले से न लगकर सीधा छत पर जा लगा था, जहाँ टीन की चादरें लगी थीं।

दोनों चोंच घोंसले के बीच कहीं गायब हो गईं। और फिर सकता—सा आ गया। लग रहा था मानों मैना के बच्चे सहमकर चुप हो गए हों।

तभी बोधराज ने गुलेल से एक और वार किया। अबकी कंकड़ शहतीर में लगा। बोधराज अपने अचूक निशाने पर बड़ा अकड़ा करता था। दो निशाने चूक जाने पर वह बौखला उठा, अबकी बार वह थोड़ी देर तक चुपचाप खड़ा रहा जिस वक़्त मैना के बच्चों ने अपनी चोंच फिर से उटाई और घोंसले के बाहर झाँककर देखने लगे, उसी समय बोधराज ने तीसरा वार किया। अबकी कंकड़ घोंसले के किनारे पर लगा। तीन—चार तिनके और रुई के गोले उड़े और छितरा—छितराकर फ़र्श की ओर उड़ने लगे। लेकिन घोंसला गिरा नहीं।

बोधराज ने फिर से गुलेल तान ली थी। तभी कमरे में एक भयानक—सा साया डोल गया। हमने नज़र उठाकर देखा। रोशनदान में से आनेवाली रोशनी सहसा ढक गई थी। रोशनदान के सीखचे पर एक बड़ी—सी चील पर फ़ैलाए बैठी थी। हम दोनों टिठककर उसकी ओर देखने लगे। रोशनदान में बैठी चील भयानक—सी लग रही थी। “यह चील का घोंसला होगा। चील अपने घोंसले में लौटी है।” मैंने जोर से कहा— ‘नहीं, चील का घोंसला यहाँ कैसे हो सकता है? चील अपना घोंसला पेड़ों पर बनाती है। यह मैना का घोंसला है।’

उसी वक़्त घोंसले में से चों—चों की ऊँची आवाज़ आने लगी। घोंसले में बैठे मैना के बच्चे पर फड़फड़ाने और चिल्लाने लगे।

हम दोनों निश्चेष्ट से खड़े हो गए, यह देखने के लिए कि चील अब क्या करेगी। हम दोनों टकटकी बाँधे चील की ओर देखे जा रहे थे।

चील रोशनदान में से अंदर आ गई। उसने अपने पर समेट लिए थे और रोशनदान पर से उतरकर गोदाम के आर—पार लगे शहतीर पर उतर आई थी। वह अपना छोटा—सा सिर हिलाती, कभी दाएँ और

कभी बाएँ देखने लगती। मैं चुप था, बोधराज भी चुप था, न जाने वह क्या सोच रहा था।

घोंसले में से बराबर चों-चों की आवाज़ आ रही थी, बल्कि पहले से कहीं ज़्यादा बढ़ गई थी। मैना के बच्चे बुरी तरह डर गए थे।

“यह यहाँ रोज़ आती होगी।” बोधराज बोला।

अब मेरी समझ में आया कि क्यों फ़र्श पर जगह-जगह पंख और माँस के लोथड़े बिखरे पड़े रहते हैं। ज़रूर हर आए दिन चील घोंसले पर झपट्टा मारती होगी। माँस के टुकड़े और खून-सने पर इसी की चोंच से गिरते होंगे।

बोधराज अभी भी टकटकी बाँधे चील की ओर देख रहा था।

अब चील धीरे-धीरे शहतीर पर चलती हुई घोंसले की ओर बढ़ने लगी थी और घोंसले में बैठे मैना के बच्चे पर फड़फड़ाने और चीखने लगे थे। जब से चील रोशनदान पर आकर बैठी थी, मैना के बच्चे चीखे जा रहे थे। बोधराज अब भी मूर्तिवत खड़ा चील की ओर ताके जा रहा था।

मैं घबरा उठा। मैं मन में बार-बार कहता, ‘क्या फ़र्क पड़ता है अगर चील मैना के बच्चों को मार डालती है या बोधराज अपनी गुलेल से उन्हें मार डालता है? अगर चील नहीं आती तो इस वक़्त तक बोधराज ने मैना का घोंसला नोच भी डाला होता।’

तभी बोधराज ने गुलेल उठाई और सीधा निशाना चील पर बाँध दिया। “चील को मत छेड़ो, वह तुम पर झपटेगी।” मैंने बोधराज से कहाँ – मगर बोधराज ने नहीं सुना और गुलेल चला दी। चील को निशाना नहीं लगा। कंकड़ छत से टकराकर नीचे गिर पड़ा और चील ने अपने बड़े-बड़े पंख फैलाए और नीचे सिर किए घूरने लगी।

“चलो यहाँ से निकल चलें,” मैंने डरकर कहा।

“नहीं! हम चले गए तो चील बच्चों को खा जाएगी।”

उसके मुँह से यह वाक्य मुझे अटपटा लगा। अभी कुछ देर पहले खुद तो घोंसला तोड़ने के लिए गुलेल उठा लाया था।

बोधराज ने एक और निशाना बाँधा। मगर चील उस शहतीर पर से उड़ी और गोदाम के अंदर पर फैलाए तैरती हुई—सी आधा चक्कर काटकर फिर से शहतीर पर जा बैठी। घोंसले में बैठे बच्चे बस लगातार चों—चों किए जा रहे थे।

बोधराज ने झट से गुलेल मुझे थमा दी और जेब में से पाँच सात कंकड़ निकालकर मेरी हथेली पर रखे। “तुम चील पर गुलेल चलाओ। चलाते जाओ, उसे बैठने नहीं देना।” उसने कहा और स्वयं भागकर दीवार के साथ रखी मेज़ को घसीटकर फर्श के बीचों—बीच लाने लगा।

मैं गुलेल चलाना नहीं जानता था। दो—एक बार मैंने कंकड़ रखकर गुलेल चलाई लेकिन इस बीच चील गोदाम के दूसरे शहतीर पर जा बैठी थी।

बोधराज मेज़ को घसीटता हुआ ऐन मैना के घोंसले के नीचे ले आया। फिर उसने मेज़ पर एक टूटी हुई कुर्सी चढ़ा दी और फिर उछलकर मेज़ पर चढ़ गया और वहाँ से कुर्सी पर जा खड़ा हुआ। फिर बोधराज ने दोनों हाथ ऊपर को उठाए, जैसे—तैसे अपना संतुलन बनाए हुए उसने धीरे से दोनों हाथों से घोंसले को शहतीर पर से उठा लिया और धीरे—धीरे कुर्सी पर से उतर कर मेज़ पर आ गया और घोंसले को थामे—थामे छलांग लगा दी।

“चलो, बाहर निकलकर चलो,” उसने कहा और दरवाज़े की ओर लपका।

गोदाम में निकलकर हम गराज में आए गए। गराज में एक ही बड़ा दरवाज़ा था और दीवार में छोटा—सा एक झरोखा। यहाँ भी गराज के आरपार लकड़ी का एक शहतीर लगा था।

“यहाँ पर चील नहीं पहुँच सकती,” बोधराज ने कहा और इधर—उधर देखकर बक्से पर चढ़कर घोंसले को एक टूटे शहतीर के ऊपर रख दिया।

थोड़ी देर में घोंसले में बैठे मैना के बच्चे चुप हो गए। बोधराज बक्से पर चढ़कर मैना के घोंसले में झाँकने लगा। मैंने सोचा, अभी हाथ बढ़ाकर दोनों बच्चों को एक साथ उठा लेगा, जैसा वह अक्सर किया करता था, फिर भले ही उन्हें जेब में डालकर घूमा फिरे। मगर उसने ऐसा कुछ नहीं किया। वह देर तक घोंसले के अंदर झाँकता रहा और फिर बोला, “थोड़ा पानी लाओ, इन्हें प्यास लगी है। इनकी

चोंच में बूँद-बूँद पानी डालेंगे।”

मैं बाहर गया और एक कटोरी में थोड़ा-सा पानी ले आया। दोनों नन्हें-नन्हें बच्चे चोंचें ऊपर को उठाए हाँफ रहे थे। बोधराज ने उनकी चोंच में बूँद-बूँद पानी डाला और बच्चों को छूने से मुझे मना कर दिया, न ही स्वयं उन्हें छुआ।

“इन बच्चों के माँ-बाप यहाँ कैसे पहुँचेंगे?” मैंने पूछा।

“वे इस झरोखे में से आ जाएँगे। वे अपने-आप इन्हें ढूँढ निकालेंगे।”

हम देर तक गराज में बैठे रहें। बोधराज देर तक मनसूबे बनाता रहा कि वह कैसे रोशनदान को बंद कर देगा, ताकि चील कभी गोदाम के अंदर न आ सके। उस शाम वह चील की ही बातें करता रहा।

दूसरे दिन जब बोधराज मेरे घर आया तो न तो उसके हाथ में गुलेल थी और न जेब में कंकड़, बल्कि जेब में बहुत-सा चुग्गा भरकर लाया था और हम दोनों देर तक मैना के बच्चों को चुग्गा डालते और उनके करतब देखते रहे थे।

भीष्म साहनी

भीष्म साहनी : (1915-2003) रावलपिंडी में पैदा हुए। पत्रकारिता, अध्यापन, नाटक मंडली में काम के साथ-साथ साहित्य लेखन भी किया। इप्टा, प्रगतिशील लेखक संघ, अफ्री-एशियाई लेखक संघ जैसे संगठनों को मजबूती प्रदान की। उनकी प्रमुख रचनाएँ भाग्य रेखा, कुत्तों, भटकती राख, तमस, हानूश, कबिरा खड़ा बाज़ार में आदि हैं।

कहानी में ढूँढो—

1. बोधराज जानवरों के साथ बहुत क्रूर बरताव करता था। कहानी की किन-किन घटनाओं से इस बात का पता चलता है? (कम-से-कम 4 घटनाएँ बताइए।)

2. ‘नहीं हम चले गए तो चील बच्चों को खा जाएगी।’ यह बात बोधराज के मुँह से क्यों अटपटी लग रही थी ?

3. ‘पक्षियों के घोंसलों पर तो उसकी विशेष कृपा रहती थी।’ इस लाइन में लेखक क्या कहना चाह रहे हैं ?

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

4. बोधराज ने मैना के बच्चों को बचाने के लिए क्या तरकीब सोची ?

5. कहानी के आधार पर बोधराज के चरित्र का वर्णन कीजिए।

अपनी समझ से—

1. लेखक ने अपने घर के चिड़िया के घोंसले के बारे में बताया है। इसी तरह आप भी अपने घर के बारे में विवरण लिखिए।

भाषा की बात—

1. (अ) एक हरबंस नाम का लड़का था। जिसके सब काम अनूठे हुआ करते थे। परदादा हो जी।

रेखांकित शब्द 'जिसके' का प्रयोग हरबंस के लिए हुआ है।

इस पैराग्राफ में और कौन-कौन से शब्द हैं जिनका प्रयोग 'हरबंस' के लिए किया गया है? यह भी बताइये कि ये शब्द व्याकरण की दृष्टि से किस वर्ग में आते हैं ?

(ब) 'हरबंस' की जगह 'रानी' रखकर इस पैराग्राफ को फिर से लिखिए।

(स) पैराग्राफ फिर से लिखते समय आपको कहाँ-कहाँ बदलाव करना पड़ा? और क्यों?

2. रेखांकित शब्दों के अर्थ बताइये।

(अ) जब वह चिहुँटी काटता तो लगता कि साँप ने डस लिया।

(ब) इनके माँ-बाप ज़रूर अपने काफ़िले से पिछड़ गए होंगे।

(स) नीचे एक लम्बा शहतीर कमरे के आर-पार डाला गया था।

इकाई – 5

हिन्दी भाषा व उसका व्याकरण

परिचय :

व्याकरण को भाषा सीखने-सिखाने का एक अनिवार्य हिस्सा माना जाता है। अक्सर भाषा सिखाने को व्याकरण सिखाने के तुल्य समझा जाता है। भाषा शिक्षण के इन प्रयासों में व्याकरण सिखाने के लिए नये-नये तरीके खोजे जाते रहे हैं और इस पर कुल समय का काफी बड़ा हिस्सा भी लगाया जाता रहा है। व्याकरण सिखाने के ऐसे अधिकांश प्रयासों में व्याकरण सिखाने को नियमों व परिभाषाओं की स्पष्ट जानकारी के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा है। यह तो शायद माना जाता है कि व्याकरण के नियम व परिभाषाएँ भाषायी सामग्री में ही निहित है लेकिन फिर भी इन्हें सिखाने के लिए भाषायी संदर्भ व सामग्री से काट कर अमूर्त तथ्यों के रूप में रखा जाता है। सीखने वाले से अपेक्षा की जाती है कि वह इन्हें इस अमूर्त स्वरूप में आत्मसात कर पाएगा। ऐसे प्रयास अक्सर व्याकरण सीखने से भाषा को बेहतर उपयोग की क्षमता से बिल्कुल जोड़ नहीं पाते, फिर भी यह समझाया जाता है कि व्याकरण सीखे बिना भाषा नहीं सीखी जा सकती।

भाषा विज्ञान व भाषा शिक्षण के क्षेत्र में हुए शोधों ने भाषायी संदर्भ से अलग कर व्याकरण सिखाने के इस तरीके पर प्रश्न खड़े किए हैं। इस सबसे भाषा शिक्षण का नजरिया बदला है। इस इकाई में हम इस बदलते नजरिए के बारे में बात करेंगे।

उद्देश्य :

- भाषा में व्याकरण की भूमिका की समझ बना पाना।
- व्याकरण क्या होता है? इस विषय पर एक स्पष्ट दृष्टिकोण विकसित करना।
- भाषा में व्याकरण शिक्षण क्यों आवश्यक है? इसकी समझ बना पाना।
- भाषा शिक्षण में भाषा विज्ञान के शोधों के प्रति एक नया दृष्टिकोण विकसित करना।
- भाषा व व्याकरण के संबंध को समझ पाना।
- व्याकरण की किताब कैसे बने? व इसे कैसे सिखाया जाए? की समझ विकसित करना।

इस इकाई के केन्द्र में ये तीन प्रश्न होंगे।

1. व्याकरण से हमारा क्या तात्पर्य है? हम व्याकरण को क्या समझते हैं?
2. भाषा व व्याकरण में किस तरह का संबंध है?
3. व्याकरण शिक्षण क्यों आवश्यक है? और इसी के साथ-साथ किस तरह का व्याकरण शिक्षण उपयोगी व सार्थक है।

व्याकरण क्या है?

हर भाषा चाहे वह छत्तीसगढ़ी हो या तमिल, गोंडी हो या हल्बी, हिंदी हो या अंग्रेजी या फिर अन्य कोई भी भाषा, व्याकरण युक्त होती ही है। वह ध्वनि, शब्द, वाक्य व संवाद के स्तर पर नियमबद्ध होती है। भाषायी इकाइयों के गठन के ये नियम ही व्याकरण हैं। (हालाँकि इनके अलावा कुछ और नियम भी शामिल

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

होते हैं जो विशिष्ट समय के लिए होते हैं।) आगे हम कुछ उदाहरण लेकर यह समझाने का प्रयास करेंगे कि कैसे भाषाएँ हर स्तर पर नियमबद्ध होती हैं।

क्या आप जानते हैं कि हिन्दी भाषा में कितनी स्वतंत्र ध्वनियाँ हैं जिनसे हिन्दी की पूरी भाषायी सामग्री की रचना होती है? क्या आप स्वर व व्यंजन ध्वनि का भेद जानते हैं? यह सब हमने इस पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष में पढ़ा था। चाहें तो इसे दोहरा लें।

हिन्दी भाषा में कुल 46 ध्वनियाँ होती हैं 10 स्वर ध्वनियाँ व 36 व्यंजन ध्वनियाँ, इन्हीं ध्वनियों को जोड़कर हम शब्द बनाते हैं, लेकिन ऐसा नहीं हो सकता कि जब जिसको जो ठीक लगा उसी के हिसाब से उसने ध्वनियों को रख कर मन-माफिक शब्द बना लिया। हालाँकि इन ध्वनियों को आगे-पीछे रखकर कई तरह से जोड़ा जा सकता है और इससे असंख्य शब्द बना सकते हैं, फिर भी इन्हें जोड़ने की संभावना और उसके क्रम पर कई बंधन हैं। सार्थक शब्द बनाने के लिए भाषा हमें ध्वनियों के साथ खेलने की नियमबद्ध स्वतंत्रता देती है। इन ध्वनियों को क्रम में रखने के कुछ नियमों के बारे में हमने प्रथम वर्ष में पढ़ा है। एक नियम यह है कि हिन्दी भाषा के अधिकांश शब्दों की सरचना व्यंजन-स्वर, व्यंजन-स्वर होती है। यदि हम हिन्दी भाषा के शब्दों की सूची बनाएँ और उनकी ध्वनियों को बारीकी से जाँचे तो हम पाएँगे कि उनमें से ज्यादातर शब्दों में बारी-बारी से व्यंजन व स्वर ध्वनियाँ निकलती हैं।

जैसे वायु = व् + आ + य् + उ

व्यंजन + स्वर + व्यंजन + स्वर

भाषा = भ् + आ + ष् + आ

व्यंजन + स्वर + व्यंजन + स्वर

आप भी इसी तरह हिन्दी, छत्तीसगढ़ी, गोंडी, हल्बी... या फिर अन्य भाषाओं के शब्दों को लीजिए व देखिए की क्या उनमें भी ध्वनि जोड़ने में यही नियम होता है? क्या इसका न पालन करने वाले शब्द मिले? क्या उनमें कुछ और नियम खोजा जा सकता है? क्या आप सिर्फ स्वर ध्वनियों अथवा सिर्फ व्यंजन ध्वनियों वाले शब्द ढूँढ पाएँ?

ऐसे शब्दों का एक वर्ग है जिनमें केवल स्वर ध्वनियाँ होती हैं पर ऐसे शब्द नहीं होंगे जिसमें केवल व्यंजन ध्वनियाँ ही हों।

कुछ प्रश्न :

- उदाहरण के लिए आओ, ओ, इत्यादि ऐसे शब्द हैं जिनमें केवल स्वर ध्वनियाँ हैं। क्या आप ऐसे और शब्दों को ढूँढ सकते हैं जिनमें केवल स्वर ध्वनियाँ हों? शब्द सोचिए व लिखिए।
- क्या कुछ शब्द ऐसे मिले जिनमें केवल व्यंजन ध्वनियाँ हों?
- क्या ऐसे शब्द मिले जिनमें व्यंजन स्वर व्यंजन स्वर न हो? क्या आप ऐसे 10 शब्द ढूँढ सकते हैं? इनकी संख्या स्वर व्यंजन स्वर... वाले शब्दों से कम होगी अथवा ज्यादा?

दूसरा नियम यह है कि ध्वन्यात्मक मूल्य स्थान के अनुसार अलग-अलग हो सकते हैं। 'लड़का' में 'ल' पूरा है लेकिन कमल व कलकल के तीनों ल् आधे हैं।

काला	=	क् + आ + ल् + आ
		व्यजंन + स्वर + व्यजंन + स्वर
कमला	=	क् + अ + म् + ल् + आ
		व्यजंन + स्वर + व्यजंन + व्यजंन + स्वर
कलकल	=	क् + अ + ल् + क् + अ + ल
		व्यजंन + स्वर + व्यजंन + व्यंजन + स्वर + व्यजंन

हिन्दी का ही एक अन्य नियम है कि व्यजंन-स्वर- व्यजंन-स्वर की कड़ी में अंतिम 'अ' स्वर बोला नहीं जाएगा। आप इन शब्दों के बारे में व ऐसे ही अन्य शब्दों के बारे में सोचिए। कमल, सरल, बात, साथ क्या इनमें हम अंतिम अ स्वर बोलते हैं?

क्या आप ऐसे कुछ और नियम सोच सकते हैं? कोई भी और भाषा जो आप जानते हैं लेकर देखिए कि क्या ये नियम उस भाषा पर भी लागू होते हैं?

यह हुई ध्वनि के स्तर पर नियमों की बात। यह जरूर हो सकता है कि भाषा विशेष के संदर्भ में इन नियमों में थोड़ा फर्क हो। लेकिन कोई भी भाषा यह स्वतन्त्रता नहीं देती कि व्यक्ति अपने मन मुताबिक किन्हीं भी ध्वनियों को मिला सके। उनको जोड़कर सार्थक शब्द बनाने के नियम हैं।

शब्दों के स्तर पर नियम

किसी भी भाषा में अर्थ के स्तर पर सबसे छोटी इकाई शब्द है। इस हिस्से में हम हिन्दी भाषा में शब्दों के स्तर पर लागू नियमों तथा शब्दों के बीच सम्बन्धों को समझने का प्रयास करेंगे। शब्दों को मुख्यता दो वर्गों में रखा जा सकता है। 1. वे शब्द जो परिवर्तित नहीं होते यानी अपरिवर्तित/अपरिवर्तनीय शब्द (जिन्हें अविकारी शब्द कहा जाता है) 2. परिवर्तित होने वाले शब्द (विकारी शब्द कहा जाता है) किसी भी टेक्स्ट यथा कहानी, कविता, निबंध में दोनों तरह के शब्द मिलेंगे। यदि आप ऊपर लिखे गए हिस्से को भी फिर से पढ़ें तो पाएँगे कि इसमें भी दोनों तरह के शब्द हैं। कुछ शब्द ऐसे हैं, जो बार-बार आए हैं, अलग-अलग जगहों पर आए हैं। लेकिन उनका रूप परिवर्तित नहीं हुआ है जैसे के, ने, में, का, पर इत्यादि।

क्या ऐसे कुछ और शब्द आप सोच सकते हैं?

छत्तीसगढ़ी में भी क्या ऐसे शब्द हैं?

कुछ प्रश्न :

- अभी तक लिखे गए अनुच्छेदों (पैराग्राफो) को ध्यान से पढ़िए व बताइए क्या उनमें इस तरह के और भी शब्द आए हैं? वे शब्द कौन-कौन से हैं?
- क्या आप बता सकते हैं कि दूसरे वर्ग के शब्दों में कौन से शब्द सम्मिलित होंगे?
- दूसरी तरह के 10 शब्दों व उनके स्वरूपों को लिखें।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

आपकी मदद हेतु एक उदाहरण— जैसे एक शब्द आया है भाषा, मूल शब्द है भाषा लेकिन विभिन्न शब्द निर्माण प्रक्रियाओं के जरिये अनेक शब्दों में यह दिखता है, जैसे भाषायी, भाषाओं (ये दोनों ऊपर अनुच्छेद में भी आए हैं), भाषाएँ, भाषी, भाषिक इत्यादि।

शब्द निर्माण

चलिए अब कुछ शब्द निर्माण प्रक्रियाओं को देखें, सबसे पहले हिन्दी में संज्ञाओं के संदर्भ में लिंग के निरूपण को रखते हैं।

सुनार, लुहार, कामगार, कुम्हार, सियार इत्यादि। ये पुल्लिंग संज्ञाएं इन्सानों अथवा पशुओं के लिए उपयोग होती हैं। इन्हें स्त्रीलिंग बनाने के लिए उनमें 'इन' जोड़ दिया जाता है।

लुहार – लुहारिन

कुम्हार – कुम्हारिन

कुछ प्रश्न :

- आप कुछ ऐसे ही और शब्द बनाएँ जिनमें 'इन' जोड़ने से स्त्रीलिंग बन जाता है।

हिन्दी भाषा में सामान्य तौर पर अजीवित संज्ञाओं एवं पौधों में पुल्लिंग व स्त्रीलिंग दोनों एक साथ नहीं होते। यदि गेंद स्त्रीलिंग है तो वही रहेगी और बल्ला पुल्लिंग ही। हिन्दी भाषा में पुल्लिंग संज्ञा से स्त्रीलिंग संज्ञा बनाने के कुछ और नियम सोचें।

अगर हम शेर, मोर इत्यादि शब्दों को देखें तो इनमें 'नी' जोड़ने से पुल्लिंग का स्त्रीलिंग बनता है, यानी ऊपर बनाया गया नियम इस तरह के शब्दों पर लागू नहीं है।

कुछ प्रश्न :

- दोनों श्रेणियों जैसी 5-5 संज्ञाएँ लीजिए व उनके स्त्रीलिंग व पुल्लिंग शब्द बनाइए। ऐसे अभ्यास और बनाएँ—
- सेठ का स्त्रीलिंग सेठानी है। सेठ जैसे और कौन से शब्द आप सोच सकते हैं?
- इन शब्दों को देखिए और बताइए कि इनके स्त्रीलिंग शब्द कैसे बनेंगे।

लड़का, बेटा, दादा, धोबी, माली

- क्या आप इन सभी शब्दों को एक ही वर्ग में रखेंगे अथवा अलग-अलग? क्यों?
- इन दोनों श्रेणियों की क्या खास बात है? कौन सा गुण इन्हें अलग करता है? हर श्रेणी में और 5-5 शब्द रखें।

बहुवचन बनाने के नियम

अक्सर भाषा की कक्षाओं में यह पढ़ाया जाता है कि हिन्दी में हर संज्ञा का एक बहुवचन रूप होता है। यथा लड़का का लड़के, कुर्सी का कुर्सियाँ इत्यादि। लेकिन क्या यह सही है? कुर्सियों को..., लड़कों को ... में कुर्सियों व लड़कों बहुवचन के रूप हैं। ध्यान से सोचें तो हिन्दी में वचन व कारक के अनुसार हर संज्ञा के एक या दो नहीं बल्कि छह रूप होते हैं। इनमें से कुछ रूप एक सामान होते हैं लेकिन पूरे संदर्भ को देखें तो फर्क पता चलेगा। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्यों को देखें—

1. लड़का जाता है।

2. लड़के जाते हैं।
3. लड़के ने खाना खाया।
4. लड़कों ने खाना खाया।
5. ओ लड़के चला जा।
6. ओ लड़को! चले जाओ।

आप देख सकते हैं कि वाक्य 2 व वाक्य 3 व वाक्य 5 में आए लड़के शब्द का रूप एक जैसा है लेकिन वाक्य दो में जहाँ लड़के बहुवचन है (कर्ता) वहीं वाक्य 3 में एकवचन।

वाक्य 2,3,5 तीनों में 'लड़के' आया है। इनमें वाक्य 2 में लड़के कई लड़कों के लिए है, इसलिए अलग है। वाक्य 5 में आया लड़के भी वाक्य 3 के लड़के से अलग है क्योंकि यदि इन दोनों के स्त्रीलिंग रूप को देखें तो ऐसा मिलेगा "ओ लड़के चला जा, ओ लड़की चली जा।"

लड़के ने खाना खाया। लड़की ने खाना खाया।

अर्थात् दोनों में से एक रूप ऐसा है जिसके साथ वाक्य में कुछ बदलाव आ सकता है और कुछ रूप ऐसा है जिसमें यह बदलाव नहीं आता। यह कहना जरूरी होगा कि हर वाक्य 5 जैसे वाक्य में परिवर्तित नहीं होता। ओ लड़के चल, ओ लड़की चल।

यानी देखने पर तो लड़का संज्ञा के चार रूप हैं लड़का, लड़के, लड़कों, लड़को लेकिन प्रयोग के आधार पर 6 रूप, जैसा कि आप इस तालिका में देख सकते हैं।

लड़का		
कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	लड़का	लड़के
विभक्ति पूर्व	लड़के	लड़कों
संबोधन	लड़के!	लड़को!

कुछ प्रश्न :

- आप भी इसी तरह वाक्य लिखकर निम्नलिखित शब्दों के बहुवचन बनाएँ।
नदी, घर कमरा, लड़की, बेटा, मछली, कहानी और फिर बताएँ कि प्रत्येक के छह रूप कौन-कौन से हैं?
- ऐसे कौन-कौन से शब्द हैं जिनमें रूपों के प्रकार की संख्या समान है? जैसे लड़का के 4 रूप हैं। किसी एक अन्य भाषा में भी संज्ञा व उसके बहुवचन के रूप खोजने का प्रयास करें।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

इन वाक्यों को देखें:

1. हनीफ़ खाना खाता है
2. अंजलि खाना खाती है
3. वह खेलता है
4. वह खेलती है
5. मैं खेलता हूँ
6. मैं खेलती हूँ
7. हम खेलते हैं
8. हम खेलती हैं
9. तुम खेलते हो
10. तुम खेलती हो

इन सभी वाक्यों को ध्यान से देखें तो हम पाएँगे कि हिन्दी में कर्ता व क्रिया में सीधा सम्बन्ध है। क्रिया कर्ता के लिंग के अनुसार बदल रही है। यदि कर्ता हनीफ़ है यानि पुल्लिंग तो क्रिया में भी यह दिखाई देता है। यह सम्बन्ध इतना स्पष्ट है कि सामान्य तौर पर हम सिर्फ़ क्रिया को देख कर बता सकते हैं कि कर्ता का लिंग, वचन व पुरुष क्या होगा। उदाहरण के लिए वाक्य तीन देखें, "वह खेलता है", इसमें 'वह' – तृतीय पुरुष, एकवचन, पुल्लिंग है।

कुछ प्रश्न :

- अब आप को वाक्यों में कर्ता व क्रिया देखकर बताएँ कि कर्ता कौन है?
कुछ और वाक्य उदाहरण हेतु नीचे लिखे गए हैं।
राम खाना खाता है।
गीता खाना खाती है।
सोहन ने रोटी खाई।
सीता ने रोटी खाई।
वह हँस रहा है।
- आप भी हिन्दी भाषा के ऐसे सामान्य 20 वाक्य लिखिए।
- इन वाक्यों को लिखने के बाद पता कीजिए कि क्या इन वाक्यों में कर्ता और क्रिया में कोई संबंध है? यदि हाँ तो बताइये।
- ऐसे ही 20 वाक्य आप अपनी स्थानीय भाषा व अंग्रेजी भाषा के लिखें व उनका विश्लेषण करें। क्या कर्ता और क्रिया में सीधा संबंध है?
- क्या हिन्दी में सभी वाक्यों में कर्ता व क्रिया में सीधा संबंध होता है? यदि नहीं तो ऐसे कुछ वाक्य लिखिए जिनमें यह संबंध न हो।
- इन वाक्यों में क्या खास गुण हैं?
रेशमा ने 6 ऐसे वाक्य लिखे हैं—
राम ने रोटी खाई।
लक्ष्मी ने पत्थर मारा

कुत्ते ने चुहियों को खाया।

कुत्ते ने चूहे को खाया।

बिल्ली ने चुहिया को खाया।

बिल्ली ने चूहे को खाया।

- कुछ और ऐसे वाक्य लिखें और बताएँ इनमें क्या गुण हैं।

संवाद

हमने देखा कि भाषा ध्वनि, शब्द व वाक्य के स्तर पर नियमबद्ध है। उसी प्रकार संवाद के भी नियम होते हैं। एक दूसरे से बात करते वक्त हमें इन नियमों का ध्यान रखना होता है वरना बातचीत नहीं हो पाएगी।

आपकी किसी के साथ हुई बातचीत के बारे में सोचिए।

पहली बात यह है कि बात करने वालों को यह पता होता है कि किस के बारे में बात हो रही है व उसका संदर्भ क्या है। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप किसी से पूछते हैं— जनाब आप कहा जा रहे हैं? इसके जवाब में यदि वह कहता है टमाटर तो इसका अर्थ निकलेगा कि वह टमाटर लेने, बेचने, खाने अथवा फेंकने जा रहा है। इस एक शब्द में एक पूरा कथन है जो संदर्भ से स्पष्ट हो सकता है। इसी तरह अगर वह कहता है हथियार, क्रिकेट, बाजार, मेला या ऐसा कुछ तो इस कथन का अर्थ संदर्भ से निकल सकता है। किन्तु अगर वह आप के सवाल के जवाब में बोले 'नी' या 'का' या 'के' तो फिर संवाद नहीं शुरू हुआ। इसके बाद आप कोई और सवाल पूछ कर बात को आगे नहीं बढ़ा सकते। इसका अर्थ यह है कि संवाद के नियम हमें बहुत कम शब्दों के इस्तेमाल के साथ काफी बड़े कथन प्रेषित करने की क्षमता देते हैं। ऐसा कर पाने के लिए ध्यान से सुनना व ध्यान से पढ़ना आवश्यक है।

इस कथन को पढ़ें। "लक्ष्मी और रश्मि खेल रही थीं। लक्ष्मी छोटी है और इसलिए उसका ज्यादा ध्यान रखा जाता है। ऐसे उसकी बहन हमेशा पहले खेलने देती है। हालाँकि ऐसा करते समय उसे दुःख जरूर होता है लेकिन फिर भी वह अपनी बहन के प्यार की वजह से अपना दुःख भुला देती है।" इस पैरा में एक ही बात पर ध्यान दें। यहाँ लक्ष्मी और रश्मि की बात कही जा रही है। पैराग्राफ में शुरू के बाद कहीं भी इनके नाम नहीं आए हैं किन्तु हम हर जगह उस, अपने आदि की जगह रश्मि अथवा लक्ष्मी कौन आएगी बता सकते हैं। यह हम इसलिए बता सकते हैं क्योंकि भाषा में संवाद के स्तर के नियम हम जानते हैं। ये नियम पढ़ते-लिखते समय व बोलते-सुनते समय हम इस्तेमाल करते हैं।

भाषा और विचार के स्तर पर और भी कई ऐसे लक्षण हैं जो वाक्यों की लड़ी को एक संवाद में बुन देते हैं। उदाहरण के लिए 'वह, उसने, पर, और, क्योंकि, इसलिए आदि' ऐसे शब्द हैं जिनके बिना संवाद की कल्पना करना संभव नहीं है। मानो कोई कहता है : मुझे इसलिए देर हो गई क्योंकि रास्ते में ट्रैफिक बहुत था। यदि इस वाक्य में से हम 'इसलिए' और 'क्योंकि' निकाल दें तो यह वाक्य लगभग निरर्थक हो जाएगा। विचारों के स्तर पर एक संवाद तभी सार्थक होता है जब उसमें आए वाक्य एक विशेष क्रम में लगे हों। जैसे ही वह क्रम टूटेगा पूरा संवाद शब्दों का एक निरर्थक जाल भर रह जाएगा।

भाषायी नियमों के अलावा संवाद के कुछ सामाजिक नियम भी होते हैं। जैसे—

कई बार ऐसा होता है कि प्रश्न कुछ और पूछा जाता है और उसका जवाब कुछ और आता है। इस स्थिति में वक्ता व श्रोता दोनों को ही यह प्रयास करना पड़ता है कि वे एक दूसरे की बात को ध्यान से सुनें

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

व वही समझने का प्रयास करें जो कहा जा रहा है। अतः संवाद का एक नियम यह भी है कि वक्ता को अपनी बात कहने का पूरा समय दिया जाय। जब वह बात कर रहा हो तो उसकी बात बीच में न काटी जाए, और साथ ही श्रोता द्वारा उस बात को ध्यान पूर्वक सुना जाय। ऐसा नहीं हो सकता कि जब वक्ता अपनी बात कह रहा हो तो श्रोता किसी और से बात करने में व्यस्त हो अथवा किसी का फोन सुनने में, जैसा कि अमूमन होता है।

दूसरे को अपनी बात कहने देना व उसके द्वारा कही गई बात को धैर्य पूर्वक सुनना, समझना यह भी भाषा शिक्षण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। लेकिन कक्षा में भाषा शिक्षण के दौरान इस पर ध्यान नहीं दिया जाता।

कुछ प्रश्न :

- क्या आप सोचते हैं कि संवाद में भी व्याकरण का प्रयोग होता है? तो कैसे उदाहरण द्वारा समझाइए?

भाषा व व्याकरण का संबंध

इस हिस्से की शुरुआत हम दो प्रश्नों से करेंगे। पहला, क्या बगैर व्याकरण भाषा हो सकती है? व दूसरा यह कि पहले व्याकरण बनी या भाषा।

आप इन सवालों के बारे में क्या सोचते हैं?

पहले सवाल के बारे में सोचें तो देखेंगे कि प्रत्येक भाषा में कुछ पैटर्न होते हैं और यही पैटर्न अथवा नियम उपयोग करके हम शब्द व वाक्य गढ़ते हैं। यदि वाक्यों को गढ़ने के नियम न हों और शब्दों को किसी भी क्रम में रखा जा सके तो अर्थ निकालना संभव नहीं होगा। जैसे, वाक्य 'रजनी ने खत लिखा' में 'ने' खत के पहले है और यह नियमबद्ध है। यदि नियम न हो और 'खत ने लिखा रजनी' उचित हो या 'लिखा ने रजनी खत' तो समझना मुश्किल होगा कि कौन लिख रहा है और क्यों लिख रहा है? अगर बहुवचन बनाने के नियम न हो तो पता नहीं चलेगा कि एक खत की बात हो रही है अथवा अनेक खतों की। हिन्दी भाषा बोलने वाले इन नियमों को जानते हैं। वे लोग जो हिन्दी का उपयोग करते हैं, वे काफी कम उम्र में (काफी जल्दी) ध्वनि, शब्द, वाक्य, संवाद स्तर के पैटर्नों को सहजता से आत्मसात कर लेते हैं। हिन्दी उपयोग करने वाले सभी लोग इन पैटर्नों को समझते हैं और तभी वे उस भाषा का उपयोग कर पाते हैं। ऐसा नहीं कि हम इन नियमों व पैटर्नों को बता सकें पर हम जानते हैं। इनके अभाव में हम एक दूसरे से बात ही नहीं कर पाएँगे। ऐसा सभी भाषाओं में होता है। हर भाषा के अपने नियम होते हैं और सभी नियम हर भाषा में हों ऐसा आवश्यक नहीं। हालांकि कुछ ऐसे भी नियम हैं जो सभी भाषाओं में हैं। इनमें से एक नियम ध्वनि स्तर पर व्यंजन स्वर-व्यंजन स्वर... वाले शब्दों की बहुतायत का है। यह नियम लगभग सभी भाषाओं में मिलता है। हम कह सकते हैं कि भाषा होगी तो उसका व्याकरण भी साथ-साथ होगा ही और उस भाषा को जानने वाले इन नियमों का उपयोग करते ही होंगे। व्याकरण भाषा में अंतर्निहित है, इससे अलग नहीं किया जा सकता। यह दोहराना होगा कि ऐसा जरूरी नहीं है कि वे व्यक्ति जो व्याकरण सहजता से जान रहे हैं, उसकी बारीकियों को या मोटे नियमों को ही किसी अन्य के सामने प्रस्तुत कर सकें। यानी वह जानता है उपयोग कर सकता है लेकिन वह किसी को यह नहीं बता सकता कि वह क्या जानता है।

अब दूसरा प्रश्न। सवाल यह है कि पहले व्याकरण बनी या भाषा। तार्किक स्तर पर तो यह कहा जा सकता है कि हम पहले व्याकरण रच सकते हैं और फिर उससे भाषा बना सकते हैं किन्तु यह स्पष्ट है कि ऐसा करने के लिए पहले व्यक्तियों की जरूरत होगी। व्यक्ति ही सोचेंगे कि व्याकरण बनाएं और उससे भाषा बनाएं। इसका अर्थ यह हुआ कि व्याकरण बनाने से पहले व्यक्ति होने चाहिए, उन्हें पता होना चाहिए।

व्याकरण बनाना है और यह भी कि व्याकरण से भाषा बनेगी, यानि व्याकरण बनने से पहले ही उन्हें भाषा व व्याकरण पता होना चाहिए। अतः हम कह सकते हैं कि भाषा के लिए पहले व्यक्तियों का होना आवश्यक है, यदि लोग ही नहीं होंगे तो भाषा की जरूरत ही नहीं होगी। अतः लोग मिलजुलकर अपनी भाषा का निर्माण करते हैं। और फिर बनते हैं उसके शब्दकोष व व्याकरण। दूसरे शब्दों में यदि भाषा नहीं होगी तो व्याकरण नहीं होगा। यानी व्याकरण भाषा के अधीन है। ऐसी संभावना नहीं है कि पहले व्याकरण और इसके नियम आएँ व फिर भाषा आए।

कैसे बनें व्याकरण की किताबें

जैसा कि आप प्रथम वर्ष में और इस वर्ष इकाई एक में पढ़ चुके हैं कि भाषा सीखने-सिखाने की प्रक्रिया घर पर ही शुरू हो जाती है। बच्चे अपने माता-पिता, भाई बहन अन्य रिश्तेदारों से अंतर्क्रिया करते हुए सहज रूप से अपनी-अपनी घरेलू भाषा सीख लेते हैं और विद्यालय आने तक आते आते वे उसमें पूर्ण रूप से दक्ष हो चुके होते हैं। वे न केवल अपने भाषा के हजारों शब्द जान रहे होते हैं वरन् उसके विभिन्न स्तर यथा शब्द, वाक्य, संवाद पर क्या नियम हैं यह भी उपयोग कर सकते हैं। 3-4 वर्ष की उम्र का एक बच्चा अपनी मातृभाषा में हो रहे संवाद में आत्मविश्वास से हिस्सा ले सकता है। वह अपनी बात दूसरों को समझा सकता है व दूसरों की बात समझ सकता है। वह यह क्षमता रखता है कि व्यक्ति, स्थान और विषय के अनुसार उसे भाषा में कहाँ व कैसे परिवर्तन करना है, कर सकता है। जल्दी-जल्दी या ध्यान बँटने की वजह से या किसी अन्य कारण से वह कुछ गलती कर ले लेकिन ऐसी गलती तो बड़ों से भी होती है उसे अपनी भाषा सही बोलने के लिए व्याकरण की कोई किताब नहीं चाहिए।

हमने यह भी बातचीत की है कि किसी भी भाषा के नियम पता करने के लिए उस भाषा के बोलने वाले व्यक्तियों के संवादों का अध्ययन एक मात्र तरीका है। यदि हमें गोंडी का व्याकरण बनाना है तो हमें गोंडी भाषी व्यक्तियों को सुनना होगा। उनके द्वारा उपयोग किए गए वाक्यों व संवादों का दस्तावेजीकरण करना होगा और प्राप्त डाटा को व्यवस्थित करना होगा। इस डाटा के अध्ययन से ही हम उन नियमों तक पहुँचेंगे जो उस भाषा को व्यवस्थित करते हैं। यह कहना कि कोई व्यक्ति अपने समाज की भाषा नहीं जानता, तार्किक रूप से अंसगत है।

उपर्युक्त बिन्दुओं से हम यह समझ सकते हैं कि चाहे किसी भाषा को बोलने वाला उसके नियम व्यक्त न कर पाए, किन्तु यह अहसास जरूर कर सकता है कि जो कहा जा रहा है वह सही है अथवा नहीं। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह भाषा के व्याकरण का ज्ञाता है। उसे ज्यादा व्यवस्थित व बेहतर लिखने के लिए व्याकरण सीखने की आवश्यकता है।

यह समझना होगा कि बच्चा जो भाषा स्वाभाविक तौर से जानता है उसके व्याकरण की उसके भाषायी विकास में भूमिका है। इस सवाल पर विचार के बाद हम ज्यादा सार्थक व्याकरण कार्यक्रम बना पाएँगे। वैसे यह भी याद रखना होगा कि सामान्य स्कूलों में आने वाले अधिकांश बच्चों की प्रथम भाषा/मातृभाषा हिन्दी नहीं होती। इसलिए कक्षा में पढ़ाई जा रही हिन्दी व अंग्रेजी सीखने में उनके नियमों को पहचानना व समझना उनके लिए आवश्यक है। मातृभाषा शिक्षण तो उस स्थिति में करना होगा जब बच्चों की मातृभाषा हल्बी, गोंडी अथवा अन्य कोई भाषा को पढ़ाया जाए। अधिकांशतः छात्राओं के लिए हिन्दी मातृभाषा नहीं है। कुछ के लिए हिन्दी संपर्क भाषा तो हो सकती है।

कुछ प्रश्न :

- आप बच्चों को व्याकरण किस प्रकार सिखाना चाहेंगे और क्यों?

व्याकरण कैसे सिखाएँ?

भाषा सीखने-सिखाने के बारे में आम धारणा है कि बच्चों को संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि की परिभाषा, कर्ता-क्रिया जैसे शब्दों की जानकारी व एकवचन-बहुवचन इत्यादि के नियम याद होने चाहिए। व्याकरण के नियम याद हो जाएँ तो मानो कि बच्चा भाषा सीख गया है। भाषा में अच्छा होना याने व्याकरण के नियम जानना व उनका उपयोग करना। किन्तु जैसा कि हमने पढ़ा, चार साल का बच्चा भी भाषायी दृष्टि से किसी वयस्क के समान अपनी भाषा में संवाद करने, अवधारणाएँ बनाने व तर्क करने में सक्षम होता है। ज्यादा व्यापक चर्चा में शामिल होने के लिए उसे व्याकरण के तथ्यों व परिभाषाओं की जरूरत नहीं होती। कुछ लोग यहाँ तक मानते हैं कि किसी को किसी भी भाषा को सीखने के लिए उस भाषा में डूबना जरूरी है। अगर बच्चों को बातचीत के बहुत से मौके मिलें, पढ़ने के मौके मिलें, वे खूब रस लेकर पढ़ें व उसके साथ ज्यादा से ज्यादा क्रियाकलाप करें तो व्याकरण सीखने का काम खुद-ब-खुद हो जाएगा। वर्तमान समय में कक्षा-कक्ष में बच्चों को भाषा न सिखाकर व्याकरण सिखाने पर ज्यादा जोर है।

अगर बच्चों को खूब सामग्री पढ़ने को दी जाए, उसे भाषा का उपयोग करने दिया जाय, बिना किसी रोक-टोक के तो दी गई सामग्री को पढ़ कर व अपने उपयोग के संवादों में पैटर्न ढूँढ़ कर वह व्याकरण सीख सकता है।

नीचे हम ऐसे ही कुछ क्रियाकलाप दे रहे हैं जिनमें नियम खोजने का प्रयास है। इसके बाद आप सोचें क्या यह व्याकरण सिखाने का उपयुक्त ढंग है या नहीं।

बगुला और केकड़ा

गर्मी का मौसम था। एक तालाब में पानी कम हो रहा था। तालाब में बहुत-सी मछलियाँ थीं। तालाब के किनारे एक बगुला रहता था। वह साधु का वेष बनाए हुए बैठा हुआ था। तालाब की मछलियों से अपना पेट भरने का उपाय सोच रहा था।

तालाब की मछलियों ने उसे उदास देखा।

उसे साधु जानकर पूछने आई।

वे बोलीं – “क्या बात है बाबा! आज बहुत उदास हो?”

बगुला बोला— “बस! तुम्हीं लोगों की चिंता में हूँ।”

“हमारी चिंता में? भला क्यों?” मछलियाँ बोलीं।

“इस तालाब का पानी दिनों-दिन कम हो रहा है। गर्मी बढ़ रही है।

धीरे-धीरे तुम सब मौत के मुँह में चली जाओगी।”-
बगुला गंभीर स्वर में बोला।



“तो हम क्या करें? बाबा, तुम्हीं कोई उपाय बताओ न।” मछलियाँ ने घबराकर कहा।

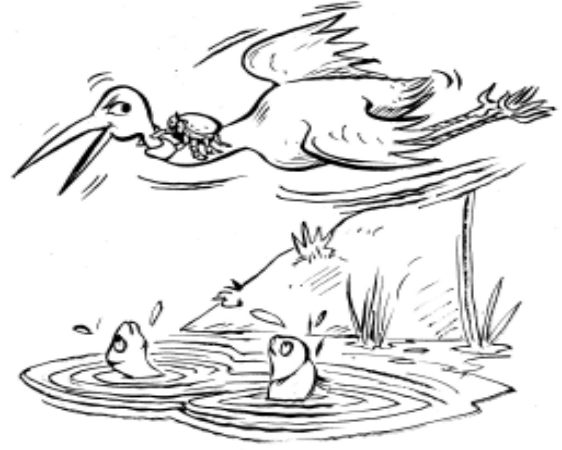
“अब एक ही उपाय है। मैं एक-एक करके तुम सबको अपनी चोंच में पकड़कर दूर तालाब में छोड़ आऊँ।”

“लेकिन बाबा! इस दुनिया में आज तक कोई बगुला ऐसा नहीं हुआ जो मछलियों की भलाई के बारे में सोचे। भला हम कैसे तुम पर भरोसा कर लें।”

बगुले ने अब अपनी चाल चली— “तुम ठीक कहती हो। जिस तरह एक गंदी मछली सारे तालाब को गंदा कर देती है, उसी तरह एक बगुले ने सारे बगुलों को बदनाम कर रखा है। तुम लोग ऐसा करो, किसी एक मछली को मेरे साथ भेजो। मैं उसे तालाब दिखा लाऊँगा। तुम उससे पूछ लेना। यदि विश्वास हो जाए तो एक-एक करके मेरे साथ चलना।”

मछलियाँ बगुले की चाल में आ गईं। उन्होंने एक मछली बगुले के साथ भेज दी। बगुला उसे बड़ा तालाब दिखाकर ले आया। उस मछली ने बड़े तालाब का बड़ा सुंदर वर्णन किया। उसे सुनकर सभी मछलियाँ चलने को तैयार हो गईं।

अब बगुला उस तालाब से एक मछली लाता। उसे मारकर खा जाता। धीरे-धीरे उसने तालाब की बहुत सारी मछलियाँ खा लीं। वह मोटा भी हो गया था। मछलियों को शंका हुई। उन्होंने केकड़े से सलाह की। कहीं बगुला हमें धोखा तो नहीं दे रहा। केकड़े ने कहा— “आज मैं जाऊँगा। बगुला-भगत कैसे हैं? पता चल जाएगा।”



केकड़े ने बगुले से कहा— “बगुला महाराज। आज मछलियाँ नहीं जाएँगी।

आज मुझे ले चलो।” बगुला बोला— “ठीक है! तुम्हीं चलो।” केकड़ा बोला— “लेकिन एक शर्त है।” बगुला बोला— “कैसी शर्त?” “ मैं तुम्हारी चोंच में दबकर नहीं जाऊँगा। कहो तो गर्दन पर बैठकर चलूँ।” बगुला तैयार हो गया।

बगुले ने सोचा— तू किसी तरह तालाब से बाहर तक तो चल। फिर मैं खा लूँगा।

इस तरह उसने केकड़े की बात मान ली।

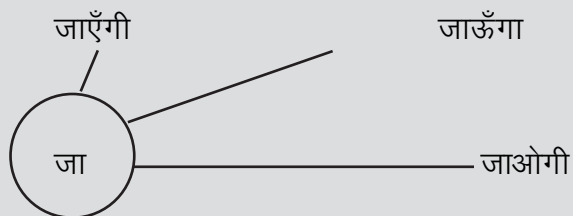
बगुला अपनी गर्दन पर केकड़े को बैठाकर चल पड़ा। जैसे ही वह उसे तालाब के बाहर कुछ दूर ले गया, केकड़े ने मछलियों की हड्डियों का ढेर देखा। वह पूरी बात समझ गया। उसने बगुले की गर्दन में अपने काँटे गड़ाए और बोला, “दुष्ट, तू मुझे सीधी तरह वापिस तालाब के किनारे ले चल..... या तेरी गर्दन दबाऊँ।”

बगुला दर्द से कराह उठा। वह केकड़े को चुपचाप तालाब के किनारे ले आया। जैसे ही वे तालाब के किनारे पहुँचे, केकड़े ने बगुले की गर्दन दबा दी। बगुला छटपटा कर मर गया। केकड़ा तालाब के अंदर चला गया।

कुछ प्रश्न :

यहाँ इस कहानी से संबंधित कुछ प्रश्न दिए गए हैं। आप इन प्रश्नों को कीजिए व बताइए कि क्या व्याकरण सिखाने में ये प्रश्न मददगार होंगे? कैसे?

- अ. मछली, बगुला, केकड़ा के क्या-क्या रूप कहानी में आए हैं? उन्हें लिखिए।
ब. इन रूपों में क्या अन्तर है?
- कहानी में से ऐसे वाक्य ढूँढिये जिनके अन्त में यह “?” चिह्न आया है इन वाक्यों की क्या विशेषता है?
- अब बगुला उस तालाब से मछली लाता। उसे मारकर खा जाता। धीरे-धीरे उसने तालाब की बहुत सारी मछलियाँ खा लीं। वह मोटा भी हो गया था।
उसने, वह शब्दों का उपयोग बगुला शब्द की जगह किया गया है। कहानी में मछली, केकड़ा इत्यादि शब्दों के स्थान पर और कौन-कौन से शब्द उपयोग में लिए गए हैं बताइए?
- जाएँगी, जाऊँगा, जाओगी इत्यादि शब्द कहानी में आए हैं। ये सभी शब्द ‘जा’ से संबंधित हैं आप इस तरह के और शब्द सोचिए व इस जाल को पूरा कीजिए।



ऐसा ही जाल “खा” शब्द के लिए भी बनाइए।

अब इन प्रश्नों को भी कीजिए व ऐसे ही और प्रश्न बनाइए।

- सावन में जब बरसेगी घटाएँ घिरकर होगी हरी धरती बंजर
 - (i) उपर्युक्त वाक्य में सही स्थान पर विराम चिह्न लगाइए।
 - (ii) आप यह विराम चिह्न कितनी तरह से लगा सकते हैं?
 - (iii) क्या हर परिस्थिति में कथन का अर्थ एक ही है?
 - (iv) कौन सा अर्थ कथन का आशय प्रस्तुत करता प्रतीत होता है?
- नीचे तीन तरह के टेक्स्ट – एक पहेली, एक चुटुकला व एक समाचार (गप्प आधारित दिए गए हैं।) इनको ध्यान से पढ़िए व फिर दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

टेक्स्ट – 1

मेरी नानी कोयला खाती

मैं खाती हूँ बिजली

मम्मी मेरी डीज़ल पीती

यही कहानी पिछली

टेक्स्ट – 2

दीपू – पिताजी आपने एक सप्ताह पहले जो गुलाब की कलम लगाई थी उसमें अभी तक जड़ें नहीं निकली हैं।

पिताजी – तुम्हे कैसे पता?

दीपू – क्योंकि मैं उसे रोज उखाड़कर देखता हूँ।

टेक्स्ट – 3

कल रात राजधानी में जोरदार बारिश हुई। सरकार ने सभी गंजों को घर में रहने की हिदायत दी।

सरगुजा क्षेत्र में हाथियों के बढ़ते हुए आतंक को देखते हुए सरकार ने चार मच्छरों को वहाँ भेजा है। जैसे ही गड़बड़ी फैलाने वाले हाथी वहाँ नज़र आएँगे मच्छर उन्हें उठाकर मैत्री बाग वाले चिड़ियाघर में ले आएँगे।

तीनों टेक्स्ट की वाक्य रचना को देखिए क्या आपको उनमें कोई फर्क नज़र आता है?

निम्नलिखित आधार काम में ले सकते हैं—

- (i) शब्दों का स्थान यथा पहेली में व अन्य टेक्स्ट में।
- (ii) कौन से काल का प्रयोग है व क्यों?
- (iii) विराम चिह्नों का उपयोग इत्यादि।

आप भी बच्चों के लिए कुछ ऐसे सवाल बनाइए जिनसे उन्हें व्याकरण के नियम खोजने व समझने में मदद मिले।

सारांश

इस इकाई में हमने व्याकरण क्या है? भाषा व व्याकरण के बीच संबंध क्या है? इस बारे में बात की। हमने यह भी समझने का प्रयास किया कि बच्चे को व्याकरण कैसे सिखाएँ? जैसा कि आप जानते हैं कि स्कूल आने से पहले बच्चे अपनी भाषा अच्छी तरह से बोलना जानते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि वे अपनी भाषा का व्याकरण भी जानते हैं, नहीं तो वे उस भाषा का प्रयोग ही नहीं कर पायेंगे। यह इकाई इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए यह समझने में मदद करती है कि यदि बच्चे में भाषा सीखने की इतनी क्षमता है तो उसके साथ भाषा सीखने-सिखाने का कार्य कैसे हो? चाहे वह उसकी अपनी भाषा हो अथवा नई भाषा। नई भाषा सीखने के लिए भी यह जरूरी है बच्चे उस भाषा का अधिक से अधिक प्रयोग करें, बिना किसी रोकटोक के, हिचकिचाहट के, बिना डरे कि गलती होने पर कोई डाँटेगा या हँसेगा। और जब वे भाषा का प्रयोग करने लगे तब उन्हें उसके व्याकरण से भी रुबरु होने का मौका मिले। व्याकरण से परिचय का सबसे सरल तरीका है। सीखने वाला उसके वाक्यों से खेलें व उसमें विद्यमान व्यवस्था व नियमों को देखें।



सिर्फ पढ़ने के लिए – साहित्य की अनुभूति जो बीत गई (कविता)

जो बीत गई सो बात गई!
जीवन में एक सितारा था,
माना, वह बेहद प्यारा था,
वह डूब गया तो डूब गया;
अंबर के आनन को देखो,
कितने इसके तारे टूटे,
कितने इसके प्यारे छूटे,
जो छूट गए फिर कहाँ मिले;
पर बोलो टूटे तारों पर
कब अंबर शोक मनाता है!
जो बीत गई सो बात गई!
जीवन में वह था एक कुसुम,
थे उस पर नित्य निछावर तुम,
वह सूख गया तो सूख गया;
मधुवन की छाती को देखो,
सूखीं कितनी इनकी कलियाँ,
मुरछाईं फिर कहाँ वल्लरियाँ,
जो मुरछाईं फिर कहाँ खिली;
पर बोलो सूखे फूलों पर
कब मधुवन शोर मचाता है;
जो बीत गई सो बात गई!

हरिवंशराय बच्चन

छोटा जादूगर (कहानी)

कार्निवल के मैदान में बिजली जगमगा रही थी। हँसी और विनोद का कलनाद गूँज रहा था। मैं खड़ा था। उस छोटे फुहारे के पास, जहाँ एक लड़का चुपचाप शराब पीने वालों को देख रहा था। उसके गले में फटे कुरते के ऊपर से एक मोटी सी सूत की रस्सी पड़ी थी और जब मैं कुछ ताश के पत्ते थे। उसके मुँह पर गंभीर विषाद के साथ धैर्य की रेखा थी। मैं उसकी ओर न जाने क्यों आकर्षित हुआ। उसके अभाव में भी संपूर्णता थी। मैंने पूछा, “क्यों जी, तुमने इसमें क्या देखा?”

“मैंने सब देखा है। यहाँ चूड़ी फेंकते हैं। खिलौनों पर निशाना लगाते हैं। तीर से नंबर छेदते हैं। मुझे तो खिलौनों पर निशाना लगाना अच्छा मालूम हुआ। जादूगर तो बिलकुल निकम्मा है। उससे अच्छा तो ताश का खेल मैं ही दिखा सकता हूँ।” उसने बड़ी प्रगल्भता से कहाँ उसकी वाणी में कहीं रुकावट न थी।

मैंने पूछा, “और उस परदे में क्या है? वहाँ तुम गए थे।”

“नहीं, वहाँ मैं नहीं जा सका। टिकट लगता है।”

मैंने कहा, “तो चल, मैं वहाँ पर तुमको लिवा चलूँ।” मैंने मन—ही—मन कहा, “भाई! आज के तुम्हीं मित्र रहे।”

उसने कहा, “वहाँ जाकर क्या कीजिएगा? चलिए, निशाना लगाया जाएँ”

मैंने उससे सहमत होकर कहा, “तो फिर चलो, पहले शरबत पी लिया जाएँ” उसने स्वीकार—सूचक सिर हिला दिया।

मनुष्यों की भीड़ से जाड़े की संध्या भी वहाँ गर्म हो रही थी। हम दोनों शरबत पीकर निशाना लगाने चले। राह में ही उससे पूछा, “तुम्हारे और कौन हैं?”

“माँ और बाबू जी।”

“उन्होंने तुमको यहाँ आने के लिए मना नहीं किया?”

“बाबू जी जेल में हैं।”

“क्यों?”

“देश के लिए।” वह गर्व से बोला।

“और तुम्हारी माँ?”

“वह बीमार है।”

“और तुम तमाशा देख रहे हो?”

उसके मुँह पर तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी। उसने कहा, “तमाशा देखने नहीं दिखाने निकला हूँ। कुछ पैसे ले जाऊँगा, तो माँ को पथ्य दूँगा। मुझे शरबत न पिलाकर आपने मेरा खेल देखकर मुझे कुछ दे दिया होता, तो मुझे अधिक प्रसन्नता होती!”

मैं आश्चर्य से उस तेरह—चौदह वर्ष के लड़के को देखने लगा।

“हाँ, मैं सच कहता हूँ बाबू जी? माँ जी बीमार है; इसलिए मैं नहीं गया।”

“कहाँ?”

“जेल में! जब कुछ लोग खेल-तमाशा देखते ही हैं, तो मैं क्यों न दिखाकर माँ की दवा करूँ और अपना पेट भरूँ।”

मैंने दीर्घ निश्वास लिया। चारों ओर बिजली के लट्टू नाच रहे थे। वह व्यग्र हो उठा। मैंने उससे कहा, “अच्छा चलो, निशाना लगाया जाएँ”

हम दोनों उस जगह पर पहुँचे, जहाँ खिलौने को गेंद से गिराया जाता था। मैंने बारह टिकट खरीदकर उस लड़के को दिए।

वह निकला पक्का निशानेबाज़। उसका कोई गेंद खाली नहीं गया। देखने वाले दंग रह गए। उसने बारह खिलौनों को बटोर लिया; लेकिन उठाता कैसे? कुछ मेरे रुमाल में बँधे, कुछ जेब में रख लिए गए?

लड़के ने कहा, “बाबू जी, आपको तमाशा दिखाऊँगा। बाहर आइए, मैं चलता हूँ।” वह नौ-दो ग्यारह हो गया। मैंने मन-ही-मन कहा, “इतनी जल्दी आँख बदल गई।”

मैं घूमकर पान की दुकान पर आ गया। पान खाकर बड़ी देर तक इधर-उधर टहलता देखता रहा झूले के पास लोगों का ऊपर-नीचे आना देखने लगा। अकस्मात् किसी ने ऊपर के हिंडोले से पुकारा, “बाबू जी!”

मैंने पूछा, “कौन?”

“मैं हूँ छोटा जादूगर।”

कलकत्ते के सुरम्य बोटनिकल-उद्यान में लाल कमलिनी से भरी हुई एक छोटी-सी-झील के किनारे घने वृक्षों की छाया में अपनी मंडली के साथ बैठा हुआ मैं जलपान कर रहा था। बातें हो रही थीं। इतने में वही छोटा जादूगर दिखाई पड़ा। हाथ में चारखाने की खादी का झोला। साफ जाँघिया और आधी बाँहों का कुरता। सिर पर मेरी रुमाल सूत की रस्सी से बँधी हुई थी। मस्तानी चाल से झूमता हुआ आकर कहने लगा, “बाबू जी, नमस्ते! आज कहिए, तो खेल दिखाऊँ।”

“नहीं जी, अभी हम लोग जलपान कर रहे हैं।”

“फिर इसके बाद क्या गाना-बजाना होगा, बाबू जी?”

“नहीं जी, तुमको...”, क्रोध से मैं कुछ और कहने जा रहा था। श्रीमती ने कहा, “दिखलाओ जी, तुम तो अच्छे आए भला, कुछ मन तो बहले।” मैं चुप हो गया, क्योंकि श्रीमती की वाणी में वह माँ की-सी मिठास थी, जिसके सामने किसी भी लड़के को रोका नहीं जा सकता। उसने खेल आरंभ किया।

उस दिन कार्निवल के सब खिलौने उसके खेल में अपना अभिनय करने लगे। भालू मनाने लगा। बिल्ली रूठने लगी। बंदर घुड़कने लगा। गुड़िया का ब्याह हुआ। गुड़डा वर काना निकला। लड़के की वाचालता से ही अभिनय हो रहा था। सब हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए।

मैं सोच रहा था। बालक को आवश्यकता ने कितना शीघ्र चतुर बना दिया। यही तो संसार है। ताश के सब पत्ते लाल हो गए। फिर सब काले हो गए। गले की सूत की डोरी टुकड़े-टुकड़े होकर जुड़ गई। लट्टू अपने से नाच रहे थे। मैंने कहा, “अब हो चुका, अपना खेल बटोर लो, हम लोग भी अब जाएँगे।”

श्रीमती जी ने धीरे से उसे एक रुपया दे दिया। वह उछल उठा।

मैंने कहा, “लड़के!”

“छोटा जादूगर कहिए। यही मेरा नाम है। इसी से मेरी जीविका है।”

मैं कुछ बोलना ही चाहता था कि श्रीमती ने कहा, “अच्छा, तुम इस रूप से क्या करोगे?”

“पहले भर पेट पकौड़ी खाऊँगा। फिर एक सूती कंबल लूँगा।”

मेरा क्रोध अब लौट आया। मैं अपने पर बहुत क्रुद्ध होकर सोचने लगा, ओह! कितना स्वार्थी हूँ मैं। उसके एक रूप पाने पर मैं ईर्ष्या करने लगा था न!

वह नमस्कार करके चला गया। हम लोग लता कुंज देखने के लिए चले। उस छोटे से बनावटी जंगल में संध्या सांय-सांय करने लगी थी। अस्ताचलगामी सूर्य की अंतिम किरण वृक्षों की पत्तियों से बिदाई ले रही थी। एक शांत वातावरण था। हम लोग धीरे-धीरे मोटर से हबड़ा की ओर आ रहे थे। रह-रहकर छोटा जादूगर स्मरण होता था। सचमुच वह एक झोंपड़ी के पास कंबल कंधे पर डाले खड़ा था। मैंने मोटर रोककर उससे पूछा, “तुम यहाँ कहाँ?”

“मेरी माँ यहीं है न। अब उसे अस्पतालवालों ने निकाल दिया है।” मैं उतर आया। उस झोंपड़ी में देखा, तो एक स्त्री चिथड़ों से लदी हुई काँप रही थी।

छोटे जादूगर ने कंबल ऊपर से डालकर उसके शरीर से चिमटते हुए कहा, “माँ।”

मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े।

बड़े दिन की छुट्टी बीत चली थी। मुझे अपने ऑफिस में समय से पहुँचना था। कलकत्ते से मन ऊब गया था। फिर भी चलते-चलते एक बार उस उद्यान को देखने की इच्छा हुई। साथ-ही-साथ जादूगर भी दिखाई पड़ जाता, तो और भी... मैं उस दिन अकेले ही चल पड़ा। जल्द लौट आना था।

दस बज चुका था। मैंने देखा कि उस निर्मल धूप में सड़क के किनारे एक कपड़े पर छोटे जादूगर का रंगमंच सजा था। मोटर रोककर उतर पड़ा। वहाँ बिल्ली रूठ रही थी। भालू मनाने चला था। ब्याह की तैयारी थी; यह सब होते हुए भी जादूगर की वाणी में वह प्रसन्नता की तरी नहीं थी। जब वह औरों को हँसाने की चेष्टा कर रहा था, तब जैसे स्वयं काँप जाता था। मानो उसके रोएँ रो रहे थे। मैं आश्चर्य से देख रहा था। खेल हो जाने पर पैसा बटोरकर उसने भीड़ में मुझे देखा। वह जैसे क्षणभर के लिए स्फूर्तिमान हो गया। मैंने उसकी पीठ थपथपाते हुए पूछा, “आज तुम्हारा खेल जमा क्यों नहीं?”

“माँ ने कहा है कि आज तुरंत चले आना। मेरी घड़ी समीप है।” अविचल भाव से उसने कहाँ

“तब भी तुम खेल दिखलाने चले आए!” मैंने कुछ क्रोध से कहा। मनुष्य के सुख-दुख का माप अपना ही साधन तो है। उसी के अनुपात से वह तुलना करता है।

उसके मुँह पर वही परिचित तिरस्कार की रेखा फूट पड़ी। उसने कहा, “क्यों न आता!” और कुछ अधिक कहने में जैसे वह अपमान का अनुभव कर रहा था।

क्षण-भर में मुझे अपनी भूल मालूम हो गई। उसके झोले को गाड़ी में फेंककर उसे भी बैठाते हुए मैंने कहा, “जल्दी चलो।” मोटरवाला मेरे बताए हुए पथ पर चल पड़ा।

कुछ ही मिनटों में मैं झोंपड़े के पास पहुँचा। जादूगर दौड़कर झोंपड़े में माँ-माँ पुकारते हुए घुसा। मैं भी पीछे था; किंतु स्त्री के मुँह से, “बे...” निकलकर रह गया। उसके दुर्बल हाथ उठकर गिर गए। जादूगर उससे लिपटा रो रहा था, मैं स्तब्ध था। उस उज्ज्वल धूप में समग्र संसार जैसे जादू-सा मेरे चारों ओर नृत्य करने लगा।

पिता के पत्र पुत्री के नाम (पत्र)

यह खत जवाहरलाल नेहरु द्वारा अपनी पुत्री इन्दिरा को लिखे गए खतों की एक शृंखला में से एक है। ये खत पिता जवाहरलाल ने तब लिखे थे जब वे इलाहाबाद में थे और 10 साल की इन्दिरा मसूरी में थी।

प्रिय इन्दिरा,

अपने पिछले खत में मैंने नए पत्थर-युग के आदमियों का जिक्र किया था जो खासकर झीलों के बीच में मकानों में रहते थे। उन लोगों ने बहुत-सी बातों में बड़ी तरक्की कर ली थी। उन्होंने खेती करने का तरीका निकाला। वे खाना पकाना जानते थे और यह भी जानते थे कि जानवरों को पाल कर कैसे काम लिया जा सकता है। ये बातें कई हजार वर्ष पुरानी हैं और हमें उनका हाल बहुत कम मालूम है लेकिन शायद आज दुनिया में आदमियों की जितनी कौमें हैं उनमें से अकसर उन्हीं नए पत्थर-युग के आदमियों की सन्तान हैं। यह तो तुम जानती ही हो कि आजकल दुनिया में गोरे, काले, पीले, भूरे सभी रंगों के आदमी हैं। लेकिन सच्ची बात तो यह है कि आदमियों की कौमों को इन्हीं चार हिस्सों में बाँट देना आसान नहीं है। कौमों में ऐसा मेलजोल हो गया है कि उनमें से बहुतों के बारे में यह बतलाना कि किस कौम में से हैं बहुत मुश्किल है। वैज्ञानिक लोग आदमियों के सिरों को नापकर कभी-कभी उनकी कौम का पता लगा लेते हैं, और भी ऐसे कई तरीके हैं जिनसे इस बात का पता चल सकता है।

अब सवाल यह होता है कि ये तरह-तरह की कौमें कैसे पैदा हुईं? अगर सब के सब एक ही कौम के हैं तो उनमें आज इतना फर्क क्यों है? जर्मन और हब्शी में कितना फर्क है। एक गोरा है और दूसरा बिलकुल काला। जर्मन के बाल हल्के रंग के और लम्बे होते हैं मगर हब्शी के बाल काले, छोटे और घुँघराले होते हैं। चीनी को देखो तो वह इन दोनों से अलग है। तो यह बतलाना बहुत मुश्किल है कि यह फर्क क्योंकर पैदा हो गया हाँ इसके कुछ कारण हमें मालूम हैं। मैं तुम्हें पहले ही बतला चुका हूँ कि ज्यों-ज्यों जानवरों का रंग-ढंग आसपास की चीजों के मुताबिक होता गया उनमें धीरे-धीरे तब्दीलियाँ पैदा होती गईं। हो सकता है कि जर्मन और हब्शी अलग-अलग कौमों से पैदा हुए हों लेकिन किसी न किसी ज़माने में उनके पुरखे एक ही रहे होंगे। उनमें जो फर्क पैदा हुआ उसकी वजह या तो यह हो सकती है कि उन्हें अपना रहन-सहन अपने पास पड़ोस की चीजों के मुताबिक बनाना पड़ा या यह कि बाज़ जानवरों की तरह कुछ जातियों ने औरों से ज़्यादा आसानी के साथ अपना रहन-सहन बदल दिया हो।

मैं तुमको इसकी एक मिसाल देता हूँ। जो आदमी उत्तर के ठंडे और बर्फीले मुल्कों में रहता है उसमें सर्दी बरदाश्त करने की ताकत पैदा हो जाती है। इस ज़माने में भी इस्कीमो जातिवाले उत्तर के बर्फीले मैदानों में रहते हैं और वहाँ की भयानक सर्दी बरदाश्त करते हैं। अगर वे हमारे जैसे गर्म मुल्क में आएँ तो शायद जीते ही न रह सकें। और चूँकि वे दुनिया के और हिस्सों से अलग हैं और उन्हें बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, उन्हें दुनिया की उतनी बातें नहीं मालूम हुईं जितनी और हिस्सों के रहनेवाले जानते हैं। जो लोग अफ्रीका या विषुवत रेखा के पास रहते हैं, जहाँ बड़ी सख्त गर्मी पड़ती है, इस गर्मी के आदी हो जाते हैं। इसी तेज़ धूप के सबब से उनका रंग काला हो जाता है। यह तो तुमने देखा ही है कि अगर तुम समुद्र के किनारे या कहीं और देर तक धूप में बैठो तो तुम्हारा चेहरा साँवला हो जाता है। अगर चन्द हफ्तों तक धूप खाने से आदमी कुछ काला पड़ जाता है तो वह आदमी कितना काला होगा जिसे हमेशा धूप ही में रहना पड़ता है। तो फिर जो लोग सैकड़ों वर्षों तक गर्म मुल्कों में रहें और वहाँ रहते उनकी कई पीढ़ियाँ गुज़र जाएँ उनके काले हो जाने में क्या ताज्जुब है। तुमने हिन्दुस्तानी किसानों को दोपहरी की धूप में खेतों में काम करते देखा है। वे ग़रीबी की वजह से न ज़्यादा कपड़े पहन सकते हैं, न पहनते हैं। उनकी सारी देह धूप में खुली

रहती है और इसी तरह उनकी पूरी उम्र गुज़र जाती है। फिर वे क्यों न काले हो जाएँ।

इससे तुम्हें यह मालूम हुआ कि आदमी का रंग उस आबोहवा की वजह से बदल जाता है जिसमें वह रहता है। रंग से आदमी की लियाकत, भलमनसी या ख़बसूरती पर कोई असर नहीं पड़ता। अगर गोरा आदमी किसी गर्म मुल्क में बहुत दिनों तक रहे और धूप से बचने के लिए टट्टियों की आड़ में या पंखों के नीचे न छिपा बैठा रहे, तो वह ज़रूर साँवला हो जायगा। तुम्हें मालूम है कि हम लोग कश्मीरी हैं और सौ साल पहले हमारे पुरखे कश्मीर में रहते थे। कश्मीर में सभी आदमी, यहाँ तक कि किसान और मज़दूर भी, गोरे होते हैं। इसका सबब यही है कि कश्मीर की आबोहवा सर्द है। लेकिन वही कश्मीरी जब हिन्दुस्तान के दूसरे हिस्सों में आते हैं, जहाँ ज़्यादा गर्मी पड़ती है, कई पुश्तों के बाद साँवले हो जाते हैं। हमारे बहुत से कश्मीरी भाई ख़ूब गोरे हैं और बहुत से बिलकुल साँवले भी हैं। कश्मीरी जितने ज़्यादा दिनों तक हिन्दुस्तान के इस हिस्से में रहेगा उसका रंग उतना ही साँवला होगा।

अब तुम समझ गई कि आबोहवा ही की वजह से आदमी का रंग बदल जाता है। यह हो सकता है कि कुछ लोग गर्म मुल्क में रहें लेकिन मालदार होने की वजह से उन्हें धूप में काम न करना पड़े, वे बड़े-बड़े मकानों में रहें और अपने रंग को बचा सकें। अमीर खानदान इस तरह कई पीढ़ियों तक अपने रंग को आबोहवा के असर से बचाए रख सकता है लेकिन अपने हाथों से काम न करना और दूसरों की कमाई खाना ऐसी बात नहीं जिस पर हम गुरुर कर सकें। तुमने देखा है कि हिन्दुस्तान में कश्मीर और पंजाब के आदमी आमतौर पर गोरे होते हैं लेकिन ज्यों-ज्यों हम दक्षिण में जावें वे काले होते जाते हैं। मद्रास और लंका में ये बिलकुल काले होते हैं। तुम ज़रूर ही समझ जाओगी कि इसका सबब आबोहवा है। क्योंकि दक्षिण की तरफ़ हम जितना ही बढ़ें विषुवत-रेखा के पास पहुँचते जाते हैं ओर गर्मी बढ़ती जाती है। यह बिलकुल ठीक है और यही एक खास वजह है कि हिन्दुस्तानियों के रंग में इतना फ़र्क है। हम आगे चलकर देखेंगे कि यह फ़र्क कुछ इस वजह से भी है कि शुरू में जो कौमों हिन्दुस्तान में आकर बसी थीं उनमें आपस में फ़र्क था। पुराने ज़माने में हिन्दुस्तान में बहुत सी कौमों आईं और हालाँकि बहुत दिनों तक उन्होंने अलग रहने की कोशिश की लेकिन वे आख़िर में बिना मिले न रह सकीं। आज किसी हिन्दुस्तानी के बारे में यह कहना मुश्किल है कि वह पूरी तरह से किसी एक असली कौम का है।

तुम्हारे पिताजी

जवाहरलाल

नमक का दारोगा (कहानी)

जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वर प्रदत्त वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया तो लोग चोरी-छिपे इसका व्यापार करने लगे। अनेक प्रकार के छल-प्रपंचों का सूत्रपात हुआ, कोई घूस से काम निकालता था, कोई चालाकी से। अधिकारियों के पौ-बारह थे। पटवारीगिरी का सर्वसम्मानित पद छोड़-छोड़कर लोग इस विभाग की बरकंदाजी करते थे। दारोगा पद के लिए तो वकीलों का भी जी ललचाता था। यह वह समय था जब अंग्रेज़ी शिक्षा और ईसाई मत को लोग एक ही वस्तु समझते थे। फारसी का प्राबल्य था। प्रेम की कथाएँ और शृंगार रस के काव्य पढ़कर फारसी दो लोग सर्वोच्च पदों पर नियुक्त हो जाया करते थे।

मुंशी वंशीधर भी जुलेखा की विरह कथा समाप्त करके मजनूँ और फरहाद के प्रेम-वृत्तांत को नल और नील की लड़ाई और अमेरिका के आविष्कार से अधिक महत्व की बातें समझते हुए रोज़गार की खोज में निकले। उनके पिता एक अनुभवी पुरुष थे। समझाने लगे, बेटा! घर की दुर्दशा देख रहे हो। ऋण से दबे हुए हैं। लड़कियाँ हैं, वह घास-फूस की तरह बढ़ती चली जाती हैं। मैं कगारे पर का वृक्ष हो रहा हूँ, न मालूम

कब गिर पड़ें। अब तुम्हीं घर के मालिक मुख्तार हो। नौकरी में ओहदे की ओर ध्यान मत देना, यह तो पीर का मजार है। निगाह चढ़ावे और चादर पर रखनी चाहिए। ऐसा काम ढूँढना जहाँ कुछ ऊपरी आय हो। मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है, जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है। वेतन मनुष्य देता है, इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती। ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसकी बरकत होती है, तुम स्वयं विद्वान हो, तुम्हें क्या समझाऊँ। इस विषय में विवेक की बड़ी आवश्यकता है। मनुष्य को देखो, उसकी आवश्यकता को देखो और अवसर देखो, उसके उपरांत जो उचित समझो, करो। गरजवाले आदमी के साथ कठोरता करने में लाभ—ही—लाभ है। लेकिन बेगरज को दाँव पर पाना ज़रा कठिन है। इन बातों को निगाह में बाँध लो। यह मेरी जन्मभर की कमाई है।

इस उपदेश के बाद पिता जी ने आशीर्वाद दिया। वंशीधर आज्ञाकारी पुत्र थे। ये बातें ध्यान से सुनीं और तब घर से चल खड़े हुए। इस विस्तृत संसार में उनके लिए धैर्य अपना मित्र, बुद्धि अपनी पथ—प्रदर्शक और आत्मावलंबन ही अपना सहायक था। लेकिन अच्छे शकुन से चले थे, जाते ही जाते नमक विभाग के दारोगा पद पर प्रतिष्ठित हो गए। वेतन अच्छा और ऊपरी आय का तो ठिकाना ही न था। वृद्ध मुंशी जी को सुख—संवाद मिला तो फूले न समाए। महाजन कुछ नरम पड़े, कलवार की आशालता लहई—लट्टा। पड़ोसियों के हृदय में शूल उठने लगे।

जाड़े के दिन थे और रात का समय। नमक के सिपाही, चौकीदार नशे में मस्त थे। मुंशी वंशीधर को यहाँ आए अभी छह महीनों से अधिक न हुए थे, लेकिन इस थोड़े समय में ही उन्होंने अपनी कार्यकुशलता और उत्तम आचार से अफसरों को मोहित कर लिया था। अफसर लोग उनपर बहुत विश्वास करने लगे। नमक के दफ्तर से एक मील पूर्व की ओर जमुना बहती थी, उस पर नावों का एक पुल बना हुआ था। दारोगा जी किवाड़ बंद किए मीठी नींद सो रहे थे। अचानक आँख खुली तो नदी के प्रवाह की जगह गाड़ियों की गड़गड़ाहट तथा मल्लाहों का कोलाहल सुनाई दिया। उठ बैठे। इतनी रात गए गाड़ियाँ क्यों नदी के पार जाती हैं? अवश्य कुछ—न—कुछ गोलमाल है। तर्क ने भ्रम को पुष्ट किया। वरदी पहनी, तमंचा जेब में रखा और बात—की—बात में घोड़ा बढ़ाए हुए पुल पर आ पहुँचे। गाड़ियों की एक लंबी कतार पुल के पार जाती देखी। डाँटकर पूछा, “किसकी गाड़ियाँ हैं?”

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा। आदमियों में कुछ कानाफूसी हुई, तब आगे वाले ने कहा, “पंडित अलोपीदीन की।”

“कौन पंडित अलोपीदीन!”

“दातागंज के।”

मुंशी वंशीधर चौंके। पंडित अलोपीदीन इस इलाके के सबसे प्रतिष्ठित जमींदार थे। लाखों रुपयों का लेन—देन करते थे, इधर छोटे से बड़े कौन ऐसे थे जो उनके ऋणी न हों। व्यापार भी लंबा—चौड़ा था। बड़े चलते—पुरजे आदमी थे। अंग्रेज अफसर इनके इलाके में शिकार खेलने आते थे और उनके मेहमान होते। बारहों मास सदाव्रत चलता था।

मुंशजी ने पूछा, “गाड़ियाँ कहाँ जाएँगी?” उत्तर मिला, “कानपुर।” लेकिन इस प्रश्न पर कि इनमें क्या है, सन्नाटा छा गया। दारोगा साहब का संदेह और भी बढ़ा। कुछ देर तक उत्तर की बाट देखकर वह जोर से बोले, “क्या गूँगे हो गए हो? हम पूछते हैं, इनमें क्या लदा है?”

जब इस बार भी कोई उत्तर न मिला तो उन्होंने घोड़े को एक गाड़ी से मिलाकर बोरे को टटोला। भ्रम दूर हो गया। यह नमक के ढेले थे।

पंडित अलोपीदीन अपने सजीले रथ पर सवार, कुछ सोते, कुछ जागते चले आते थे। अचानक कई

गाड़ीवानों ने घबराए हुए आकर जगाया और बोले, “महाराज! दारोगा ने गाड़ियाँ रोक दी हैं और घाट पर खड़े आपको बुलाते हैं।”

पंडित अलोपीदीन का लक्ष्मी जी पर अखंड विश्वास था। वह कहा करते थे कि संसार का तो कहना ही क्या, स्वर्ग में भी लक्ष्मी का ही राज्य है। उनका यह कहना यथार्थ ही था। न्याय और नीति सब लक्ष्मी के ही खिलौने हैं, इन्हें वह जैसे चाहती हैं नचाती हैं। लेटे-ही-लेटे गर्व से बोले, चलो हम आते हैं। यह कहकर पंडित जी ने बड़ी निश्चिंतता से पान के बीड़े लगाकर खाए। फिर लिहाफ ओढ़े हुए दारोगा के पास आकर बोले, “बाबू जी आशीर्वाद! कहिए, हमसे ऐसा कौन-सा अपराध हुआ कि गाड़ियाँ रोक दी गईं। हम ब्राह्मणों पर तो आपकी कृपा दृष्टि रहनी चाहिए।”

वंशीधर रुखाई से बोले, “सरकारी हुक्म!”

पंडित अलोपीदीन ने हँसकर कहा, “हम सरकारी हुक्म को नहीं जानते और न सरकार को। हमारे सरकार तो आप ही हैं। हमारा और आपका तो घर का मामला है, हम कभी आपसे बाहर हो सकते हैं? आपने व्यर्थ का कष्ट उठाया। यह हो ही नहीं सकता कि इधर से जाएँ और इस घाट के देवता को भेंट न चढ़ावें। मैं तो आपकी सेवा में स्वयं ही आ रहा था।” वंशीधर पर ऐश्वर्य की मोहिनी वंशी का कुछ प्रभाव न पड़ा। ईमानदारी की नई उमंग थी। कड़क कर बोले, “हम उन नमकहरामों में नहीं हैं जो कौड़ियों पर अपना ईमान बेचते फिरते हैं। आप इस समय हिरासत में हैं। आपका कायदे के अनुसार चालान होगा। बस मुझे अधिक बातों की फुर्सत नहीं है। जमादार बदलू सिंह! तुम इन्हें हिरासत में ले चलो, मैं हुक्म देता हूँ।”

पंडित अलोपीदीन स्तंभित हो गए। गाड़ीवानों में हलचल मच गई। पंडित जी के जीवन में कदाचित् यह पहला ही अवसर था कि पंडित को ऐसी कठोर बातें सुननी पड़ीं। बदलू सिंह आगे बढ़ा, किंतु रोब के मारे यह साहस न हुआ कि उनका हाथ पकड़ सके। पंडित जी ने धर्म को धन का ऐसा निरादर करते कभी न देखा था। विचार किया कि यह अभी उदंड लड़का है। माया-मोह के जाल में अभी नहीं पड़ा। अल्हड़ है, झिझकता है। बहुत दीन-भाव से बोले, “बाबू साहब, ऐसा न कीजिए, हम मिट जाएँगे। इज्जत धूल में मिल जाएगी। हमारा अपमान करने से आपके हाथ में क्या आएगा। हम किसी तरह आपसे बाहर थोड़े ही हैं।”

वंशीधर ने कठोर स्वर में कहा, “हम ऐसी बातें नहीं सुनना चाहते।”

अलोपीदीन ने जिस सहारे को चट्टान समझ रखा था, वह पैरों के नीचे खिसकता हुआ मालूम हुआ। स्वाभिमान और धन-ऐश्वर्य को कड़ी चोट लगी। किंतु अभी तक धन की सांख्यिक शक्ति का पूरा भरोसा था। अपने मुख्तार से बोले, “लाला जी, एक हज़ार के नोट बाबू साहब को भेंट करो, आप इस समय भूखे सिंह हो रहे हैं।”

वंशीधर ने गरम होकर कहा, “एक हज़ार नहीं, एक लाख भी मुझे सच्चे मार्ग से नहीं हटा सकते।” धर्म की इस बुद्धिहीन दृढ़ता और देव-दुर्लभ त्याग पर मन बहुत झुंझलाया। अब दोनों शक्तियों में संग्राम होने लगा। धन ने उछल-उछल कर आक्रमण करने शुरू किए। एक से पाँच, पाँच से दस, दस से पंद्रह और पंद्रह से बीस हज़ार तक नौबत पहुँची, किंतु धर्म अलौकिक वीरता के साथ इस बहुसंख्यक सेना के सम्मुख अकेला पर्वत की भाँति अटल, अविचलित खड़ा था।

अलोपीदीन निराश होकर बोले, “अब इससे अधिक मेरा साहस नहीं। आगे आपको अधिकार है।” वंशीधर ने अपने जमादार को ललकारा। बदलू सिंह मन में दारोगा जी को गालियाँ देता हुआ पंडित अलोपीदीन की ओर बढ़ा। पंडित जी घबराकर दो-तीन कदम पीछे हट गए। अत्यंत दीनता से बोले, बाबू साहब, ईश्वर के लिए मुझ पर दया कीजिए, मैं पच्चीस हज़ार में निपटारा करने को तैयार हूँ।

‘असंभव बात है।’

‘तीस हजार पर।’

‘क्या चालीस हजार पर भी नहीं?’

“बदलू सिंह, उस आदमी को अभी हिरासत में ले लो। अब मैं एक शब्द भी नहीं सुनना चाहता।”

धर्म ने धन को पैरों तले कुचल डाला। अलोपीदीन ने एक हृष्ट-पुष्ट मनुष्य को हथकड़ियाँ लिए हुए अपनी तरफ आते देखा। चारों ओर निराश और कातर दृष्टि से देखने लगे। इसके बाद मूर्छित होकर गिर पड़े।

दुनिया सोती थी पर दुनिया की जीभ जागती थी। सवेरे देखिए तो बालक-वृद्ध सबके मुँह से यही बात सुनाई देती थी। जिसे देखिए वही पंडित जी के इस व्यवहार पर टीका-टिप्पणी कर रहा था, निंदा की बौछारें हो रही थीं, मानो संसार से अब पापी का पाप कट गया। पानी को दूध के नाम से बेचने वाला ग्वाला, कल्पित रोजनामचे भरने वाले अधिकारी वर्ग, रेल में बिना टिकट सफर करने वाले बाबू लोग, जाली दस्तावेज़ बनाने वाले सेठ और साहूकार यह सब-के-सब देवताओं की भाँति गर्दन चला रहे थे। अब दूसरे दिन पंडित अलोपीदीन अभियुक्त होकर कांस्टेबलों के साथ, हाथों में हथकड़ियाँ, हृदय में ग्लानि और क्षोभ भरे, लज्जा से गर्दन झुकाए अदालत की तरफ चले तो सारे शहर में हलचल मच गई। मेलों में कदाचित आँखें इतनी व्यग्र न होती होंगी। भीड़ के मारे छत और दीवार में कोई भेद न रहा।

किंतु अदालत में पहुँचने की देर थी। पंडित अलोपीदीन इस अगाध वन के सिंह थे। अधिकारी वर्ग उनके भक्त, अमले उनके सेवक, वकील-मुख्तार उनके आज्ञापालक और अरदली, चपरासी तथा चौकीदार तो उनके बिना मोल के गुलाम थे। उन्हें देखते ही लोग चारों तरफ से दौड़े। सभी लोग विस्मित हो रहे थे। इसलिए नहीं कि अलोपीदीन ने क्यों यह कर्म किया बल्कि इसलिए कि वह कानून के पंजे में कैसे आए। ऐसा मनुष्य जिसके पास असाध्य साधन करने वाला धन और अनन्य वाचालता हो, वह कानून के पंजे में आए। प्रत्येक मनुष्य उनसे सहानुभूति प्रकट करता था। बड़ी तत्परता से इस आक्रमण को रोकने के निमित्त वकीलों की एक सेना तैयार की गई। न्याय के मैदान में धर्म और धन में युद्ध ठन गया। वंशीधर चुपचाप खड़े थे। उनके पास सत्य के सिवा न कोई बल था, न स्पष्ट भाषण के अतिरिक्त कोई शस्त्र। गवाह थे, किंतु लोभ से डौंवाडोल।

यहाँ तक कि मुंशी जी को न्याय भी अपनी ओर से कुछ खिंचा हुआ दीख पड़ता था। वह न्याय का दरबार था, परंतु उसके कर्मचारियों पर पक्षपात का नशा छाया हुआ था। किंतु पक्षपात और न्याय का क्या मेल? जहाँ पक्षपात हो, वहाँ न्याय की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मुकदमा शीघ्र ही समाप्त हो गया। डिप्टी मजिस्ट्रेट ने अपनी तजवीज में लिखा। पंडित अलोपीदीन के विरुद्ध दिए गए प्रमाण निर्मूल और भ्रमात्मक हैं। वह एक बड़े भारी आदमी हैं। यह बात कल्पना के बाहर है कि उन्होंने थोड़े लाभ के लिए ऐसा दुस्साहस किया हो। यद्यपि नमक के दारोगा वंशीधर का अधिक दोष नहीं, लेकिन यह बड़े खेद की बात है कि उसकी उद्वेगिता और विचारहीनता के कारण एक भलेमानुस को कष्ट झेलना पड़ा। हम प्रसन्न हैं कि वह अपने काम से सजग और सचेत रहता है, किंतु नमक से मुकदमे की बढ़ी हुई नमकहलाली ने उसके विवेक और बुद्धि को भ्रष्ट कर दिया। भविष्य में उसे होशियार रहना चाहिए।

वकीलों ने यह फैसला सुना और उछल पड़े। पंडित अलोपीदीन मुस्कराते हुए बाहर निकले। स्वजन बाधवों ने रुपयों की लूट की। उदारता का सागर उमड़ पड़ा। उसकी लहरों ने अदालत की नींव तक हिला दी। जब वंशीधर बाहर निकले तो चारों ओर से उनके ऊपर व्यंग्य-बाणों की वर्षा होने लगी। चपरासियों ने झुक-झुककर सलाम किए किंतु इस समय एक-एक कटुवाक्य, एक-एक संकेत उनकी गर्वाग्नि को प्रज्वलित कर रहा था। कदाचित इस मुकदमे में सफल होकर वह इस तरह अकड़ते हुए न चलते। आज उन्हें संसार

का एक खेदजनक विचित्र अनुभव हुआ। न्याय और विद्वता, लंबी-चौड़ी उपाधियाँ, बड़ी-बड़ी दाढ़ियाँ और ढीले चोगे एक भी सच्चे आदर के पात्र नहीं हैं।

वंशीधर ने धन से बैर मोल लिया था, उसका मूल्य चुकाना अनिवार्य था। कठिनता से एक सप्ताह बीता होगा कि मुअत्तली का परवाना आ पहुँचा। कार्यपरायणता का दंड मिला। बेचारे भग्न हृदय, शोक और खेद से व्यथित घर को चले। बूढ़े मुंशी जी तो पहले ही से कुड़-बड़ा रहे थे कि चलते-चलते इस लड़के को समझाया था, लेकिन इसने एक न सुनी। सब मनमानी करता है। हम तो कलवार और कसाई के तगादे सहें, बुढ़ापे में भगत बनकर बैठें और वहाँ बस वही सूखी तनख्वाह! हमने भी तो नौकरी की है और कोई ओहदेदार नहीं थे, लेकिन काम किया, दिल खोलकर किया और आप ईमानदार बनने चले हैं। घर में चाहे अंधेरा हो, मस्जिद में अवश्य दिया जलाएंगे। खैर ऐसी समझ पर पढ़ना-लिखना सब अकारथ गया। इसके थोड़े ही दिनों बाद, जब मुंशी वंशीधर इस दुरवस्था में घर पहुँचे और बूढ़े पिता जी ने समाचार सुना तो सिर पीट लिया। बोले, जी चाहता है कि तुम्हारा और अपना सिर फोड़ लूँ। बहुत देर तक पछता-पछताकर हाथ अवश्य मलते रहे। क्रोध में कुछ कठोर बातें भी कहीं और यदि वंशीधर वहाँ से टल न जाते तो अवश्य ही यह क्रोध विकट रूप धारण करता। वृद्धा माता को भी दुख हुआ। जगन्नाथ और रामेश्वर यात्रा की कामनाएँ मिट्टी में मिल गईं। पत्नी ने तो कई दिन तक सीधे मुँह से बात भी नहीं की।

इसी प्रकार एक सप्ताह बीत गया। संध्या का समय था। बूढ़े मुंशी जी बैठे राम-नाम की माला जप रहे थे। इसी समय उनके द्वार पर सजा हुआ रथ आकर रुका। हरे और गुलाबी परदे, पछाहिए बैलों की जोड़ी, उनकी गर्दनों में नीले धागे, सींगों पीतल से जड़ी हुई। कई नौकर लाठियाँ कंधों पर रखे साथ थे। मुंशी जी अगवानी को दौड़े। देखा तो पंडित अलोपीदीन हैं। झुककर दंडवत की और लल्लो-चप्पो की बातें करने लगे, "हमारा भाग्य उदय हुआ जो आपके चरण इस द्वार पर आए। आप हमारे पूज्य देवता हैं, आपको कौन-सा मुँह दिखावें, मुँह में तो कालिख लगी है। किंतु क्या करें, लड़का अभागा कपूत है, नहीं तो आपसे क्यों मुँह छिपाना पड़ता? ईश्वर चाहे निःसंतान रखे पर ऐसी संतान न दे।"

अलोपीदीन ने कहा "नहीं भाई साहब, ऐसा न कहिए।"

मुंशीजी ने चकित होकर कहा, "ऐसी संतान को और क्या कहूँ?"

अलोपीदीन ने वात्सल्यपूर्ण स्वर में कहा, "कुलतिलक और पुरुषों की कीर्ति उज्ज्वल करनेवाले संसार में ऐसे कितने धर्मपरायण मनुष्य हैं जो धर्म पर अपना सब कुछ अर्पण कर सकें?"

पंडित अलोपीदीन ने वंशीधर से कहा, "दारोगा जी, इसे खुशामद न समझिए, खुशामद करने के लिए मुझे इतना कष्ट उठाने की ज़रूरत न थी। उस रात को आपने अपने अधिकार बल से मुझे अपनी हिरासत में लिया था, किंतु आज मैं स्वेच्छा से आपकी हिरासत में आया हूँ। मैंने हजारों रईस और अमीर देखे, हजारों उच्च पदाधिकारियों से काम पड़ा किंतु मुझे परास्त किया तो आपने। मैंने सबको अपना और अपने धन का गुलाम बनाकर छोड़ दिया। मुझे आज्ञा दीजिए कि आपसे कुछ विनय करूँ।"

वंशीधर ने अलोपीदीन को आते देखा तो उठकर सत्कार किया, किंतु स्वाभिमान सहित। समझ गए कि यह महाशय मुझे लज्जित करने और जलाने आए हैं। क्षमा-प्रार्थना की चेष्टा नहीं की, वरन् उन्हें अपने पिता की यह ठकुरसुहाती की बात असह्य-सी प्रतीत हुई, पर पंडित जी की बातें सुनीं तो मन की मैल मिट गई। पंडित जी की ओर मुड़ती हुई दृष्टि से देखा। सद्भाव झलक रहा था। गर्व ने अब लज्जा के सामने सिर झुका दिया। शर्माते हुए बोले, "यह आपकी उदारता है जो ऐसा कहते हैं। मुझसे जो कुछ अविनय हुई है, उसे क्षमा कीजिए। मैं धर्म की बेड़ी में जकड़ा हुआ था, नहीं तो वैसे मैं आपका दास हूँ। जो आज्ञा होगी,

वह मेरे सिर—माथे पर।

अलोपीदीन ने विनीत भाव से कहा, “नदी तट पर आपने मेरी प्रार्थना नहीं स्वीकार की थी, किंतु आज स्वीकार करनी पड़ेगी। वंशीधर बोले, “मैं किस योग्य हूँ किंतु जो कुछ सेवा मुझसे हो सकती है उसमें त्रुटि न होगी।” अलोपीदीन ने एक स्टॉप लगा हुआ पत्र निकाला और उसे वंशीधर के सामने रखकर बोले “पद को स्वीकार कीजिए और अपने हस्ताक्षर कर दीजिए। मैं ब्राह्मण हूँ, जब तक यह सवाल पूरा न कीजिएगा, द्वार से न हटूँगा।”

मुंशी वंशीधर ने उस कागज़ को पढ़ा तो कृतज्ञता से आँखों में आँसू भर आए। पंडित अलोपीदीन ने उनको अपनी सारी जायदाद का स्थाई मैनेजर नियुक्त किया था। छह हजार वार्षिक वेतन के अतिरिक्त रोज़ाना खर्च अलग, सवारी के लिए घोड़ा, रहने को बंगला, नौकर—चाकर मुफ्त। कंपित स्वर में बोले, “पंडित जी, मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि आपकी उदारता की प्रशंसा कर सकूँ। किंतु ऐसे उच्च पद के योग्य नहीं हूँ।”

अलोपीदीन हँसकर बोले, “मुझे इस समय एक अयोग्य मनुष्य की ही ज़रूरत है।”

वंशीधर ने गंभीर भाव से कहा, “यों मैं आपका दास हूँ। आप जैसे कीर्तिवान, सज्जन पुरुष की सेवा करना मेरे लिए सौभाग्य की बात है, किंतु मुझमें न विद्या है, न बुद्धि, न वह स्वभाव जो इन त्रुटियों की पूर्ति कर देता है। ऐसे महान कार्य के लिए एक बड़े मर्मज्ञ अनुभवी मनुष्य की ज़रूरत है।”

अलोपीदीन ने कलमदान से कलम निकाली और उसे वंशीधर के हाथ में देकर बोले, “न मुझे विद्वत्ता की चाह है, न अनुभव की, न मर्मज्ञता की, न कार्यकुशलता की। इन गुणों के महत्त्व का परिचय खूब पा चुका हूँ। अब सौभाग्य और सुअवसर ने मुझे वह मोती दे दिया है जिसके सामने योग्यता और विद्वत्ता की चमक फीकी पड़ जाती है। यह कलम लीजिए, अधिक सोच—विचार न कीजिए, दस्तख़त कर दीजिए। परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वह आपको सदैव वही नदी के किनारेवाला, बेमुरौवत, उदंड, कठोर परंतु धर्मनिष्ठ दारोगा बनाए रखे!”

वंशीधर की आँखें डबडबा आईं। हृदय के संकुचित पात्र में इतना एहसान न समा सका। एक बार फिर पंडित जी की ओर भक्ति और श्रद्धा की दृष्टि से देखा और काँपते हुए हाथ से मैनेजरी के कागज़ पर हस्ताक्षर कर दिए।

अलोपीदीन ने प्रफुल्लित होकर उन्हें गले लगा लिया।

छात्र की परीक्षा

छात्र श्रीमधुसूदन ! श्रीयुत् कालाचौंद मास्टर पढ़ा रहा हैं। अभिभावक का प्रवेश।

अभिभावक : मधुसूदन की पढ़ाई कैसी चल रही हैं, कालाचौंद बाबू?

कालाचौंद : जो, मधुसूदन दुष्ट तो हैं, पर पढ़ने—लिखने में बड़ा तेज़ हैं। कोई बात दुबारा नहीं बतानी पड़ती। एक बार का पढ़ाया फिर कभी नहीं भूलता।

अभिभावक : सच? तो, आज मैं उसकी परीक्षा कर देखता हूँ जरा।

कालाचौंद : खुशी से

मधुसूदन : (स्वगत) कल मास्टर साहब ने वह मार मारी कि आज भी पीठ चरचरा रही

हैं। आज लूंगा बदला। इन्हें आज निकलवा न दिया तो मधु नाम नहीं।

- अभिभावक : क्यों रे मधु, पिछली पढ़ाई भूली तो नहीं?
- मधुसूदन : मास्टर साहब ने जो—कुछ बता दिया है, सब याद हैं।
- अभिभावक : अच्छा, यह तो बता कि ऊद्दिद किसे कहते हैं।
- मधुसूदन : ऊद्दिद वह हैं जो मिट्टी को फोड़कर ऊपर की ओर निकलता हैं।
- अभिभावक : कोई उदाहरण तो बताओ।
- मधुसूदन : केचुँआ।
- कालाचौद : (आँखे तररेकर) ऐं? क्या कहा?
- अभिभावक : जरा ठहरिये साहब, अभी आप कुछ न बोलिये।
(मधुसूदन से) तुमने पद्यपाठ पढ़ा हैं,—यह बताओ कि वन में क्या खिलता हैं?
- मधुसूदन : काँटा।
(कालाचौद बेत उठाते हैं)
क्यों साहब, मारते क्यों हैं? मैं कोई झूठ कहता हूँ ?
- अभिभावक : अच्छा, सिराजुदौला को किसने मिटाया? इतिहास क्या कहता हैं ?
- मधुसूदन : कीड़ों ने।
(बेंत की मार)
जी, खामखाह मार खानी पड़ती हैं। सिर्फ सिरादौला को ही क्यों, सारे इतिहास को ही कीड़े चाट गये हैं। (प्रदर्शन। कालाचौद मास्टर सिर खुजाते हैं।)
- अभिभावक : व्याकरण याद हैं?
- मधुसूदन : जी, हैं।
- अभिभावक : कर्त्ता क्या हैं? उदाहरण के साथ समझाओ तो ज़रा।
- मधुसूदन : जी, कर्त्ता तो उसी टोले के जयलाल मुंशी हैं।
- अभिभावक : क्यों भला?
- मधुसूदन : वह हमेशा किया—कर्म को ही लिये रहते हैं।
- कालाचौद : (रोष में) तुम्हारा सिर !
(पीठ पर बेंत)
- मधुसूदन : (चौंककर) जी सिर नहीं, वह तो पीठ हैं।
- अभिभावक : षष्ठी—तत्पुरुष किसे कहते हैं?

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

- मधुसूदन : पता नहीं।
(कालाचाँद बेंत दिखाते हैं)
इसको तो अच्छी तरह जानता हूँ— यह है षष्ठी—तत्पुरुष ।
(अभिभावक का हँसना और कालाचाँद का ठीक विपरीत भाव)
- अभिभावक : अंकगणित सीखा है?
- अभिभावक : अच्छा, तुम्हें साढ़े छह पेड़े देकर यह कहा गया है कि पाँच मिनट तक पेड़ें खाने के बाद जो पेड़े बच रहें, उन्हें तुम अपने छोटे भाई को दे दो। एक पेड़ खाने में तुम्हें दो मिनट लगते हैं। बताओ, तुम अपने भाई को कितने पेड़ दोगें?
- मधुसूदन : एक भी नहीं।
- कालाचाँद : सो कैसे?
- मधुसूदन : सब खा डालूँगा। दे नहीं पाऊँगा।
- अभिभावक : अच्छा, बउ का एक पेड़ रोज पाव इंच ऊँचा होता है। इस बैसाख की पहली को वह दस इंच का था, तो अलगे साल बैसाख की पहली को वह कितना ऊँचा होगा?
- मधुसूदन : पेड़ टेढ़ा हो जाय तब तो कहना मुश्किल है; हाँ, अगर सीधे ऊपर बढ़ता तो नाप कर देखने पर उसकी ऊँचाई का पक्का पता लग सकेगा; और अगर इसी बीच सूख गया, तब तो कोई बात ही नहीं।
- कालाचाँद : मार खाये बिना तुम्हारी बुद्धि का पट नहीं खुलता! कमबख्त, मार—मारकर पीठ लाल कर दूँगा! तभी सीधे होंगे तुम।
- मधुसूदन : जी, मार खाकर तो सीधी—से—सीधी चीज़ भी टेढ़ी हो जाती है।
- अभिभावक : कालाचाँद बाबू, यह आपका भ्रम है। मारपीट से शायद ही कोई काम बन पाता है। कहा है कि गधे को पीटकर घोड़ा नहीं बनाया जा सकता, पर अक्सर घोड़ा पिटते—पिटते गधा हो जाता है। अधिकतर लड़के सीख सकते हैं, पर अधिकतर मास्टर सिखा ही नहीं सकते। और मार पड़ती है बेचारे लड़के पर ही। आप अपनी बेंत—छड़ी समेत यहाँ से विदा लें। कुछ दिन मधुसूदन की पीठ सुस्ता ले तो मैं आप भी इसे पढ़ाऊँगा।
- मधुसूदन : (स्वगत) आह, जान बची!
- कालाचाँद : जान बची, साहब। इस लड़के को पढ़ाना मजदूर का काम है, सोलहों मैनुअल लेबर। तीस दिन एक लड़के को पीट कर मुझे सिर्फ पाँच रूपये मिलते हैं; उतनी ही मेहनत से कहीं छत—वत पीटूँ तो कम—से—कम दस रूपये तो मिल जायेंगे।

कुछ करने को

- मधुसूदन जैसे बच्चे आपकी कक्षा में भी हो सकते हैं? ऐसे बच्चों के लिए योजना तैयार करें।
- बच्चों के मूल्यांकन में अभिभावकों की भूमिका पर अपने साथी शिक्षकों के साथ चर्चा कीजिए।

लोकगीत (निबन्ध)

लोकगीत अपनी लोच, ताज़गी और लोकप्रियता में शास्त्रीय संगीत से भिन्न हैं। लोकगीत सीधे जनता के संगीत हैं। घर, गाँव और नगर की जनता के गीत हैं ये। इनके लिए साधना की ज़रूरत नहीं होती। त्योहारों और विशेष अवसरों पर ये गाए जाते हैं। सदा से ये गाए जाते रहे हैं और इनके रचने वाले भी अधिकतर गाँव के लोग ही हैं। स्त्रियों ने भी इनकी रचना में विशेष भाग लिया है। ये गीत बाजों की मदद के बिना ही या साधारण ढोलक, झँडा, करताल, बाँसुरी आदि की मदद से गाए जाते हैं।

एक समय था जब शास्त्रीय संगीत के सामने इनको हेय समझा जाता था। अभी हाल तक इनकी बड़ी उपेक्षा की जाती थी। पर इधर साधारण जनता की ओर जो लोगों की नज़र फिरी है तो साहित्य और कला के क्षेत्र में भी परिवर्तन हुआ है। अनेक लोगों ने विविध बोलियों के लोक-साहित्य और लोकगीतों के संग्रह पर कमर बाँधी है और इस प्रकार के अनेक संग्रह अब तक प्रकाशित भी हो गए हैं।

लोकगीतों के कई प्रकार हैं। इनका एक प्रकार तो बड़ा ही ओजस्वी और सजीव है। यह इस देश के आदिवासियों का संगीत है। मध्य प्रदेश, दकन, छोटा नागपुर में गोंड-खांड, ओराँव-मुंडा, भील-संथाल आदि फैले हुए हैं, जिनमें आज भी जीवन नियमों की जकड़ में बँध न सका और निर्द्वंद्व लहराता है। इनके गीत और नाच अधिकतर साथ-साथ और बड़े-बड़े दलों में गाए और नाचे जाते हैं। बीस-बीस, तीस-तीस आदमियों और औरतों के दल एक साथ या एक-दूसरे के जवाब में गाते हैं, दिशाएँ गुँज उठती हैं।

पहाड़ियों के अपने-अपने गीत हैं। उनके अपने-अपने भिन्न रूप होते हुए भी अशास्त्रीय होने के कारण उनमें अपनी एक समान भूमि है। गढ़वाल, किन्नौर, काँगड़ा आदि के अपने-अपने गीत और उन्हें गाने की अपनी-अपनी विधियाँ हैं। उनका अलग नामही 'पहाड़ी' पड़ गया है।

वास्तविक लोकगीत देश के गाँवों और देहातों में है। इनका संबंध देहात की जनता से है। बड़ी जान होती है इनमें। चैता, कजरी, बारहमासा, सावन आदि मिर्जापुर, बनारस और उत्तर प्रदेश के अन्य पूरबी और बिहार के पश्चिमी ज़िलों में गाए जाते हैं। बाउल और भतियाली बंगाल के लोकगीत हैं। पंजाब में माहिया आदि इसी प्रकार के हैं। हीर-रॉझा, सोहनी-महीवाल संबंधी गीत पंजाबी में और ढोला-मारु आदि के गीत राजस्थानी में बड़े चाव से गाए जाते हैं।

इन देहाती गीतों के रचयिता कोरी कल्पना को इतना मान न देकर अपने गीतों के विषय रोज़मर्रा के बहते जीवन से लेते हैं, जिससे वे सीधे मर्म को छू लेते हैं। उनके राग भी साधारणतः पीलू, सारंग, दुर्गा, सावल, सोरठ आदि हैं। कहरवा, बिरहा, धोतिबया आदि देहात में बहुत गाए जाते हैं और बड़ी भीड़ आकर्षित करते हैं।

इनकी भाषा के संबंध में कहा जा चुका है कि ये सभी लोकगीत गाँवों और इलाकों की बोलियों में गाए जाते हैं। इसी कारण ये बड़े आह्लादकर और आनंददायक होते हैं। राग तो इन गीतों के आकर्षक होते ही हैं, इनकी समझी जा सकने वाली भाषा भी इनकी सफलता का कारण है।

भोजपुरी में करीब तीस-चालीस बरसों से 'बिदेसिया' का प्रचार हुआ है। गाने वालों के अनेक समूह इन्हें गाते हुए देहात में फिरते हैं। उधर के ज़िलों में विशेषकर बिहार में बिदेसिया से बढ़कर दूसरे गाने लोकप्रिय नहीं हैं। इन गीतों में अधिकतर रसिकप्रियों और प्रियाओं की बात रहती है, परदेशी प्रेमी की और इनसे करुणा और विरह का रस बरसता है।

जंगल की जातियों आदि के भी दल-गीत होते हैं जो अधिकतर बिरहा आदि में गाए जाते हैं। पुरुष एक ओर और स्त्रियाँ दूसरी ओर एक-दूसरे के जवाब के रूप में दल बाँधकर गाते हैं और दिशाएँ गुँजा देते हैं। पर इधर कुछ काल से इस प्रकार के दलीय गायन का छस हुआ है।

एक दूसरे प्रकार के बड़े लोकप्रिय गाने आल्हा के हैं। अधिकतर ये बुंदेलखंडी में पाए जाते हैं। आरंभ तो इसका चंदेल राजाओं के राजकवि जगनिक से माना जाता है जिसने आल्हा-रूदल की वीरता का अपने महाकाव्य में बखान किया पर निश्चय ही उसके छंद को लेकर जनबोली में उसके विषय को दूसरे देहाती कवियों ने भी समय-समय पर अपने गीतों में उतारा और ये गीत हमारे गाँवों में आज भी बहुत प्रेम से गाए जाते हैं। इन्हें गाने वाले गाँव-गाँव ढोलक लिए गाते फिरते हैं। इसी की सीमा पर उन गीतों का भी स्थान है जिन्हें नट रस्सियों पर खेल करते हुए गाते हैं। अधिकतर ये गद्य-पद्यात्मक हैं और इनके अपने बोल हैं।

अनंत संख्या अपने देश में स्त्रियों के गीतों की हैं। हैं तो ये गीत भी लोकगीत ही, पर अधिकतर इन्हें औरतें ही गाती हैं। इन्हें सिरजती भी अधिकतर वे ही हैं। वैसे मर्द रचने वालों या गाने वालों की भी कमी नहीं है पर इन गीतों का संबंध विशेषतः स्त्रियों से हैं। इस दृष्टि से भारत इस दिशा में सभी देशों से भिन्न है क्योंकि संसार के अन्य देशों में स्त्रियों के अपने गीत मर्दों या जनगीतों से अलग और भिन्न नहीं हैं, मिले-जुले ही हैं।

त्योहारों पर नदियों में नहाते समय के, नहाने जाते हुए राह के, विवाह के, मटकोड़, ज्यौनार के, संबंधियों के लिए प्रेमयुक्त गाली के, जन्म आदि सभी अवसरों के अलग-अलग गीत हैं, जो स्त्रियाँ गाती हैं। इन अवसरों पर कुछ आज से ही नहीं बड़े प्राचीनकाल से वे गाती रही हैं। महाकवि कालिदास आदि ने भी अपने ग्रंथों में उनके गीतों का हवाला दिया है। सोहर, बानी, सेहरा आदि उनके अनंत गानों में से कुछ हैं। वैसे तो बारहमासे पुरुषों के साथ नारियाँ भी गाती हैं।

एक विशेष बात यह है कि नारियों के गाने साधारणतः अकेले नहीं गाए जाते, दल बाँधकर गाए जाते हैं। अनेक कंठ एक साथ फूटते हैं। यद्यपि अधिकतर उनमें मेल नहीं होता, फिर भी त्योहारों और शुभ अवसरों पर वे बहुत ही भले लगते हैं। गाँवों और नगरों में गायिकाएँ भी होती हैं जो विवाह, जन्म आदि के अवसरों पर गाने के लिए बुला ली जाती हैं। सभी ऋतुओं में स्त्रियाँ उल्लसित होकर दल बाँधकर गाती हैं। पर होली, बरसात की कजरी आदि तो उनकी अपनी चीज़ है, जो सुनते ही बनती है। पूरब की बोलियों में अधिकतर मैथिल-कोकिल विद्यापति के गीत गाए जाते हैं। पर सारे देश के-कश्मीर से कन्या कुमारी-केरल तक और काठियावाड़-गुजरात-राजस्थान से उड़ीसा-आंध्र तक - अपने-अपने विद्यापति हैं।

स्त्रियाँ ढोलक की मदद से गाती हैं। अधिकतर उनके गाने के साथ नाच का भी पुट होता है। गुजरात का एक प्रकार का दलीय गायन 'गरबा' है जिसे विशेष विधि से घरे में घूम-घूमकर औरतें गाती हैं। साथ ही लकड़ियाँ भी बजाती जाती हैं जो बाजे का काम करती हैं। इसमें नाच-गान साथ चलते हैं। वस्तुतः यह नाच ही है। सभी प्रांतों में यह लोकप्रिय हो चला है। इसी प्रकार होली के अवसर पर ब्रज में रसिया चलता है जिसे दल के दल लोग गाते हैं, स्त्रियाँ विशेष तौर पर।

गाँव के गीतों के वास्तव में अनंत प्रकार हैं। जीवन जहाँ इठला-इठलाकर लहराता है वहाँ भला आनंद के स्रोतों की कमी हो सकती है? उपाम जीवन के ही वहाँ के अनंत संख्यक गाने प्रतीक हैं।

भगवतशरण उपाध्याय

कुछ करने को

1. आप अपने इलाके के कुछ लोकगीत इकट्ठा करें। गाए जाने वाले मौकों के अनुसार उनका वर्गीकरण करें।
2. जैसे-जैसे शहर फैल रहे हैं और गाँव सिकुड़ रहे हैं, लोकगीतों पर उनका क्या असर पड़ रहा है? अपने आसपास के लोगों से बातचीत करके और अपने अनुभवों के आधार पर एक अनुच्छेद लिखें।
3. यह निबंध देश के कुछ भागों के लोकगीतों के बारे में है। आप भी अपने क्षेत्र के लोकगीतों, नृत्यों के

बारे में एक ऐसा निबंध लिखिए। कुछ बिन्दु आपको लिखने में मदद करेंगे।

- लोकगीत से आप क्या समझते हैं।
- लोकगीतों के प्रकार।
- किन-किन के बारे में है अथवा उनमें क्या चरित्र है?
- कब कौन से गीत गाये जाते हैं? उनमें क्या फर्क है? इत्यादि।

सूफी कहानियाँ (लघुकथाएँ) सही जगह

मुल्ला नसरुद्दीन ने अपने शागीर्दों को दावत पर बुलाया था। जमकर दावत उड़ी। सबने जी भरकर खाया-पीया और दुनिया-जहान की बातें कीं। आधी रात होने को आई तो सबने अपने-अपने घर जाने की सोची।

लजीज़ पकवान की एक तशतरी बची पड़ी थी। मुल्ला ने शागीर्दों से कहा, इसे अभी का अभी खाकर खत्म करो।

मुल्ला का हुक्म मानकर सब खाने लगे। सिर्फ एक शागीर्द ने दृढ़ता से मना कर दिया। सब खा चुके तो उसने कहा, उस्ताद हमारी परीक्षा ले रहे थे कि हम अपनी इच्छा पर काबू रख सकते हैं या नहीं? सिर्फ मैं खरा उतरा।

तुमने गलत समझा। मुल्ला ने कहा। इच्छा को काबू में करने का सबसे अच्छा तरीका है कि उसे पूरा करके किस्सा खत्म करो। मैंने सिर्फ इतना चाहा कि बचे हुए लजीज़ खाने को तुम लोग अपने पेट के हवाले करो जो उसकी सही जगह है बजाय दिमाग के जिससे कुछ और बेहतर सोचना चाहिए।

मछली

एक सल्तनत का वज़ीर मर गया। सुलतान को अपनी रियाया की बड़ी फिक्र रहती थी। उसने अपने आदमियों से कहा, ऐसा कोई काबिल आदमी ढूँढकर लाओ जिसने गुर्बत (गरीबी) देखी हो। जो अपनी जड़ों से जुड़ा हो और तकलीफ के दिनों को भुला न बैठा हो। हम ऐसे ही किसी शख्स को अपना नया वज़ीर मुकर्रर करेंगे।

यह बात किसी तरह मुल्ला नसरुद्दीन के कानों तक पहुँच गई। उसने कहीं से मछली पकड़ने का एक पुराना जाल हासिल किया और उसे पगड़ी की तरह सिर पर लपेटकर घूमने लगा। सुलतान के आदमियों की नज़र मुल्ला पर पड़ी। उन्होंने उसे उसकी इस अजीबो-गरीब पगड़ी के बारे में पूछा।

मुल्ला ने जवाब दिया, यह जाल वही है जिससे मछली पकड़कर हमारे दादा हुज़ूर ने हमारी दो पीढ़ियों की परवरिश की। मैं उन गुर्बत और तकलीफ के दिनों को भूल न जाऊँ इसीलिए इस जाल को इज़्जत से पगड़ी की तरह पहने रहता हूँ।

जाहिर है, बात सुलतान तक पहुँचनी ही थी। सुलतान ने मुल्ला को बुलाया और अपना वज़ीर मुकर्रर कर दिया।

पहले दिन मुल्ला जब कचहरी में जाकर बैठा, तो लोगों ने देखा, उसने ठीक वज़ीरों जैसा कमखाब का चोगा पहन रखा है और उसके सिर पर शानदार जड़ाऊ पगड़ी रखी है।

टोल्स्टोय की कहानियाँ (लघुकथाएँ)

शेर और गधा

एक बार एक शेर शिकार के लिए निकला तो उसने गधे को अपने साथ ले लिया और उससे बोला, गधे, तुम जंगल में जाकर पूरे ज़ोर-से रेंको। तुम्हारा गला काफी बड़ा है। तुम्हारे रेंकने से जो भी जानवर डरकर भागने लगेंगे, मैं उन्हें झपट लूँगा।

गधे ने ऐसा ही किया। वह खूब ज़ोर से रेंकने लगा और जानवर अपनी सुध-बुध भूलकर दौड़ने लगे। शेर उनका शिकार कर लेता था। शिकार खत्म होने पर शेर ने गधे से कहा, शाबाश है तुम्हें, तुम खूब रेंकते रहे।

तब से गधा इसी तरह रेंकता है और इन्तज़ार करता रहता है कि कोई उसकी तारीफ करे।

दो मेंढक

गर्मी से सारे तालाब और दलदल सूख गए। दो मेंढक पानी की तलाश में गए। फुदककर कुएँ की मेड़ पर बैठ गए और सोचने लगे कि कुएँ में कूदें या न कूदें। जवान मेंढक बोला, हमें कूद जाना चाहिए। वहाँ पानी बहुत है और वहाँ हमें परेशान भी कोई नहीं करेगा।

लेकिन दूसरे ने जवाब दिया, नहीं, हमें नहीं कूदना चाहिए। पानी तो शायद वहाँ बहुत है लेकिन अगर कुआँ सूख गया तो हम वहाँ से बाहर तो नहीं निकल सकेंगे।

सूखी घास पर कुत्ता

एक कुत्ता सायबान में सूखी घास पर लेटा हुआ था। एक गाय का घास खाने का मन हुआ। वह सायबान में गई। उसने सूखी घास के ढेर के पास जाकर उसमें अपना सिर घुसेड़ दिया। और जैसे ही घास से मुँह भरा, वैसे ही कुत्ता गुर्राते हुए उस पर झपटा। गाय वहाँ से दूर हट गई और बोली, न तो खुद खाता है और न मुझे ही खाने देता है।

एक मध्यवर्गीय कुत्ता (व्यंग्य)

हरिशंकर परसाई ने इस रचना में कुत्ते के माध्यम से समाज की मध्यवर्गीय मानसिकता पर करारा व्यंग्य किया है। एक ओर मध्यवर्गीय व्यक्ति उच्चवर्गीय होने का ढोंग करता है, तो दूसरी ओर सर्वहारा वर्ग का साथ देने का प्रयास भी। इसी दोमुखी जिंदगी में फँसे मध्यवर्गीय मनुष्य की दुर्दशा का यथार्थ चित्रण यहाँ दी गई रचना में किया गया है।

मेरे मित्र की कार बँगले में घुसी तो उतरते हुए मैंने पूँछा, "इनके यहाँ कुत्ता तो नहीं है?"

मित्र ने कहा, "तुम कुत्ते से बहुत डरते हो!"

मैंने कहा, "आदमी की शकल में कुत्ते से नहीं डरता। उनसे निपट लेता हूँ। पर बच्चे कुत्ते से बहुत डरता हूँ।"

कुत्तेवाले घर मुझे अच्छे नहीं लगते। वहाँ जाओ तो मेज़बान के पहले कुत्ता भौंककर स्वागत करता है। अपने स्नेही से 'नमस्ते' हुई ही नहीं कि कुत्ते ने गाली दे दी— 'क्यों यहाँ आया बे? तेरे बाप का घर है? भाग यहाँ से!'

फिर कुत्ते के काटने का डर नहीं लगता— चार बार काट ले। डर लगता है उन चौदह बड़े-बड़े इंजेक्शनों का जो डॉक्टर पेट में घुसेड़ता है। यूँ कुछ आदमी कुत्ते से अधिक ज़हरीले होते हैं। एक परिचित को कुत्ते ने काट लिया था। मैंने कहा, “इन्हें कुछ नहीं होगा। हालचाल उस कुत्ते के देखो और इंजेक्शन उसे लगाओ।”

एक नए परिचित ने मुझे घर पर चाय के लिए बुलाया। मैं उनके बँगले पर पहुँचा तो फाटक पर तख्ती टँगी दीखी— ‘कुत्ते से सावधान!’ मैं फ़ोरन लौट गया। कुछ दिनों बाद वे मिले तो शिकायत की, “आप उस दिन चाय पीने नहीं आए।”

मैंने कहा, “माफ़ करें। मैं बँगले तक गया था। वहाँ तख्ती लटकी थी— ‘कुत्ते से सावधान।’ मेरा ख़याल था, उस बँगले में आदमी रहते हैं। पर नेमप्लेट कुत्ते की टँगी दीखी।”

यूँ कोई-कोई आदमी कुत्ते से बदतर होता है। मार्क ट्वेन ने लिखा है— ‘यदि आप भूखे मरते कुत्ते को रोटी खिला दें, तो वह आपको नहीं काटेगा। कुत्ते में और आदमी में यही मूल अंतर है।’

बँगले में हमारे स्नेही थे। हमें वहाँ तीन दिन ठहरना था। मेरे मित्र ने घंटी बजाई तो जाली के अंदर से वही ‘भौं-भौं की आवाज़ आई। मैं दो कदम पीछे हट गया। हमारे मेज़बान आए। कुत्ते को डाँटा— ‘टाइगर! उनका मतलब था— ‘शेर, ये लोग कोई चोर—डाकू नहीं हैं। तू इतना वफ़ादार मत बन।’

कुत्ता जंजीर से बँधा था। उसने देख भी लिया था कि हमें उसके मालिक खुद भीतर ला रहे हैं, पर वह भौंके जा रहा था। मैं उससे काफी दूर से लगभग दौड़ता हुआ भीतर गया।

मैं समझा, यह उच्चवर्गीय कुत्ता है। लगता ऐसा ही है। मैं उच्चवर्गीय का बड़ा अदब करता हूँ। चाहे वह कुत्ता ही क्यों न हो। उस बँगले में मेरी अजब स्थिति थी। मैं हीनभावना से ग्रस्त था— इसी अहाते में एक उच्चवर्गीय कुत्ता और इसी में मैं। वह मुझे हिकारत की नज़र से देखता।

शाम को हम लोग लॉन में बैठे थे। नौकर कुत्ते को अहाते में घुमा रहा था।

मैंने देखा, फाटक पर आकर दो ‘सड़किया’ आवारा कुत्ते खड़े हो गए। वे सर्वहारा कुत्ते थे। वे इस कुत्ते को बड़े गौर से देखते। फिर यहाँ-वहाँ घूमकर लौट आते और इस कुत्ते को देखते रहते। पर यह बँगलेवाला उन पर भौंकता था। वे सहम जाते और यहाँ-वहाँ हो जाते। पर फिर आकर इस कुत्ते को देखने लगते।

मेज़बान ने कहा, “यह हमेशा का सिलसिला है। जब भी यह अपना कुत्ता बाहर आता है, वे दोनों कुत्ते इसे देखते रहते हैं।”

मैंने कहा, “पर इसे उन पर भौंकना नहीं चाहिए। यह पट्टे और जंजीरवाला है। सुविधाभोगी है। वे कुत्ते भुखमरे और आवारा हैं। इसकी और उनकी बराबरी नहीं है। फिर यह क्यों चुनौती देता है।”

रात को हम बाहर ही सोए। जंजीर से बँधा कुत्ता भी पास ही अपने तख्त पर सो रहा था। अब हुआ यह कि आसपास जब भी वे कुत्ते भौंकते, यह कुत्ता भी भौंकता। आखिर यह उनके साथ क्यों भौंकता है? यह तो उन पर भौंकता है। जब वे मुहल्ले में भौंकते हैं तो यह भी उनकी आवाज़ मिलाने लगता है, जैसे उन्हें आश्वासन देता हो कि मैं यहाँ हूँ, तुम्हारे साथ हूँ।

मुझे इसके वर्ग पर शक होने लगा है। यह उच्चवर्गीय कुत्ता नहीं है। मेरे पड़ोस में ही एक साहब के

पास थे दो कुत्ते। उनका रोब ही निराला! मैंने उन्हें कभी भौंकते नहीं सुना। आसपास कुत्ते भौंकते रहते, पर वे ध्यान नहीं देते थे। लोग निकलते, पर वे झपटते भी नहीं थे। कभी मैंने उनकी एक धीमी गुर्राहट ही सुनी होगी। वे बैठे रहते या घूमते रहते। फाटक खुला होता तो भी बाहर नहीं निकलते थे। बड़े रोबीले, अहंकारी और आत्मतुष्ट।

यह कुत्ता उन सर्वहारा कुत्तों पर भौंकता भी है और उनकी आवाज़ में आवाज़ भी मिलाता है। कहता है— मैं तुममें शामिल हूँ। उच्चवर्गीय झूठा रोब भी और संकट के आभास पर सर्वहारा के साथ भी। यह चरित्र है इस कुत्ते का। यह मध्यवर्गीय चरित्र है। यह मध्यवर्गीय कुत्ता है। उच्चवर्गीय होने का ढोंग भी करता है और सर्वहारा के साथ मिलकर भौंकता भी है।

तीसरे दिन रात को हम लौटे तो देखा, कुत्ता त्रस्त पड़ा है। हमारी आहट पर वह भौंका नहीं, थोड़ा—सा मरी आवाज़ में गुर्राया। आसपास वे आवारा कुत्ते भौंक रहे थे, पर यह उनके साथ भौंका नहीं। थोड़ा गुर्राया और फिर निढाल पड़ गया।

मेरे मेज़बान ने बताया, “आज यह बुरी हालत में है। हुआ यह कि नौकर की गफलत के कारण यह फाटक के बाहर निकल गया। वे दोनों कुत्ते तो घात में थे ही। दोनों ने इसे घेर लिया। इसे रगेदा। दोनों इस पर चढ़ बैठे। इसे काटा। हालत ख़राब हो गई। नौकर इसे बचाकर लाया। तभी से यह सुस्त पड़ा है और घाव सहला रहा है। डॉक्टर श्रीवास्तव से कल इसे इंजेक्शन दिलाऊँगा।”

मैंने कुत्ते की तरफ़ देखा। दीन भाव से पड़ा था। मैंने अंदाजा लगाया। हुआ यों होगा—

यह अकड़ से फाटक के बाहर निकला होगा। उन कुत्तों पर भौंका होगा। उन कुत्तों ने कहा होगा— ‘अबे, अपना वर्ग नहीं पहचानता। ढोंग रचता है। ये पट्टा और जंजीर लगाए है। मुफ्त का खाता है। लॉन पर टहलता है। हमें ठसक दिखाता है। पर रात को जब किसी आसन्न संकट पर हम भौंकते हैं, तो तू भी हमारे साथ हो जाता है। संकट में हमारे साथ है, मगर यों हम पर भौंकेगा। हममें से है तो निकल बाहर। छोड़ यह पट्टा और जंजीर। छोड़ यह आराम। घूर पर पड़ा अन्ना खा या चुराकर रोटी खा। धूल में लोट।’

इसे रगेदा, पटका, काटा और धूल खिलाई।

कुत्ता चुपचाप पड़ा अपने सही वर्ग के बारे में चिंतन कर रहा है।

— हरिशंकर परसाई

कुछ करने को

1. यह लेख हरिशंकर परसाई की रचना है जो हिन्दी के महान व्यंग्यकार माने जाते हैं। जैसा कि इस लेख में आपने देखा वे अपने आसपास की साधारण चीज़ों और घटनाओं पर इस तरह लिखते थे कि पढ़ने वाले को हँसी आ जाए। इस तरह हँसाने वाली भाषा का इस्तेमाल करते हुए एक छोटा लेख अपने आसपास की किसी चीज़ या घटना के बारे में लिखें।



इम्तहान / आकलन

अध्याय : 17. आकलन (NCERT Handbook) : किस बारे में आकलन – आकलन कब किया जाना चाहिए – आकलन कैसे (आकलन के चरण) – प्राथमिक कक्षाओं में आकलन – आकलन के बिंदु – आकलन के तरीके – कुछ गतिविधियाँ – आकलन रिपोर्ट का नमूना।

अध्याय : 18. मूल्यांकन (एन.सी.एफ.) : मूल्यांकन का प्रयोजन क्या नहीं है – आकलन का मकसद – शिक्षण के क्रम में ही आकलन – क्या अंकों में नहीं जाँचा जा सकता – आकलन की रूपरेखा और उसका संचालन – स्वआकलन और पृष्ठपोषण – नयी सोच की ज़रूरत।

अध्याय : 19. प्राथमिक स्तर पर आकलन की मौजूदा प्रक्रिया :

शादी तय करने के लिए आए दो परिवार उदास बैठे थे। एक मित्र ने आकर यह देखा, और पूछा क्या बात हुई? यह शादी नहीं हो सकती, बताया गया। क्यों? लड़का-लड़की में कोई नुक्स है? जन्म-पत्री नहीं मिलती? जवाब आया, नहीं वो सब ठीक ठाक है। फिर क्या? क्या दान-दहेज में कोई अड़चन है? जवाब आया, नहीं, दोनों परिवार दहेज के खिलाफ हैं। फिर बात क्या है? जवाब आया, दोनों बी.ए. पास है, मगर लड़की फर्स्ट डिविज़न है, लड़का थर्ड।

बात असल में मज़ाक की नहीं है। पास, फेल कम्पार्टमेंट, फर्स्ट, सेकंड, थर्ड डिविज़न, ये पूरे जीवन भर के लिए छापे लग जाते हैं। दस या बारह साल की पढ़ाई के बाद एक बच्चा तीन घंटे के लिए एक परीक्षा में कुछ प्रश्नों के जवाब लिखता है, और उन जवाबों पर उसे कुछ नम्बर दिए जाते हैं— जो जीवन भर के उसका दिमागी दर्जा तय कर देते हैं। जाहिर है, किसी बच्चे की काबिलियत मापने का यह एक भयानक तरीका है, और लगभग सभी इसकी भयानकता के खिलाफ हैं। हाल में ऐसी बातचीत है कि नम्बर के बजाए 5 या 7 ग्रेड दिए जाएँगे। ठीक है। इससे भयानकता कुछ कम ज़रूर होगी। मगर खत्म नहीं होगी – तीन डिविज़नों की जगह, पाँच या सात डिविज़न हो जाएँगे।

इस भयानकता से घबराकर कुछ शिक्षाविद् इस बात की वकालत करने लगे हैं कि परीक्षाएँ ही नहीं ली जाएँ, जाँच का कोई दर्जेवार पैमाना ही न हो। यह बात दिल को ज़रूर अच्छी लगती है, मगर कुछ सोचने के बाद दिमाग इसे मानने से हिचकिचाता है। इतनी भयानकता के बावजूद, लगभग हजार वर्षों से, धरती के लगभग सभी मुल्कों में, इंसान अपने प्यारे बच्चों को इस भयानकता में झोंकने के लिए मजबूर पाते हैं— इस बात की कोई गहरी वजह ज़रूर होगी।

क्या वजह है? जाँच/परीक्षाएँ क्यों होनी चाहिए? परीक्षा किसकी होती है— बच्चों की, टीचरों की, हेडम.ास्टर्स की, एन.सी.ई.आर.टी./एस.सी.ई.आर.टी. की, शिक्षा बोर्डों की, शिक्षा मंत्री की, प्रदेश की जनता की, देश की?

इन सब की? समाज शिक्षा में अपना पैसा लगाता है, जैसा चिकित्सा में, यातायात में, सेना में, खेलों में, आदि। बेशक, समाज चाहेगा कि यह पैसे बेहतर से बेहतर तरीके से इस्तेमाल किये जाएँ। इसमें किसको एतराज़ हो सकता है? लेकिन, क्या मौजूदा परीक्षण/आकलन यह जाँच ठीक से कर रहा है? लगभग सभी मानेंगे कि सुधार की गुँजाइश है। शिक्षा प्रणाली को थर्ड-डिविज़न दिया जाएगा।

तो क्या होने चाहिए बेहतर इम्तहान/आकलन के तरीके? जिससे बच्चे बेहतर तरीके से पढ़-लिख पाएँ और जीवन भर के बदनामी के बोझ से भी निजात पाएँ? इन सवालों के कुछ जवाब हासिल हैं। पढ़ के देखो।

अध्याय – 17

आकलन (NCERT Handbook)

परिचय :

हम सभी बच्चों के बारे में चिंतित हैं और इसीलिए हम सबका सरोकार इस बात से है कि हर स्कूल एक ऐसी जगह बने जहाँ हर बच्चे को सीखने के मौके मिलें। बच्चों की शिक्षा से जुड़े सभी लोग, विशेषकर अध्यापक इस संबंध में अपने आपको बहुत ही जिम्मेदार मानते हैं। ऐसा उनकी इच्छाओं से जाहिर होता है कि वे सभी बच्चों को उनके गुण और रुचियों के विकास में मदद करने के लिए तत्पर हैं। वे उन्हें विश्वास के साथ अपनी जिंदगी का सामना करने के लिए तैयार करना चाहते हैं। अध्यापकों का काफी समय तो इसी बात का पता लगाने में निकल जाता है कि बच्चे स्कूल में कैसा कर पा रहे हैं। बहुत से अध्यापक आकलन को अपने स्कूल की रोजमर्रा की महत्वपूर्ण गतिविधि के रूप में देखते हैं। अध्यापक विद्यालय में दैनिक आधार पर जो कुछ भी करते हैं, बच्चों का आकलन उनका एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है। ऐसा क्यों है?

अध्यापक इसके लिए बहुत से कारण बताते हैं— एक महत्वपूर्ण कारण यह जानना है कि बच्चों को जो कुछ भी सीखना चाहिए, क्या वे सीख पा रहे हैं? दूसरी वजह एक अवधि विशेष में बच्चों की प्रगति के बारे में भी जानकारी प्राप्त करना है। जो भी हो तीसरी वजह, जिसको सिर्फ अध्यापक ही नहीं बल्कि हम सभी बहुत ही महत्वपूर्ण मानते हैं, वह यह पता लगाना है कि बच्चे की भिन्न-भिन्न विषय/क्षेत्रों में क्या उपलब्धियाँ रहीं। ऐसा शायद इसलिए कि हम बच्चों को 'अच्छी क्वालिटी' (गुणवत्ता) वाली शिक्षा देना चाहते हैं और महसूस करते हैं कि ऐसा तभी संभव हो सकता है जब टेस्ट और परीक्षाओं के ज़रिए पढ़ाए गए विषयों में बच्चों की उपलब्धियों का मूल्यांकन किया जाए। परीक्षणों (टेस्टों) का अपना एक उद्देश्य है पर यदि हम वास्तव में बच्चों को बेहतर तरीके से सीखने में मदद करना चाहते हैं तो हमें यह बात खास तौर से समझने की ज़रूरत है कि टेस्ट/परीक्षाओं में बच्चे द्वारा प्राप्त किए गए अंक और ग्रेड बच्चों की प्रगति या सीखने के बारे में क्या कुछ विशेष बता पाते हैं।

उद्देश्य :

- हम बच्चों का आकलन क्यों कर रहे, तथा वास्तव में आकलन किसका किया जाना चाहिए इस बात की समझ बना पाएँगे।
- अध्यापक केन्द्रित कक्षा एवं बाल केन्द्रित कक्षा में मुख्य अंतर क्या-क्या हैं, इन दोनों कक्षाओं में से बच्चों को सीखने के ज्यादा अवसर किस कक्षा में प्राप्त हो सकेंगे? यह निर्णय कर पाने में सक्षम हो पाएँगे।
- आकलन की प्रक्रिया में प्रत्येक बच्चे के सीखने के तरीके, उसकी गति और उत्तर देने की शैली को भी समान महत्व देना आवश्यक है।
- बच्चों की विविध विषयों एवं अन्य क्षेत्रों में सीखने, संबंधी प्रगति जानने के लिए एक ही तरीका काफी नहीं होता अपितु विविध तरीकों को इस्तेमाल करना आवश्यक है।

आकलन—किस लिए?

आइए, नीचे दिए गए उदाहरण पर नज़र डालते हैं, एक अध्यापक होने के नाते अपने विद्यालय में इस तरह के हालातों से आपका बहुत बार सामना हुआ होगा।

एक प्राथमिक विद्यालय में कक्षा चार के बच्चों को पर्यावरण अध्ययन के अंतर्गत उनकी पाठ्यपुस्तक के जल से संबंधित अध्याय पर आधारित एक टेस्ट दिया गया। तीस बच्चों में से अधिकतर बच्चों ने 10 में से 6 अंक प्राप्त किए हैं। दो बच्चे जिनमें से मैथिली के आठ और रमन के 10 में से 3 अंक आए हैं। अध्यापक ने कक्षा में जब अंक बताए, सभी बच्चे रमन के अंक सुनकर हँसे और उसका मज़ाक भी बनाया क्योंकि उसके अंक सबसे कम थे। उस दिन के बाद से रमन ने कभी नहीं चाहा कि वह स्कूल जाए। उसके माता-पिता के लिए उसे स्कूल जाने के लिए तैयार करना, मनाना बहुत ही कठिन था। ये अंक अध्यापक, माता-पिता या मैथिली और रमन की शिक्षा से सरोकार रखनेवाले किसी को भी क्या बताना चाहते हैं? क्या ये अंक यह बता पाएँगे कि दोनों बच्चों ने क्या और कैसे सीखा और वे दोनों क्या-क्या कर सकते हैं? क्या ये अंक अध्यापकों को बता पाएँगे कि मैथिली और रमन की ज़रूरतों के आधार पर उनके लिए अध्यापन और सीखने की प्रक्रिया में कैसे सुधार लाया जाए?

क्या ये अंक मैथिली और रमन दोनों बच्चों को उनके सीखने के संबंध में किसी तरह का संकेत दे पाएँगे कि आगे किस तरह का सुधार लाया जा सके? बच्चों द्वारा प्राप्त किए गए अंक क्या किसी भी तरह से उनके माता-पिता या समुदाय के सदस्यों को उनकी प्रगति और सीखने के बारे में कोई उपयोगी रिपोर्ट या पृष्ठपोषण दे पाएँगे कि दोनों बच्चों में से कौन क्या जानता है?

दुर्भाग्य से हो क्या रहा है कि इस तरह के मूल्यांकन से कुछ बच्चों को असुरक्षा, तनाव, चिंता और अपमान जैसी स्थितियों का सामना करना पड़ता है जैसा कि रमन के साथ भी हुआ। मूल्यांकन से सिर्फ यही पता लगता है कि बच्चे क्या नहीं जानते बजाए इसके कि बच्चे क्या जानते हैं और क्या कर सकते हैं? इस तरह का मूल्यांकन पाठ्यपुस्तकों में पढ़ाई गई विषय वस्तु और रटत प्रणाली द्वारा प्राप्त की गई जानकारी/ज्ञान का आकलन करने तक ही केंद्रित है। अधिकांशतः यह बच्चों में तुलना करने जैसे भाव रखता है और अवांछनीय प्रतिस्पर्धा को जन्म देता है, यहाँ तक कि मात्र आधे अंक के लिए भी क्या अध्यापक होने के नाते हम चाहते हैं कि सभी बच्चे सीखें? यदि ऐसा है तो आकलन के ज़रिए हम उनमें क्या खोजते हैं?

आप इस सच्चाई को तो ज़रूर स्वीकार करेंगे कि इस तरह की स्थितियाँ विद्यालयों में अकसर देखी जाती हैं। स्थितियाँ कुछ महत्वपूर्ण सवालों की तरफ़ हमारा ध्यान खींचती हैं— हम वास्तव में किस चीज़ का आकलन कर रहे हैं? क्या टेस्टों/परीक्षाओं के अतिरिक्त बच्चों का आकलन करने के कुछ और तरीके भी हो सकते हैं? क्या अंकों और ग्रेड के रूप में रिपोर्ट करना पर्याप्त है? आकलन संबंधी सूचनाएँ किस तरह की मदद करती हैं? हम अपने काम को कठिन बनाए बगैर बच्चों को सीखने के बारे में सूचनाएँ किस तरह की इकट्टी कर सकते हैं? आखिरी सवाल बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि पूरे देश भर में अध्यापक रोज़ाना ही बहुत-सी समस्याओं का सामना करते हैं जैसे— विद्यार्थियों की अधिक संख्या, एक साथ दो-तीन या कभी-कभी तो इससे भी अधिक कक्षाओं को एक साथ बैठाकर पढ़ाना, भरी कक्षाएँ और विद्यालय में सुविधाओं का अभाव। इसके साथ-साथ उन्हें ऐसे बच्चों को पढ़ाना होता है जो भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमि से आते हैं, भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलते हैं और जिनकी विशेष आवश्यकताएँ भी होती हैं। अध्यापकों और उन सभी में, जो चाहते हैं कि बच्चे अपनी अधिकतम योग्यता के अनुसार सीखें, अधिक समय, धैर्य और समझ की ज़रूरत है। इस तरह की स्थितियों में अध्यापकों की मदद किस तरह से की जा सकती है।

इससे पहले कि 'आकलन कैसे किया जाए' पर बात की जाए, यह ज़रूरी होगा कि हम तीन महत्वपूर्ण सवालों को समझने और उन पर चिंतन करने के लिए कुछ समय निकालें—

- प्राथमिक शिक्षा बच्चों में क्या विकसित करे?
- शिक्षा के प्राथमिक चरण के अंत में आप बच्चे से किस तरह की अपेक्षाएँ रखते हैं?
- समग्र व्यक्तित्व के विकास और भिन्न-भिन्न विषय क्षेत्रों के संदर्भ में बच्चों का क्या प्रोफाइल होना चाहिए?

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

इन सवालों के उत्तर आकलन की प्रक्रिया को स्पष्ट दिशा—निर्देश देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। जैसा कि स्पष्ट रूप से नजर भी आ रहा है, तीनों ही सवाल बच्चे पर केंद्रित हैं जो कक्षाओं में होने वाली सीखने—सिखाने की प्रक्रिया का मुख्य केंद्र है। इस समय हमारे सामने बुनियादी जरूरत है आकलन के लिए योजना बनाने और उसका क्रियान्वयन करने की, जिसे हम यह भी नाम दे सकते हैं कि प्राथमिक स्तर पर बच्चे और उसमें सीखने के बारे में समझ बनाना।

बच्चों और उनके सीखने के बारे में समझ बनाना

एक पल के लिए हमें अपने बचपन की ओर लौटना होगा और वर्तमान समय की कक्षाओं और बच्चों के बारे में सोचना होगा जिन्हें हम पढ़ाते हैं। आप इस बात से तो जरूर सहमत होंगे कि हर बच्चे की अपनी पसंद, नापसंद, रुचियाँ, कौशल और व्यवहार के तरीके होते हैं। इस प्रकार हर बच्ची अपने आप में अद्वितीय है। चूँकि प्रत्येक बच्चा अपने आप में एक अद्वितीय व्यक्ति तथा किसी भी स्थिति के प्रति अपने ही ढंग से प्रतिक्रिया करता है। इसलिए बच्चों का आकलन करते समय यह बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाता है कि हम उनमें पाई जाने वाली भिन्नताओं को पहचान सकें और इस सच्चाई को भी स्वीकार करें कि वे सीखने के दौरान भिन्न तरीके से प्रतिक्रिया करते और समझते हैं। आपने इस बात पर जरूर गौर किया होगा कि जब बच्चे पहली कक्षा में प्रवेश करते हैं तब उनके पास बहुत से अनुभव होते हैं और ज्ञान के कुछ प्रकारों का आधार भी होता है। **बच्चे न**

शिक्षा का मतलब है बच्चों के जीवन को अलग—अलग हिस्सों में नहीं बल्कि समग्रता में समझने के लिए शिक्षित करना है, जैसे कि शारीरिक, भावात्मक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक। एक विभाजित या टुकड़ों में बँटा दृष्टिकोण नहीं बल्कि जीवन के प्रति एक समग्र कुल एकीकृत दृष्टिकोण ... शिक्षा के माध्यम से हमें एक मानव को विकसित करना है जो रचनात्मक है, जो सभी कुछ करने के योग्य है, जिसके पास ऐसी बुद्धि है जो कि न तो बोझ से लदी हुई है और न ही जिसे किसी दिशा विशेष में ढाला गया है पर अपने आप में 'समग्र' है। यह मानव जो किसी समाज, जाति और धर्म विशेष का नहीं है, इस तरह की शिक्षा और बुद्धि के साथ जब वह परिपक्वता के स्तर तक पहुँचता है, वह अपनी जिंदगी का निर्माण एक टैक्नीशियन नहीं बल्कि मानव के रूप में करता है।"

तो 'कोरी स्लेट' हैं, जिन्हें उन सूचनाओं और ज्ञान से भरना है जो शिक्षक के ही पास है। आमतौर पर ऐसा ही सोचा जाता है। बच्चे विद्यालय में जिन अनुभवों के साथ आते हैं और जो भी वे जानते हैं उन्हीं को सीखने की प्रक्रिया का आधार बनाना महत्वपूर्ण है। बच्चे पहले से जो भी जानते और समझते हैं उसके आधार पर ही आगे कुछ सिखाने की योजना बननी चाहिए। इसके साथ ही यह समझना भी आवश्यक है कि प्राथमिक स्तर पर बच्चे कैसे सीखते हैं क्योंकि इसी आधार पर सीखने—सिखाने की प्रक्रिया के दौरान बच्चों के आकलन की प्रक्रिया सुनिश्चित की जा सकती है। कुछ महत्वपूर्ण पहलू इस तरह हैं—

- सभी बच्चे सीख सकते हैं यदि उन्हें अपनी ही गति से सीखने दिया जाए और सीखने के अपने ही तरीकों का अनुसरण करने दिया जाए,
- बच्चे स्वाभाविक तौर पर खेल के माध्यम से सीखते हैं। वे एक—दूसरे से बहुत अच्छी तरह सीखते हैं जब वे वास्तव में किसी काम को करने की प्रक्रिया से जुड़े होते हैं,
- सीखना एक सतत प्रक्रिया है इसलिए 'सीखना' सिर्फ विद्यालय में ही नहीं होता। अतः कक्षा में सीखने की प्रक्रिया को घर में जो कुछ भी हो रहा है उससे जोड़ा जाना जरूरी है,
- बच्चे अपने ज्ञान का निर्माण स्वतः करते हैं और केवल तभी नहीं सीखते, जब शिक्षक पढ़ाते हैं। प्राथमिक स्तर पर बच्चे ठोस अनुभवों, खेल, खोजबीन, बहुत—सी चीजों के साथ परीक्षण और बहुत—सी गतिविधियों को वास्तविक रूप से करते हुए बेहतर और अधिक आसानी से सीखते हैं,
- बच्चों के सीखने की दिशा एक सीधी रेखा में नहीं चलती, वह घुमावदार है यानी कि वे पहले सीखी गई

अवधारणाओं तक पुनः पहुँचते हैं और इससे उनकी समझ बेहतर ही होती है,

- सीखने के कार्य से जुड़ी हुई है, बच्चों द्वारा अवलोकित और महसूस किए गए तथ्यों से जुड़ाव बना पाने की प्रक्रिया। जो कुछ भी नया सीखा जा रहा है वह दिए जा रहे तथ्यों और सूचनाओं पर ही आधारित नहीं होता पर उन सबसे भी जुड़ा हुआ होता है और उस सबसे जोड़ा जा सकता है जो विद्यालय, घर या कहीं भी हासिल किया गया होगा। इसलिए सीखना सीधी रेखा में कभी भी नहीं हो सकता है।
- सीखना 'समग्रता' में ही संभव है न कि तब जब ज्ञान को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़ा या विषयों में बाँटा जाए। इसलिए सीखने के लिए समेकित विधि ही बेहतर है,
- यह देखा जाता है कि प्राथमिक स्तर पर बच्चे एक-दूसरे के साथ अंतःक्रिया (खेलते-कूदते, हँसते-गाते) करते हुए बेहतर तरीके से सीख पाते हैं,
- सीखने के दौरान बच्चे बहुत-सी गलतियाँ भी करते हैं जो उनके सीखने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग हैं। गलतियाँ करके ही वे सीखते हैं।

उनके सीखने को खेल, अनुकरण, अभ्यास, मूर्त से अमूर्त की ओर ले जाकर, सरल से जटिल की ओर ले जाकर बढ़ावा दिया जा सकता है और समूची अधिगम प्रक्रिया को आनंदमयी और स्फूर्तिदायक बनाकर भी। इसका तात्पर्य यह है कि सभी बच्चे दी जा रही सूचनाओं के अर्थ अपने पूर्व अनुभवों और अधिगम के आधार पर अपनी ही तरह से बना लेते हैं। यही प्रक्रिया बच्चे को अपनी समझ बनाने और निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित करती है। ज्ञान तक पहुँचने, उसे हासिल करने की हर बच्चे की अपनी एक अनोखी पद्धति होती है। यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है।

अभ्यास

- बच्चों का आकलन केवल अंकों के आधार पर किया जाना आपके विचार में कहाँ तक उचित है?
- बच्चों के सीखने की प्रक्रिया में कौन-कौन से कारक अपना महत्वपूर्ण समान रखते हैं और क्यों?
- सीखना एक समग्र एवं सतत रूप से चलने वाली प्रक्रिया है कैसे?

विद्यालय और कक्षा की समझ

कक्षा में चल रही सीखने-सिखाने की प्रक्रिया काफी हद तक विद्यालय, परिवेश और उसकी संस्कृति पर निर्भर करती है। एक सुरक्षित चिंतामुक्त, सुविधाजनक और खुशनुमा विद्यालयी परिवेश बच्चों को बेहतर तरीके से सीखने और कुछ अधिक हासिल करने में मदद करता है। इस प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए विद्यालय के लिए ज़रूरी है कि विद्यालय में आवश्यक सुविधाएँ हों जैसे- सीखने की सामग्री, सहायक सामग्री, उपकरण और गतिविधियाँ आयोजित करने के लिए साथ-साथ काम करने तथा खेलने के लिए उपयुक्त स्थान। प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के सीखने को खेल विधियों और बाल केंद्रित पद्धतियों द्वारा उन्नत किया जा सकता है। आजकल 'बालकेंद्रित' शब्दावली बहुत अधिक प्रचलन में है, इससे क्या अभिप्राय है? हम दो कक्षाओं पर नज़र डालते हैं, एक अध्यापककेंद्रित है और दूसरी बाल केंद्रित है, दोनों की गतिविधियों पर नज़र डालने से 'बालकेंद्रित' के अर्थ स्पष्ट होंगे।

इन तस्वीरों के आधार पर निश्चित तौर पर हम 'बालकेंद्रित' कक्षा में ही काम करना चाहेंगे और इस तरह की व्यवस्था वाली कक्षा में आकलन-

- बाल केंद्रित पद्धतियाँ इस्तेमाल होंगी, शिक्षार्थियों के बीच पाए जाने वाले अंतरों को ध्यान में रखा जाएगा,
- आकलन प्रत्येक बच्चे की ज़रूरत, गति और सीखने के तरीकों को ध्यान में रखते हुए किया जाएगा,

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

- लचीलापन लिए हुए होगा,
- सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग होगा,
- सतत और सारगर्भित होना।

यहाँ दिखाई जा रही तस्वीर उस कक्षा की तस्वीर है जिसे वास्तव में हम चाहते हैं। इसे बाल केन्द्रित कक्षा कहा जाता है। इस तरह की कक्षाओं में आकलन की प्रक्रिया कुछ इस तरह की होगी—

- बाल केन्द्रित और कक्षा में पाई जाने वाली विविधता को समझने वाली प्रक्रिया,
- हर बच्चे की ज़रूरत, गति और सीखने की शैली के अनुसार चलने वाली प्रक्रिया,
- लचीली ज़रूरत के अनुसार तथा बच्चे की आयु और स्तर के अनुसार चलने वाली,
- सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग सतत और सारगर्भित।

बच्चों का आकलन क्यों किया जाना चाहिए?

हम सभी बच्चों के सीखने और अच्छी शिक्षा पाने को लेकर चिंतित हैं, प्राथमिक कक्षाओं में आकलन क्यों किया जाना चाहिए इसके बहुत से कारण हैं। हम कुछ मुख्य कार्यों में नज़र डालते हैं। इनमें से कुछ आप पहले से ही जानते होंगे और कुछ तो सीखने-सिखाने की प्रक्रिया के दौरान इस्तेमाल भी करते होंगे। कुछ महत्वपूर्ण कार्य हैं—

- भिन्न-भिन्न विषयों में समय की एक अवधि विशेष में बच्चे की प्रगति और उसमें आनेवाले परिवर्तनों का पता लगाना,
- बच्चे की व्यक्तिगत और विशेष ज़रूरतों को पहचानना,
- अधिक उपयुक्त तरीकों के आधार पर अध्यापन और सीखने की स्थितियों की योजना बनाना,
- कोई बच्चा क्या कर सकता है और क्या नहीं, उसकी किन चीज़ों में विशेष रुचि है, वह क्या करना चाहता है और क्या नहीं, इन सबके प्रति समझ बनाने और महसूस करने में बच्चा की मदद करना,
- बच्चे को 'कुछ प्राप्त कर पाने' / पूर्णता की भावना के विकास के लिए प्रोत्साहित करना,
- कक्षा में चल रही सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को बेहतर बनाना,
- बच्चे की प्रगति के प्रमाण तय कर पाना जिन्हें अभिभावकों और दूसरों तक संप्रेषित किया जा सके,
- बच्चे के आकलन के प्रति व्याप्त भय को दूर करना और उन्हें स्व-आकलन के लिए प्रोत्साहित करना,
- प्रत्येक बच्चे के सीखने और विकास में मदद करना और सुधार की संभावनाएँ खोजना।

दो कक्षाओं की तस्वीर



अध्यापक केंद्रित कक्षा	बाल केंद्रित कक्षा
<ul style="list-style-type: none"> ● अध्यापक निर्देश देते हैं और बच्चों से अपेक्षा करते हैं कि बच्चे आज्ञा का पालन करें और अनुशासन में रहें, ● अध्यापक के पढ़ाने के दौरान बच्चे सुनते हैं, ● अध्यापक पाठ्यपुस्तक पढ़ते हैं, श्यामपट्ट पर प्रश्न और उत्तर लिखते हैं। एक समय वह भी होता है जब एक बच्ची ज़ोर-ज़ोर से पढ़ती है, बाकी सुनते हैं, ● पाठ्यपुस्तक में दिए गए तथ्यों या अध्यापक द्वारा बताए गए तथ्यों को याद करते हैं, ● कक्षा में अध्यापक का नियंत्रण रहता है। बच्चों की भागीदारी बहुत कम होती है, ● बच्चे आमतौर पर अकेले (स्वयं में) ही सीखते हैं, ● समय सारणी में लचीलेपन का अभाव होता है, ● बैठने की व्यवस्था भी पहले से ही तय होती है, ● सामग्री केवल प्रदर्शन के लिए होती है, ● बच्चों में हमेशा उकताहट और अरुचि का भाव व्याप्त रहता है। 	<ul style="list-style-type: none"> ● अध्यापक सीखने के अवसर प्रदान करते हैं और सीखने को दिशा देते हैं, ● बच्चे तरह-तरह की गतिविधियों और कार्यकलापों में क्रियाशील होकर जुड़े रहते हैं, ● अध्यापक बच्चों के लिए ऐसी अधिगम स्थितियाँ उत्पन्न करते हैं जहाँ बच्चों को अवलोकन करने, खोजबीन करने, प्रश्न करने, अनुभव लेने और विभिन्न अवधारणाओं के प्रति अपनी समझ बनाने के अवसर मिलते हैं, ● बच्चे स्वयं ही ज्ञान का निर्माण करते हैं जो उनके विद्यालय में या विद्यालय के बाहर प्राप्त अनुभवों पर आधारित होता है, ● बच्चे व्यक्तिगत रूप से भी कार्य करते हैं और समूह में भी वे चर्चा करते हैं, अनुभव बाँटते हैं, सहयोग करते हैं और एक-दूसरे के विचारों का आदर करते हैं, ● समय सारणी में लचीलापन होता है और बच्चे क्या करना चाहते हैं, उन पर निर्भर करता है, ● गतिविधि के अनुसार बैठने की व्यवस्था में परिवर्तन होता रहता है, ● तरह-तरह की सामग्री, उपकरण कक्षा में उपलब्ध रहते हैं और बच्चे इनका इस्तेमाल करते हैं, ● किसी भी व्यक्ति के बाहर से आने पर बच्चों के लिए व्यवधान उपस्थित नहीं होता, चूँकि बच्चे काम में संलग्न रहते हैं अतः अध्यापिका ही बाहर आ जाती है।

अभ्यास

- ऊपर दो प्रकार की कक्षाओं के बारे में बताया गया है, आप एक अध्यापक के रूप में अपनी कक्षा को किस तरह की कक्षा बनाना पसंद करेंगे? अपनी बात को स्पष्ट कारण सहित लिखिए।

किसका/किस बारे में आकलन किया जाना चाहिए?

आकलन के संबंध में उठाए गए सवालों जैसे— 'बच्चों का आकलन क्यों किया जाना चाहिए' के बाद स्वाभाविक है कि बहुत से अध्यापक सवाल करें

आकलन किस बारे में किया जाना चाहिए? हमें अपने आप से सवाल करने की ज़रूरत है कि आखिर वह है क्या जिसकी हमें बच्चों का आकलन करते समय तलाश रहती है। चूँकि शिक्षा बच्चे के कुल समग्र विकास से जुड़ी हुई है (जैसे— शारीरिक, सामाजिक, भावात्मक और संज्ञानात्मक)। इसलिए यह ज़रूरी है कि सभी पहलुओं का आकलन किया जाए, सिर्फ अकादमिक उपलब्धियों का नहीं, जो वर्तमान में विद्यालयों में इस्तेमाल की जा रही आकलन पद्धतियों का मुख्य केंद्र है। इस प्रकार यह बहुत आवश्यक हो जाता है कि विद्यालय और कक्षा के बाहर और भीतर होनेवाली सभी गतिविधियों, जिनमें बच्चे की भागीदारी रहती है, का आकलन किया जाना चाहिए यह आकलन की सारगर्भित प्रक्रिया होगी। आकलन की प्रक्रिया को सूचना और पृष्ठपोषण (feedback) देने का ज़रिया बनाना होगा कि विद्यालय और अध्यापक शिक्षा देने की प्रक्रिया में किस सीमा तक सफल हो पाए हैं। बच्चे के अधिगम की पूरी तस्वीर समझने के लिए आकलन द्वारा निम्नलिखित बिंदुओं को उभारना होगा—

- भिन्न-भिन्न विषयों/क्षेत्रों में बच्चों का सीखना और प्रदर्शन,
- बच्चों के कौशल, रुचियाँ, रुझान और अभिप्रेरणा कुछ और पहलू हैं,
- एक निश्चित अवधि में बच्चों के सीखने और व्यवहार में होनेवाले परिवर्तन,
- विद्यालय के भीतर और बाहर मौजूद भिन्न-भिन्न स्थितियों और अवसरों के प्रति बच्चों की प्रतिक्रिया।

आकलन कब किया जाना चाहिए?

हममें से बहुतों द्वारा पूछा गया एक बहुत ही अहम सवाल 'आकलन किस बात का किया जाए' से जुड़ा हुआ एक ही सवाल है— बच्चों के सीखने की प्रक्रिया और प्रगति को कब और कैसे आँका जाए? सीखने के परिणामों का आकलन अध्यापन अधिगम प्रक्रिया के साथ सतत् रूप से जुड़ा हुआ है। समग्र रूप से आकलन करने के लिए, सीखने के सभी पहलुओं को अपेक्षित पहचान देनी होगी। इस तरह से तो प्रत्येक बच्चे का प्रोफाइल बनाना ज़रूरी हो जाता है। हालाँकि तरीके और पद्धतियाँ तो भिन्न-भिन्न होंगी ही। जब अध्यापक नियमित रूप से बच्चों की प्रगति पर बराबर नज़र बनाए हुए हों तो उस पर प्रतिक्रिया करने, पृष्ठपोषण देने और सुधार संबंधी तरीकों को अपनाने के लिए कुछ अवधियाँ तो तय करनी होंगी। इसके लिए ज़रूरी है कि व्यावहारिक अवधियाँ तय की जाएँ और उनका अनुसरण किया जाए। हालाँकि कक्षा में अनौपचारिक रूप से अवलोकन की प्रक्रिया तो चलती ही रहनी चाहिए। हर पंद्रह दिन में एक बार पीछे मुड़कर देख लेना (बच्चे के शुरुआती दौर को) और पारदर्शिक समीक्षा भी कर लेना ज़रूरी होगा इससे बच्चों के सीखने को उन्नत और सुदृढ़ किया जा सकता है। अतः आकलन—

- दिन-प्रतिदिन के आधार पर— बच्चों के साथ सतत रूप से अन्तःक्रिया करना और सतत रूप से उनका कक्षा और कक्षा के भीतर और बाहर आकलन करना।

- **सावधिक**—हर तीन या चार महीने में एक बार अध्यापक बच्चों के कामों की जाँच करें और एकत्र की गई सूचनाओं के आधार पर उन्हें अपनी राय बताएँ। यह किसी प्रकार की जाँच के रूप में नहीं होना चाहिए।

आकलन कैसे किया जाए?

विभिन्न चरण और विधियाँ जो कि चक्रीय एवं क्रमिक हैं विस्तार से आगे दिए गए चित्र में दिखाई गई हैं।

पहला चरण

भिन्न-भिन्न स्रोतों और विधियों द्वारा सूचना और प्रमाण जुटाना

यदि हम सभी यह स्वीकार करते हैं और मानते भी हैं कि सभी बच्चे अपनी ही शैली से सीखते हैं और वे सिर्फ स्कूल में ही नहीं सीखते तब हमें बच्चों का आकलन करते समय दो चीजों पर तो काम करना ही होगा— पहला, तरह-तरह के स्रोतों से जानकारी इकट्ठी करना, दूसरा, तरह-तरह की गतिविधियों, अनुभवों और अधिगम कार्यकलापों से जुड़े बच्चे क्या वास्तव में सीख रहे हैं, यह जानने और समझने के लिए आकलन की बहुत-सी विधियाँ इस्तेमाल में लाना।

सूचनाओं के स्रोत

आज भी यही देखने में आता है कि अध्यापक ही सूचनाओं का मुख्य स्रोत है और यही वह व्यक्ति है जो बच्चों के सीखने का आकलन भी करता है। जो भी हो, चूँकि आकलन सीखने की प्रक्रिया का ही हिस्सा है, बच्चे स्वयं भी अपने अधिगम और प्रगति का आकलन करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अध्यापक बच्चों की स्वयं का आकलन करने में मदद कर सकते हैं।

बच्चों से क्या अपेक्षा की जा रही है, इसकी बेहतर समझ विकसित करने में मदद की जा सकती है, अपने काम और प्रदर्शन को आलोचनात्मक नज़रिए से देखने के लिए अनुभव प्रदान किए जा सकते हैं। बच्चों से यह भी कहा जा सकता है कि वे अपने उन कामों का चयन करें जो उनकी नज़र में सर्वोत्तम हैं और यह भी बताएँ कि उन्होंने उनका चयन क्यों किया। बच्चों के अतिरिक्त क्या कोई और भी है जिनसे बच्चों के आकलन के संबंध में सूचनाएँ ली जा सकती हैं? बच्चों के विकास के दूसरे पहलुओं की पूरी तस्वीर स्पष्ट करने के लिए इन्हें भी आकलन की प्रक्रिया में शामिल किया जा सकता है। वे कौन हो सकते हैं? अध्यापक और भी बहुत से व्यक्तियों के साथ बातचीत कर उन्हें आकलन की प्रक्रिया में शामिल कर सकते हैं, वे व्यक्ति हो सकते हैं—

- माता-पिता/अभिभावक
- बच्चों के मित्र/सहपाठी
- दूसरे अध्यापक
- समुदाय के लोग

अब अगला सवाल यह उठता है कि भिन्न-भिन्न स्रोतों से सूचना इकट्ठी कैसे की जाए?

आकलन के तरीके

किसी भी तरीके को चुनने से पहले प्राप्त की जानेवाली ज़रूरी सूचनाओं के लिए आकलन के प्रकार का निर्धारण आवश्यक है। आकलन करने के चार मूलभूत तरीके हैं—

- **व्यक्तिगत आकलन**— एक बच्चे को केंद्र में रखते हुए किया गया आकलन जब वह कोई गतिविधि/

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

कार्य करता है और उसे पूर्ण करता है।

- **सामूहिक आकलन**— किसी कार्य को पूर्ण करने के उद्देश्य से बच्चों द्वारा, सामूहिक रूप से कार्य करते समय सीखने और प्रगति का आकलन सामूहिक आकलन है। आकलन का यह तरीका बच्चों के सामूहिक कौशलों, सहयोग द्वारा सीखने की प्रक्रिया तथा बच्चों के व्यवहार से संबंधित अन्य मूल्यों के आकलन के लिए बहुत उपयुक्त पाया गया है।
- **स्व-आकलन**—बच्चे द्वारा स्वयं के सीखने तथा ज्ञान, कौशल, प्रक्रियाओं, रुचि, व्यवहार आदि में प्रगति के स्व-आकलन से संबंधित है।
- **सहपाठियों द्वारा आकलन**— एक बच्चे द्वारा दूसरे बच्चे का आकलन, इसे दो बच्चों की जोड़ी या समूह में करवाया जा सकता है।

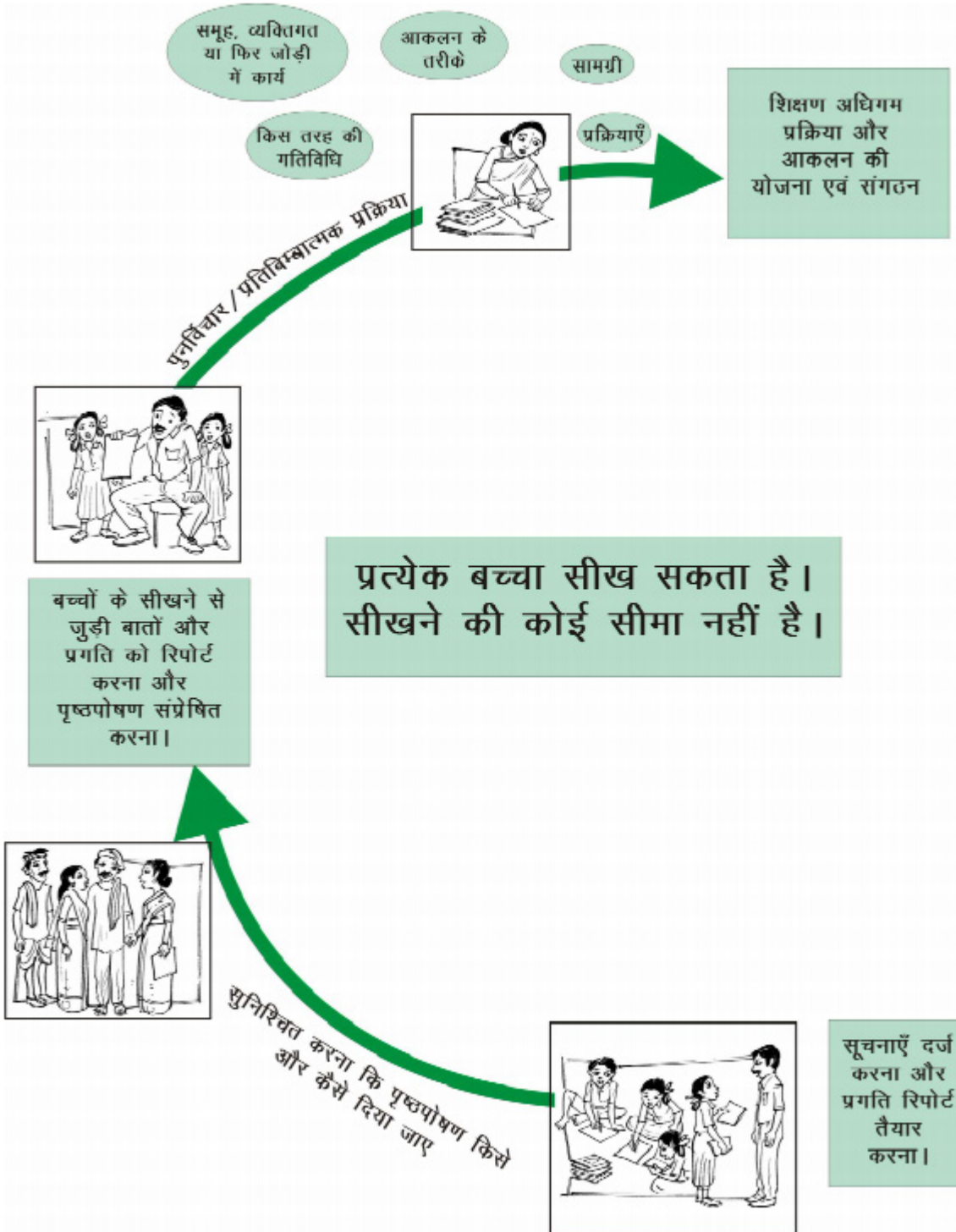
सभी स्कूलों में अध्यापकों द्वारा तैयार किए गए उपकरणों/तकनीकों के इस्तेमाल का ही प्रचलन है। इसमें पेपर, पेंसिल, टेस्ट/कार्यकलाप, लिखित और मौखिक परीक्षाएँ, तस्वीर आधारित सवाल, कृत्रिम (सिमुलेटेड) कार्यकलाप और विद्यार्थियों के साथ वार्तालाप/संवाद शामिल हैं। अध्यापकों द्वारा बच्चों के सीखने की प्रगति का आकलन करने के लिए छोटे-छोटे क्लास टेस्टों का इस्तेमाल एक आसान और शीघ्रगामी तरीके के रूप में किया जाता है।

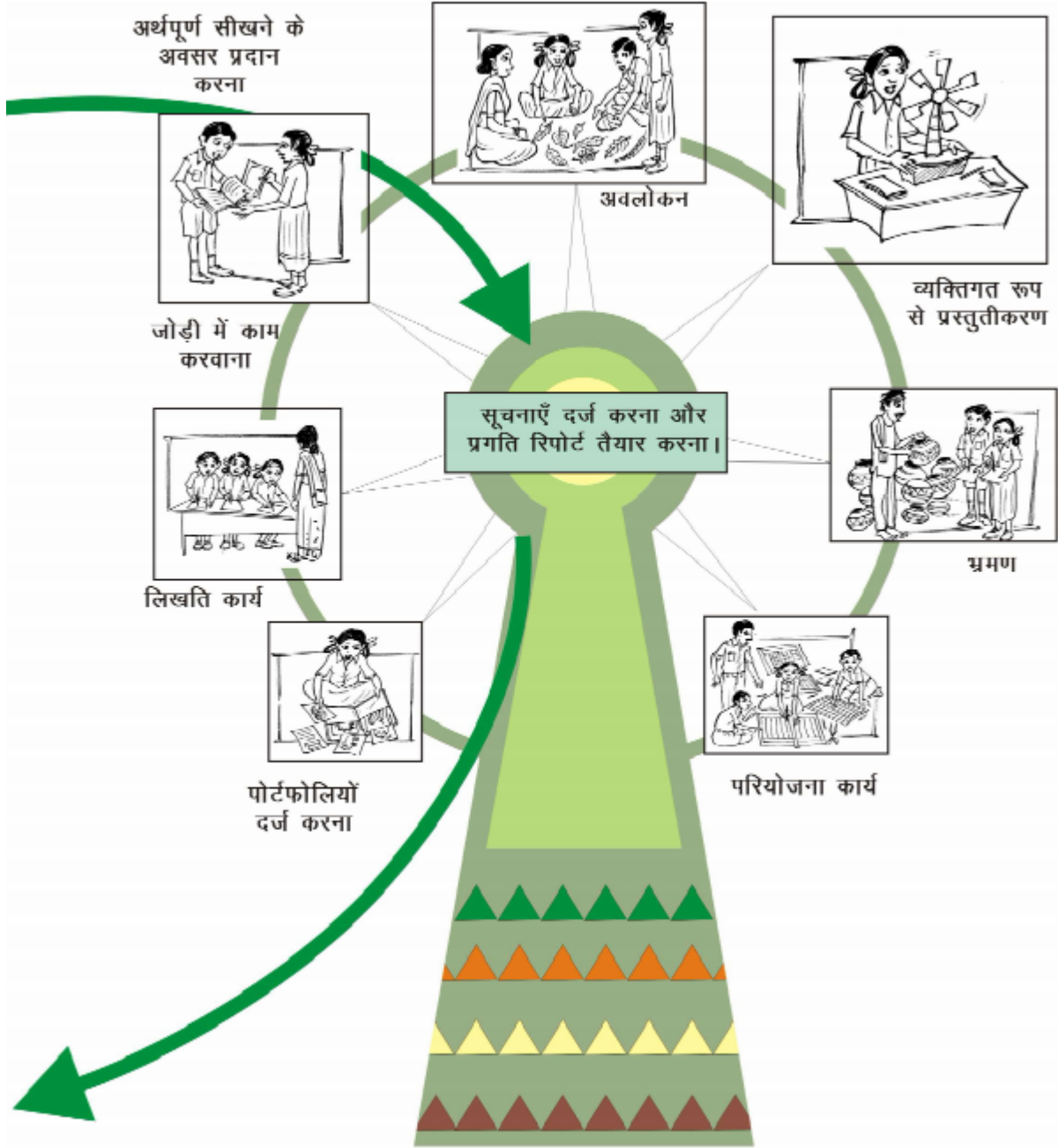
सामान्यतः एक अवधि विशेष में पढ़ाई गई निर्धारित विषय वस्तु के आधार पर सत्र या माह के अंत में ये टेस्ट करवाए जाते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि ये उपयोगी होते हैं परंतु इनका इस्तेमाल बहुत सावधानी के साथ किया जाना चाहिए। इस तरह के परीक्षणों में पूछे जानेवाले सवालों की प्रकृति ऐसी न हो कि उनसे पूर्व-निर्धारित उत्तर ही निकल कर आते हों अपितु इन प्रश्नों की शब्द संरचना इस तरह की हो कि बच्चों को अपने विचार और भाव तरह-तरह से अभिव्यक्त करने की पूरी गुंजाइश हो। टेस्ट में दी जानेवाली प्रविष्टियाँ/प्रश्न कुछ इस प्रकार के हों कि वे चिंतन और विश्लेषण पर बल दें न कि पाठ्यपुस्तकों में दी गई सामग्री को याद करके पुनः लिख देने पर। क्या आपने कभी सोचा है कि तरह-तरह की विधियों का इस्तेमाल क्यों करना चाहिए? ऐसा इस वजह से किया जाता है—

- भिन्न-भिन्न विषयों, क्षेत्रों और विकास के भिन्न-भिन्न पहलुओं में सीखने का आकलन किया जाता है,
- बच्चे एक विधि की तुलना में किसी दूसरी विधि के प्रति बेहतर तरीके से प्रतिक्रिया करते हैं,
- बच्चों के सीखने के संबंध में अध्यापकों की समझ बनाने में हर विधि का अपनी ही तरह से योगदान रहता है।

अभ्यास

- कक्षा 5 के सामूहिक आकलन के लिए एक गतिविधि तैयार कीजिए गतिविधि का विषय एवं उद्देश्य क्या होगा तथा इसे करवाते समय कौन-कौन सी बातें ध्यान में रखना आवश्यक है।





सीखने और आँकने (आकलन) का चक्र

सीखने और आँकने (आकलन) का चक्र

विकास के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में बच्चों की प्रगति और अधिगम के बारे में सूचनाएँ और प्रमाण जुटाने के लिए आकलन का कोई भी एक उपकरण या विधि अपने आप में पर्याप्त नहीं है। पढ़ाते समय आपने ज़रूर महसूस किया होगा कि विद्यार्थियों का अवलोकन करके, उन्हें सुनकर, उनके अभिभावकों, दोस्तों और दूसरे अध्यापकों के साथ उनके बारे में अनौपचारिक तरीके से चर्चा करके, उनके लिखित कार्य (कक्षा तथा गृहकार्य दोनों ही), बच्चों द्वारा लिखे गए लेखों और उनके स्व-आकलन के आधार पर बहुत कुछ समझा जा सकता है।

दूसरा चरण

सूचनाओं को दर्ज करना या सूचनाओं की रिकॉर्डिंग करना

पूरे देश के सभी विद्यालयों में रिपोर्ट कार्ड का इस्तेमाल रिकॉर्डिंग का सर्वाधिक प्रचलित तरीका है। अधिकतर रिपोर्ट कार्डों में बच्चों द्वारा टेस्ट/परीक्षाओं में प्राप्त किए अंकों और ग्रेडों (श्रेणियों) के रूप में सूचनाएँ दर्ज होती हैं। अंकों और ग्रेडों की उपयोगिता तथा निहितार्थ के बारे में पहले ही चर्चा की जा चुकी है। महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि दर्ज करने (रिकॉर्ड रखने) की प्रक्रिया में सुधार लाने के लिए क्या किया जा सकता है। कक्षा में किया गया वार्तालाप बच्चे के व्यवहार तथा सीखने का अवलोकन करने के लिए अनेकानेक अवसर प्रदान करता है। जैसा कि आप जानते हैं कक्षा में नित्य शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के दौरान अनौपचारिक रूप से कुछ अवलोकन किए जा सकते हैं। दिन-प्रतिदिन के अवलोकनों को अगर दर्ज नहीं किया जाए तो शीघ्र ही उनके भूलने की आशंका रहती है। बच्चों के कार्यों/गतिविधियों के कई अवलोकन सुनियोजित होते हैं। इस प्रकार के अवलोकन किसी उद्देश्य से योजनाबद्ध होते हैं और इसीलिए स्वरूप में औपचारिक होते हैं।

सूचना दर्ज करने की प्रक्रिया को और अधिक प्रभावशाली कैसे बनाया जाए

- बच्चों का अवलोकन करना और तुरंत मुख्य बिंदुओं को या फिर देखे जा रहे परिवर्तन को डायरी, रजिस्टर, नोटबुक आदि में दर्ज कर लेना,
- किसी गतिविधि को करने के दौरान या फिर जब गतिविधि पूरी हो जाए, बच्चे का आकलन करना,
- बच्चे द्वारा किए गए काम का या उससे जुड़ी रुचिकर घटना का गुणात्मक उल्लेख यानी कि विस्तार से लिखने के लिए विशेष प्रयास करना,
- बच्चे का प्रोफाइल तैयार करना,
- पोर्टफोलियों में बच्चों के काम के नमूने रखना,
- अवलोकन करते समय तथा सूचना दर्ज करते समय बच्चे से बातचीत करना कि क्या किया जा रहा है और कैसे किया जा रहा है।
- महत्वपूर्ण बदलाव, समस्याओं, सकारात्मक बिंदुओं, मजबूतियों और सीखने के साक्ष्यों को नोट करने के लिए विशेष प्रयास करना,
- सूचना दर्ज करते समय यदि किसी तरह का संदेह उत्पन्न होता है तो तत्क्षण उसे स्पष्ट कर लेना।

ध्यान रखें, पूर्वाग्रह/त्रुटियाँ, दर्ज की जा रही सूचनाओं को प्रभावित करती हैं

बहुधा ऐसा पाया गया है कि बच्चों के सीखने और प्रगति का अवलोकन करते समय कुछ गलतियाँ हो जाती हैं। ये गलतियाँ हमारे पूर्वाग्रहों का परिणाम हो सकती हैं—

- बच्चों की योग्यता, संभाव्यता व कार्य निष्पादन के संबंध में पहले के अनुभव,
- लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को अधिक प्रिय मानना किन्हीं परिस्थितियों में स्थिति इसके उलट (विपरीत) भी हो सकती है,
- दूसरे विषय क्षेत्रों में बच्चों के पूर्व निष्पादन के आधार पर उसके द्वारा किए जा रहे कामों के एक ही पहलू पर विशेष ध्यान देना,
- बच्चे की सामाजिक पृष्ठ, जैसे— जाति, वर्ग, समुदाय, भौगोलिक पृष्ठभूमि (स्थान जहाँ वह रहती है) आदि।
- किसी एक विषय और उसके किसी एक क्षेत्र की परीक्षा से जुड़े पूर्व परिणाम,
- एक ही विषय में किसी एक मानदंड से मिलते—जुलते मानदंड के लिए एक से अंक दे देना। नोट— किस बात का अवलोकन किया जा रहा है, इस बात पर ध्यान देना बहुत ही महत्वपूर्ण है।

बच्चे के सीखने और प्रगति की पूरी तस्वीर देने के लिए इसके क्षेत्र को विस्तृत करने की आवश्यकता है। रिकॉर्डिंग में बच्चों द्वारा किए कार्यों/प्रदत्त कार्यों में उनकी प्रस्तुति के अवलोकन तथा उन पर की गई टिप्पणियों— बच्चे क्या करते हैं, उनका व्यवहार कैसा है की रेटिंग, बच्चों के दूसरों के साथ व्यवहार की घटनाओं को सम्मिलित करने की आवश्यकता है।

संभावनाओं के विस्तार की ज़रूरत है, जिसके अंतर्गत शामिल हो सकते हैं— अवलोकनों के रिकॉर्ड, किसी कार्यकलाप या प्रदत्त कार्य में बच्चों के प्रदर्शन पर टिप्पणियाँ, बच्चे क्या करते हैं और कैसे करते हैं, के बारे में श्रेणियाँ बनाना, दूसरों के साथ बच्चों के व्यवहार से जुड़ी घटनाएँ और वर्णन। यदि आप कर सकें तो नीचे लिखे बिंदुओं से भी आपको मदद मिलेगी—

- बच्चों का अवलोकन करने के बाद तुरंत ही अवलोकनों को दर्ज करें,
- कला और शिल्पकारी, जिनकी बहुत अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता, के क्षेत्र में बच्चों के काम और प्रदर्शन के नमूनों का संग्रह करें,
- गुणात्मक टिप्पणियाँ लिखने के बारे में विचार करें।

यह भी बहुत महत्वपूर्ण है कि जिन सूचनाओं का संग्रह किया गया है, उन्हें अच्छी तरह से समझा जाए और उत्तरों की विभिन्नता तथा विविधता को प्रोत्साहित किया जाए और उसकी सराहना की जाए। इस संबंध में बहुत से उदाहरण और दृष्टांत दिए गए हैं।

अभ्यास

- एक अध्यापक के लिए बच्चे प्रगति देखने के लिए कौन-कौन सी सूचनाओं को रिकार्ड किया जाना महत्वपूर्ण होता है?
- किसी कक्षा में बच्चों के बीच या अध्यापक बच्चों के बीच चल रहे वार्तालाप को रिकार्ड कीजिए तथा इसका विश्लेषण करके पता कीजिए कि इससे आपको बच्चों के बारे में क्या पता चलता है।
- वार्तालाप को आमतौर पर कक्षा में महत्त्व नहीं दिया जाता है सभी शिक्षक चाहते हैं कि उनकी कक्षा सबसे शान्त रहे, उपर्युक्त कथन से आप कितना सहमत है?

तीसरा चरण

एकत्रित सूचनाओं से अर्थ निकालना

एक बार सूचनाएँ दर्ज कर ली जाएँ फिर तीसरा महत्त्वपूर्ण पहलू या अगला चरण है— उपलब्ध साक्ष्यों की मदद से एक समझ बना पाना कि क्या सूचनाएँ इकट्ठी की गईं और दर्ज की गईं और फिर बच्चे के सीखने तथा प्रगति के बारे में निष्कर्ष निकालना। 'बच्चे की प्रगति कैसी है' और बच्चे की मदद के लिए क्या किया जाना चाहिए, यह समझने के लिए रिकॉर्डिंग बहुत ज़रूरी है। इसके लिए ज़रूरी है कि बच्चे के संबंध में दर्ज किए गए रिकॉर्डों का नियमित रूप से विश्लेषण किया जाए और समीक्षा भी। साथ ही संग्रहीत सूचनाओं के प्रति सावधिक प्रतिक्रिया भी दी जाए। ये सभी प्रक्रियाएँ शिक्षक को भी बहुत तरह से मदद करेंगी जैसे— अपनी शिक्षण पद्धतियों, कक्षा प्रबंध सभी शिक्षण शास्त्रीय पहलुओं के साथ—साथ सामग्री का प्रयोग जैसे प्रक्रियाओं के प्रति चिंतन करना और शिक्षार्थी के लाभार्थ, इन सभी में आवश्यक सुधार करना।

संकेतक महत्त्वपूर्ण क्यों हैं?

दिए गए संकेतक अध्यापक की कई तरह से मदद कर सकते हैं—

- सीखने की निरंतरता को ध्यान में रखते हुए बच्चों के सीखने की बेहतर समझ और उसे केंद्र में रखना,
- पर्यवेक्षण, अधिगम और प्रगति को रिपोर्ट करने के लिए एक रूपरेखा प्रदान करते हैं,
- अभिभावकों, बच्चों और कई दूसरों के लिए भी बच्चों की प्रगति को आसान तरीके से समझने के लिए संदर्भ बिंदु की तरह कार्य करते हैं।

यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है कि सूचनाएँ जो एकत्रित की गई हैं, आँकड़ों और प्रमाणों के संग्रह के बाद भी सूचनाओं का संग्रह करना जारी रहना चाहिए। इन संकेतकों के आधार पर गुणात्मक टिप्पणियाँ भी तैयार की जा सकती हैं— एक दिए गए उत्तर के प्रति यह कितना उपयुक्त है— स्वीकार्य, महत्त्वपूर्ण और रुचिकर। बहुधा यह देखा जाता है कि शिक्षार्थी को 'अ' या 'ब' के द्वारा उसके उत्तर/प्रतिक्रिया को चिह्नित किया जाता है शिक्षार्थी के साथ किसी भी तरह की अंतःक्रिया किए बगैर यह बहुत ही आवश्यक विधियों में प्रयोग करें।

- सूचना एकत्र करने की प्रक्रिया सतत रहे और सूचनाओं को दर्ज भी करते चलें।
- प्रत्येक बच्चे को प्रतिक्रिया करने, सीखने और अपना ही समय लेने को महत्त्व दें,
- एक सतत प्रक्रिया के रूप में रिपोर्टिंग भी करें और प्रत्येक बच्चे की प्रतिक्रिया/उत्तर के प्रति सरोकार रखें,
- पृष्ठपोषण (फीडबैक) दें, जो सकारात्मक क्रियाओं के लिए संभावनाएँ जुटाएँ और बच्चे को बेहतर करने के लिए मदद दें।

अब तक जिस नज़रिए की चर्चा की गई है उसके तहत आगे दिए गए अध्याय भिन्न-भिन्न विषय क्षेत्रों में बच्चों का आकलन करने में मदद करेंगे। महत्त्वपूर्ण है कि उत्तरों को सही और गलत के आधार पर अंक या ग्रेड देने से आगे भी कहीं हमको सोचना होगा क्योंकि आकलन संबंधी आँकड़ों का उद्देश्य अध्यापन अधिगम पद्धतियों और प्रक्रियाओं को सुदृढ़ करना है। अध्यापकों को एक समझ बनाने में भी मदद मिलेगी कि बच्चे ने अपनी व्याख्या देने के संदर्भ में जो भी किया है, वह क्यों किया है। इस स्रोत पुस्तक में इन पहलुओं पर विस्तार से उदाहरण देकर चर्चा की गई है। व्याख्या करने के बाद ज़रूरत है योजना बनाने की कि कैसे और किसे आकलन संबंधी पृष्ठपोषण दिया जाना है।

आकलन संबंधी सूचनाओं का इस्तेमाल कैसे किया जा सकता है—

रिपोर्टिंग और पृष्ठपोषण देना

सीखने की प्रक्रिया के दौरान जब आकलन साथ-साथ चल रहा होता है तब अध्यापकों के पास बच्चों के बारे में बहुत-सी सूचनाएँ जुट जाती हैं। सूचनाएँ दर्ज कर लेने के बाद उनका विश्लेषण कर लेने के बाद इनका क्या किया जाए, यह जान लेना भी ज़रूरी होगा। इस बात से आप सहमत होंगे कि सामान्यतः सभी विद्यालयों में विद्यार्थियों के सीखने और प्रगति के आकलन से जुड़ी सूचनाएँ बच्चे और विद्यार्थी दोनों को ही एक रिपोर्ट कार्ड के माध्यम से दी जाती हैं। ये रिपोर्ट कार्ड एक प्रकार से भिन्न-भिन्न विषयों में बच्चों के प्रदर्शन और निष्पादन की एक तस्वीर विद्यालयी सत्र में आयोजित टेस्टों, परीक्षाओं में प्राप्त अंकों और ग्रेडों के आधार पर प्रस्तुत करते हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि अध्यापकों द्वारा विद्यार्थियों का जो आकलन किया जाता है और इस संबंध में वे जो भी रिकॉर्ड रखते हैं, वे सभी अध्यापकों को मदद करते हैं—

- यह समझने में कि बच्चे किस तरह और कितना सीख पा रहे हैं,
- स्वयं की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को उन्नत करने में,
- प्रत्येक बच्चे की सीखने की प्रक्रिया को समुन्नत करने के उद्देश्य से उन्हें और अधिक अर्थपूर्ण अवसर तथा अनुभव प्रदान करने की दिशा में।

उपर्युक्त संदर्भ में रिपोर्टिंग रचनात्मक, संप्रेषणीय तथा इस तरह से प्रस्तुत की जानी चाहिए जिससे कि संबंधित व्यक्ति उसे सरलतापूर्वक समझ सके। यह तभी संभव है जब अध्यापक विद्यार्थी के संबंध में उन सभी सूचनाओं को प्रतिबिंबित करें जो उन्होंने अपने दिन-प्रतिदिन के अनुभव के आधार पर हासिल की हैं और सीखने के क्षेत्र विशेष के संकेतकों के आधार पर प्राप्त की हैं।

अध्यापक द्वारा

दैनिक अथवा सावधिक रूप से किया जानेवाला आकलन आपके लिए तभी मददगार है, जब आप—

- निश्चित अवधि के भीतर (हर तीन महीने के भीतर) निरंतरता को आधार बनाते हुए पोर्टफोलियो तथा दूसरे रिकॉर्डों का आकलन करें,
- बच्चे से जुड़ी महत्वपूर्ण रुचिकर घटनाओं का पुनरावलोकन करें तथा बच्चे के व्यक्तित्व के और भी पहलुओं का आकलन करें,
- बच्चे के संबंध में पहले से अर्जित की गई सूचनाओं से तुलना करें,
- सुनिश्चित करें कि एक बार जिस समस्या का सामना किया गया है, उसकी पुनरावृत्ति न हो,
- समस्याओं/कठिनाइयों को किस तरह से सुलझाया गया है, उन तरीकों को समझा जाए,
- आकलन करें कि बच्चे ने किसी प्रकार की प्रगति की है अथवा नहीं। यदि किसी प्रकार की कमी रह जाती है तो उन पर सीखने-सिखानेवालों की प्रक्रिया के दौरान ही ध्यान दिया जाए।

अध्यापक की प्रतिबिंबात्मक टिप्पणी प्रगति पत्रक बनाने में मदद करेगी। प्रगति पत्रक एक निश्चित अवधि में बच्चे की प्रगति से संबंधित स्पष्ट तस्वीर प्रदान करने में सहायक सिद्ध होगा। इसी स्थिति में अध्यापक द्वारा बच्चों के सीखने की दिशा को अर्थपूर्ण बनाया जा सकता है और समझ तथा कौशल प्राप्ति के निम्न स्तर से उच्च एवं जटिल स्तर की ओर पहुँचाया जा सकता है। इस तरह से हमें इस बात की समझ बनाने में भी मदद मिलती है कि बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में क्या-क्या कठिनाइयाँ आ रही हैं और इन कठिनाइयों

तथा अंतरों का समाधान किस तरह से ढूँढ़ा जा सकता है। पृष्ठपोषण ही वह माध्यम है जिसके जरिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में परिवर्तन लाया जा सकता है।

पृष्ठपोषण के संबंध में महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि अध्यापक द्वारा दी जानेवाली रिपोर्ट में क्या-क्या होना चाहिए। इस रिपोर्ट द्वारा एक निश्चित अवधि में की गई प्रगति का संपूर्ण ब्यौरा होना चाहिए। बच्चे द्वारा की गई प्रगति का उल्लेख किस तरह से किया जा सकता है? आइए, हम इस पर विचार करते हैं कि कौन-कौन सी सूचनाएँ शामिल की जानी चाहिए।

रिपोर्ट— बच्चे द्वारा की जा रही प्रगति को मापना

- विषय क्षेत्रों में ए.बी.सी. ग्रेड देना। ये ग्रेड बच्चे के अधिगम तथा प्रदर्शन के उस विस्तार की ओर ध्यान दिलाएँगे, जो तीन स्तरीय सूची द्वारा दर्शाया जाता है,
- बच्चे द्वारा किए गए कामों का संग्रह और उनका प्रदर्शन बच्चे की सीखने के प्रति समझ बनाने में मददगार होगा,
- बच्चे के व्यक्तित्व के भिन्न-भिन्न पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करके,
- ग्रेड के साथ-साथ बच्चे के सीखने के तरीकों के बारे में गुणात्मक कथन देकर,
- बच्चे द्वारा किए गए कामों के उदाहरण प्रस्तुत करके,
- बच्चे के सीखने की प्रक्रिया के मजबूत पक्ष को और अधिक उभारकर तथा उन पहलुओं पर विशेष ध्यान देकर जहाँ पुनर्बलन की ज़रूरत है।

रिपोर्ट तैयार करते समय अध्यापक के लिए ज़रूरी है कि वह बच्चे और माता-पिता के साथ पृष्ठपोषण संप्रेषित करे। यह पहलू बहुत ही महत्वपूर्ण है और बहुत ही सावधानीपूर्वक रचनात्मक तथा सकारात्मक तरीके से प्रेषित किया जाना चाहिए।

बच्चे को संप्रेषित करना

दिन-प्रतिदिन के अध्यापन में जब बच्चे बहुत-सी गतिविधियों में संलग्न होते हैं, अध्यापक अनौपचारिक रूप से पृष्ठपोषण देते चलते हैं। बच्चे अध्यापकों, दूसरे बच्चों या समूहदार/जोड़ीदार की कार्य प्रणाली का अवलोकन करते समय स्वयं की गलतियाँ भी दूर कर लेते हैं और समुन्नत भी करते चलते हैं। सीखने के संदर्भ में स्थिति समस्याजनक तब हो जाती है जब रिपोर्ट केवल यह दर्शाती है कि बच्चे सही तरह से कर नहीं पाते, यानी कि उनकी अक्षमताओं और असफलताओं का ही चित्रांकन किया जाता है। इस तरह की रिपोर्ट बच्चों को निरुत्साहित करती है। अध्यापक को चाहिए कि वह—

- प्रत्येक बच्चे से उसके काम के बारे में बातचीत करे, कौन-कौन सा काम अच्छी तरह से किया गया है, कौन-सा नहीं और कहाँ-कहाँ सुधार की ज़रूरत है,
- बच्चे और अध्यापक दोनों मिलकर इस बात की पहचान करें कि बच्चों को किस तरह की मदद की ज़रूरत है,
- बच्चे को अपना-अपना पोर्टफोलियो देखने तथा वर्तमान में (हाल ही में) किए गए कामों की तुलना पुराने काम से करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए,
- काम करने की प्रक्रिया के दौरान या बाद में भी सकारात्मक रचनात्मक टिप्पणियाँ देनी ज़रूरी हैं।

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

सबसे महत्वपूर्ण बात जिसे पृष्ठपोषण के माध्यम से सबसे अधिक प्रोत्साहित किया जाना चाहिए वह यह है कि स्वयं की तुलना अपने पिछले कार्यों की प्रगति से करें न कि दूसरे के कार्यों से। उदाहरण के तौर पर "कल एक सप्ताह पहले तक मैं क्या कर पा रही थी और आज मेरा स्तर कहाँ है?" बच्चों के बीच तुलना करना किसी भी मायने में हितकारी नहीं है। आम तौर पर इससे कुछ इस तरह की धारणा जन्म लेती है 'मैं तो एकदम बेकार। मैं तो किसी भी काम की नहीं।' स्थिति इससे भिन्न भी है, यदि किसी बच्चे ने उच्चतम अंक प्राप्त किए हैं या बहुत अच्छा प्रदर्शन किया है, तो उस पर विद्यालय एवं घर दोनों ही स्थलों पर उस स्थिति को बनाए रखने का दबाव बना रहता है।

अभिभावकों के साथ बाँटना

सामान्यतः सभी अभिभावकों को यह जानने में रुचि रहती है कि उनकी बच्ची विद्यालय में कैसा कर रही है, उसने क्या-क्या सीखा है, दूसरे बच्चे किस तरह का प्रदर्शन कर रहे हैं एक निश्चित समयावधि के भीतर उनके बच्चे की क्या प्रगति है। आम तौर पर अध्यापक यह महसूस करते हैं कि उन्होंने अभिभावकों को उनके बच्चों की प्रगति के बारे में भली-भाँति संप्रेषित कर दिया है "अच्छा कर सकती है, 'अच्छा', 'खराब', अधिक प्रयास करने की ज़रूरत है," किसी भी अभिभावक के लिए इन टिप्पणियों की क्या सार्थकता है? क्या इस तरह की टिप्पणियाँ किसी तरह की स्पष्ट सूचना प्रदान कर सकती हैं कि उनकी बच्ची क्या कर सकती है और क्या सीख चुकी है। यह सुझाव दिया जाता है कि आप आसानी से समझी जानेवाली भाषा में पृष्ठपोषण दें—

- बच्ची क्या-क्या कर सकती है, क्या करना चाह रही है और क्या करने में उसे कठिनाई होती है,
- बच्चे को क्या-क्या करना पसंद है और क्या नहीं,
- बच्चों द्वारा किए गए कामों के नमूने गुणात्मक कथन, मात्रात्मक पृष्ठपोषण के साथ प्रस्तुत किए जा सकते हैं,
- बच्चों ने किस तरह से सीखा (प्रक्रिया) और सीखने में कहाँ-कहाँ कठिनाई का सामना किया,
- बच्चों के कार्यों की चर्चा अभिभावकों से करना जो उनकी सफलता और सुधार के क्षेत्रों को दिखाने में मदद करें,
- कठिनाई अनुभव करने पर काम पूरा कर सके या नहीं,
- सहयोग, उत्तरदायित्व, संवेदनशीलता, रुचि आदि पहलुओं पर बात करनी ज़रूरी होगी,
- अभिभावकों के साथ चर्चा करना कि (अ) बच्चों की किस तरह से मदद कर सकते हैं, (ब) घर पर उन्होंने किस तरह का अवलोकन किया है।

आप बच्चे की उन्नति/प्रगति को ग्राफ (लेखा चित्र) के माध्यम से भी प्रस्तुत कर सकते हैं, जिसे समझना बच्चों और अभिभावकों दोनों के लिए सरल होगा।

बच्चों के अधिगम तथा प्रगति के संबंध में एकत्रित की गई सूचनाएँ तथा पृष्ठपोषण अंततः समग्र शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को समुन्नत करेगी और बेहतर तरीके से सीखने के लिए प्रोत्साहित करेगी। यहाँ अध्यापकों द्वारा पुनर्विचार करने व प्रतिबिंबित करने की ज़रूरत है। आकलन का चक्र प्रभावशाली, उपयोगी रूप से चलता रहे, इसके लिए ज़रूरी है कि वे अपनी शिक्षण अधिगम प्रणाली, सहायक शिक्षण सामग्री, गतिविधियों के आयोजन/नियोजन और दूसरे बहुत से पहलुओं पर पुनर्विचार करें।

टीचर्स रिलेक्शन-बच्चों के अधिगम को समुन्नत करना

कुछ महत्वपूर्ण सवाल जो आपको पुनर्विचार करने तथा दूसरों के साथ चर्चा करने में मदद करेंगे—

- क्या मेरे बच्चे पूरी तरह से गतिविधियों में संलग्न हैं और ठीक तरह से सीख पा रहे हैं? यदि नहीं तो वे किस स्तर पर हैं?

- क्या मैं बच्चों की भिन्न-भिन्न ज़रूरतों को समझ सकती हूँ? यदि हाँ तो उन ज़रूरतों की समझ के आधार पर मैं क्या करनेवाली हूँ?
- क्या कुछ ऐसे बच्चे भी हैं, जो पहले स्तर तक पहुँचने में भी कठिनाई अनुभव कर रहे हैं? उन्हें प्रेरित तथा उत्साहित करने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?
- बच्चों को एक स्तर से अगले स्तर तक ले जाने के लिए मुझे अपनी अध्यापन अधिगम प्रक्रिया को उन्नत करने के लिए क्या करना चाहिए?
- मैं बच्चों को स्व आकलन के लिए किस तरह प्रेरित कर सकती हूँ?
- मुझे किन-किन क्षेत्रों में कठिनाइयाँ आती हैं— (बच्चों का समूह बनाने में, बच्चों की उम्र और स्तर के अनुसार गतिविधियों का चयन करने में, सामग्री की कमी व अनुपयुक्तता पर),
- मुझे और भी किस तरह की सहायता की ज़रूरत है? मुझे कौन इस तरह की मदद दे सकता/सकती है? (शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े लोग, अभिभावक, समुदाय, अन्य अध्यापक),
- बेहतर अध्यापन अधिगम अभ्यासों के लिए और क्या-क्या प्रयास किए जा सकते हैं?

यह संभव है— आप ऐसा कर सकते हैं

आकलन एक बहुत रुचिकर तथा लाभदायी उपयोगी प्रक्रिया बन सकती है। इसका साक्षात् अनुभव करने के लिए हमें ध्यान रखना होगा—

- हम बच्चों का आकलन क्यों कर रहे हैं, इस बात में स्पष्टता हो,
- बच्चों पर किसी तरह का ठप्पा नहीं लगाना होगा, जैसे— मंद, निकृष्ट, बुद्धिमान, व्यवधान पहुँचानेवाले और बच्चों की आपस की तुलना से भी बचना होगा,
- विषयों तथा अन्य क्षेत्रों में बच्चों के सीखने संबंधी प्रगति के बारे में सूचनाएँ इकट्ठी करने के लिए विविध प्रकार के तरीकों का इस्तेमाल करना होगा,
- सतत रूप से सूचनाओं का संग्रहण और उन्हें दर्ज करना,
- प्रत्येक बच्चे के सीखने के तरीके, उसकी गति और उत्तर देने की शैली को महत्व देना होगा,
- सतत आधार पर रिपोर्ट देना और प्रत्येक बच्चे की प्रतिक्रिया के प्रति संवेदनशील रहना होगा,
- नकारात्मक टिप्पणियों से बचना होगा। आकलन व पृष्ठपोषण के समय तकनीकी शब्दावली का उपयोग किया जा सकता है,
- सरल व स्पष्ट भाषा में पृष्ठपोषण देना जो बच्चे को सकारात्मक दिशा की ओर प्रवृत्त करने में मदद करे,

अभ्यास

- बच्चों को संप्रेषित करते समय पोर्टफोलियों की भूमिका किस प्रकार महत्वपूर्ण हो सकती है।
- सकारात्मक पृष्ठपोषण मूल्यांकन हेतु कितना आवश्यक है और क्यों?
- छात्रों द्वारा की गई गलतियों को किस तरह के सुधारा जा सकता है?
- परीक्षण के लिए तैयार किए गए प्रश्नों की प्रकृति कैसी होनी चाहिए।
- आकलन में किसी एक विधि का ही इस्तेमाल करना पर्याप्त नहीं होता है, क्यों?



अध्याय – 18

मूल्यांकन (एन.सी.एफ.)

परिचय :

आकलन सीखने-सिखाने और पढ़ने-पढ़ाने की प्रक्रिया का अभिन्न हिस्सा है। सभी बच्चों के सीखने की एक अपनी गति होती है और सीखने के तरीके भी भिन्न-भिन्न होते हैं। भाषा के सन्दर्भ में आकलन का उद्देश्य है— भाषा की समझ, इसे विभिन्न संदर्भों में उपयोग करने की क्षमता और सौंदर्यपरक पहलू परख सकने की क्षमता का मापन करना। एक अच्छा मूल्यांकन और परीक्षा लेने के तरीके सीखने-सीखाने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग बन सकते हैं, जो अध्यापक व बच्चे दोनों को ही अलोचनात्मक प्रतिपुष्टि देते हैं। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 में भाषा शिक्षण में मूल्यांकन एवं एक समग्र भाषिक निपुणता की बात की गई है। विद्यालय में आकलन का शिक्षार्थियों एवं शिक्षकों के लिए क्या महत्त्व है, आकलन में समालोचनात्मक प्रतिपुष्टि का क्या महत्त्व है? आकलन के विभिन्न चरण क्या हैं? आदि के प्रति एन.सी.एफ. 2005 का क्या नज़रिया है, यही हम इस अध्याय में जानेंगे व समझेंगे।

उद्देश्य :

- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 का आकलन के उद्देश्यों एवं प्रयोजन के प्रति क्या नज़रिया है?
- रिपोर्ट कार्ड बच्चों और माता-पिता के सामने बच्चों के कई क्षेत्रों के विकास पर समावेशी, समझ दृष्टिकोण एवं सकारात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।
- विश्वनीय आकलन के लिए सूचना आधारित प्रश्न ना होकर, बहुउत्तरीय प्रश्न होने चाहिए। जिससे में समझा जा सके कि बच्चों ने क्या सीखा और उनके सोचने की प्रक्रिया को कैसे आगे बढ़ाया जा सकता है आदि बातों पर हम अपनी समझ बना पाएंगे।

मूल्यांकन का यह प्रयोजन नहीं है :

- बच्चों को डर के दबाव में अध्ययन के लिए प्रेरित करना।
- बच्चों को नाम देना जैसे 'धीमी गति से सीखने वाला', 'होशियार', 'समस्यात्मक विद्यार्थी'। ऐसे विभाजन अधिगम की सारी जिम्मेदारी विद्यार्थी पर डाल देते हैं और शिक्षाशास्त्र की भूमिका पर से ध्यान हटा देते हैं।
- उन बच्चों को पहचानना जिन्हें उपचारात्मक शिक्षण की आवश्यकता है (इसमें औपचारिक आकलन की प्रतीक्षा किए बिना शिक्षक, शिक्षण के दौरान ही शिक्षाशास्त्रीय योजना और व्यक्तिगत ध्यान देकर यह कर सकता है)।
- अधिगम की कठिनाइयों और समस्या क्षेत्रों की पहचान करना – अवधारणात्मक कठिनाइयों के व्यापक सूचक मूल्यांकन और परीक्षा से पता किए जा सकते हैं। निदान के लिए परीक्षा के विशेष औजारों की और प्रशिक्षण की ज़रूरत होती है। यह ज़रूरत साक्षरता और संख्यनन के आधारभूत क्षेत्रों के लिए है न कि विषयों के लिए।

आकलन और मूल्यांकन

भारतीय शिक्षा में मूल्यांकन शब्द परीक्षा, तनाव और दुर्श्चिता से जुड़ा हुआ है। पाठ्यचर्या की परिभाषा और नवीनीकरण के सभी प्रयास विफल हो जाते हैं, अगर वे स्कूली शिक्षा प्रणाली में जड़ें जमाएँ मूल्यांकन और परीक्षा तंत्र के अवरोध से नहीं जूझ सकते। हमें परीक्षा के उन दुष्प्रभावों की चिंता है जो सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को सार्थक बनाने और बच्चों के लिए आनंददायी बनाने के प्रयासों पर पड़ते हैं। वर्तमान में बोर्ड की परीक्षाएँ स्कूली वर्षों में होने वाले हर आकलन और हर तरह के परीक्षण को नकारात्मक रूप से ही प्रभावित करती हैं। इसमें शाला पूर्व-स्तर में होने वाला आकलन और परीक्षण भी शामिल है।

एक अच्छी मूल्यांकन और परीक्षा पद्धति सीखने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग बन सकती है जिसमें शिक्षार्थी और शिक्षा तंत्र दोनों को ही विवेचनात्मक और आलोचनात्मक प्रतिपुष्टि से फायदा हो सकता है। यह भाग मूल्यांकन और आकलन को संबोधित करते हुए शुरू होता है क्योंकि ये सीखने-सिखाने की प्रक्रिया के लिए पाठ्यचर्या के भाग की तरह प्रासंगिक होते हैं।

आकलन का उद्देश्य

शिक्षा का सरोकार एक सार्थक व उत्पादक जीवन की तैयारी से होता है और मूल्यांकन आलोचनात्मक प्रतिपुष्टि देने का तरीका होना चाहिए। यह प्रतिपुष्टि इस बात की होती है कि हम ऐसी शिक्षा लागू करने में किस हद तक सफलता प्राप्त कर पाएँ। इस परिप्रेक्ष्य से देखें तो वर्तमान में चल रही मूल्यांकन की प्रक्रियाएँ जो केवल कुछ ही योग्यताओं को मापती और आकलित करती हैं बिलकुल ही अपर्याप्त हैं और शिक्षा के उद्देश्यों की ओर प्रगति की संपूर्ण तस्वीर नहीं खींचती हैं।

लेकिन मूल्यांकन का यह सीमित प्रायोजन भी, अकादमिक और शैक्षिक विकास पर प्रतिपुष्टि देने वाला, तभी बन सकता है जब शिक्षक पढ़ाने से पहले ही न केवल आकलन के तरीकों की तैयारी करें बल्कि मूल्यांकन के मानकों और उसके लिए प्रयुक्त होने वाले औजारों की भी तैयारी करें। विद्यार्थियों की उपलब्धि की गुणवत्ता की जाँच के अलावा एक अध्यापक को विभिन्न विषयों में उनकी उपलब्धि की जानकारी इकट्ठा कर, उसका विश्लेषण कर और उसकी व्याख्या करनी होगी। तभी अध्यापक विभिन्न क्षेत्रों में विद्यार्थियों के अधिगम की सीमा की एक समझ बना पाएँगे। आकलन का प्रायोजन निश्चय ही सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं एवं सामग्री का सुधार करना है और उन लक्ष्यों पर पुनर्विचार करना है जो स्कूल के विभिन्न चरणों के लिए तय किए गए हैं। यह पुनर्विचार और सुधार इस आधार पर किया जा सकता है कि शिक्षार्थियों की क्षमता किस हद तक विकसित हुई। यह कहने की ज़रूरत नहीं होनी चाहिए कि यहाँ इस आकलन का मतलब विद्यार्थियों का नियमित परीक्षण कतई नहीं है। बल्कि, दैनिक गतिविधियाँ और अभ्यास के उपयोग से अधिगम का बहुत ही अच्छा आकलन हो सकता है।

सुनियोजित आकलन और नियमित प्रगति रपट शिक्षार्थियों को उनके काम की प्रतिपुष्टि देते हैं और साथ ही वे मानक भी स्थापित करते हैं जिनको पाने के लिए विद्यार्थी प्रयासरत रहते हैं। वे अभिभावकों को उनके बच्चों के अधिगम की गुणवत्ता और उनके विकास के बारे में भी जानकारी देते हैं। ऐसा आकलन प्रतियोगिता

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

को प्रोत्साहन देने का तरीका बिल्कुल नहीं है; अगर कोई शिक्षा में गुणवत्ता चाहता है तो बच्चों का विभाजन कर उन्हें ऐसी श्रेणियों में डालना जिससे उनमें हीन भावना आ जाए तो बिल्कुल नहीं होना चाहिए। अंतिम बिंदु है कि विश्वसनीय आकलन एक रपट देता है, या अध्यापन के एक कोर्स के खत्म होने का प्रमाण देता है या जिससे दूसरे स्कूलों, शैक्षिक संस्थानों, समुदाय और भावी मालिकों (रोज़गार देने वालों) को अधिगम की गुणवत्ता और सीमा के बारे में जानकारी मिल जाती है।

अभ्यास

- सही मायनों में आकलन का प्रयोजन क्या है?
- विद्यार्थियों की सीखने की क्षमता किस हद तक विकसित हुई है? यह पता लगाने के लिए शिक्षक को किन-किन बातों को ध्यान में रखना होगा?

दक्षताएँ : दक्षताएँ शिक्षण और उससे संबंधित आकलन का ध्यान पाठ्यपुस्तक एवं तथ्ययुक्त विषयवस्तु से दूर ले जाने का एक प्रयास है। परन्तु अधिगम के न्यूनतम स्तर के उपागम में दक्षताओं को विस्तृत उप-दक्षताओं और उप-कौशलों में तोड़ा गया है, यह मानकर कि इनका कुल योग दक्षता है। परन्तु अक्सर व्यवहार और प्रस्तुति पर ध्यान देने से अवधारणाओं के लिए तो जगह ही नहीं बचती। उप-कौशलों के इस तार्किक, लेकिन यांत्रिक सूचीकरण से और उनकी उपलब्धि के लिए बनाई गई सख्त समय-सारणी से, कहीं भी न यह झलकता है कि अधिगम एवं दक्षताओं के उपयोग में खुद में ही लचीलापन हो सकता है, और न ही यह झलकता है कि जिस चक्र में दक्षताएँ सीखी जाती हैं, ज़रूरी नहीं है कि वे निर्धारित समय और गति के अनुसार से ही सीखी जाएँगी। यह सरोकर भी कहीं प्रतिबिंबित नहीं होता कि समग्र, दरअसल विभिन्न भागों के जोड़ से ज्यादा भी हो सकता है।

इस विस्तृत सूची के लिए अधिगम और परीक्षण के विषयों की सूची बनाना और पूर्व निर्धारित अधिगम के परिणामों के लिए पढ़ाना बिल्कुल ही अव्यावहारिक है और शिक्षाशास्त्रीय नज़र से अविश्वसनीय भी है।

यह धारणा प्रचलित है कि मूल्यांकन से उन ज़रूरतों को पहचानने में मदद मिलती है, जिन ज़रूरतों को उपचारात्मक शिक्षण से पूरा किया जाता है। इस धारणा ने पाठ्यचर्या की योजना बनाने में बड़ी समस्याएँ पैदा की हैं। इस 'उपचारात्मक' शब्द को उन विशिष्ट/विशेष कार्यक्रमों तक सीमित रखने की ज़रूरत है जो उन बच्चों की क्षमता विकास में मदद करते हैं जिनको पठन/साक्षरता (पठन में असफलता जिससे बाद में बोध पर फर्क पड़ता है) या अंकज्ञान (खासकर गणित के संकेतों वाले पहलू, स्थानीय मान और संगणना संबंधी) में समस्याएँ आती हैं। शिक्षकों को अच्छे निदानकारी परीक्षणों के लिए विशिष्ट प्रशिक्षण की ज़रूरत है, जो उन्हें उपचार के प्रयासों में मदद करेगा। ठीक इसी तरह, निदानात्मक कार्य के लिए भी विशिष्ट रूप से विकसित सामग्री और नियोजन की ज़रूरत है, ताकि शिक्षक प्रत्येक बच्चे के साथ अलग से काम कर पाएँ। इस उपचारात्मक काम की शुरुआत उन चीज़ों से होगी जो बच्चे को पहले से आती हैं और उन चीज़ों तक जाएंगी जिन्हें बच्चे को सीखने की ज़रूरत है। यह आकलन और सतर्क अवलोकन की सतत प्रक्रिया के द्वारा ही संभव है। शब्दों का बिना सोचे-विचारे किया गया उपयोग, प्रभावशाली शिक्षाशास्त्र की आम समस्याओं से हमारा ध्यान हटा देता है और अधिगम एवं असफलता की जिम्मेदारी पूरी तरह से बच्चे पर डाल देता है।

शिक्षार्थियों का आकलन

बच्चे की अधिगम की गुणवत्ता और विस्तार पर लिखी गई एक सार्थक रपट को समावेशी होना चाहिए। हमें एक ऐसी पाठ्यचर्या की आवश्यकता है जिसमें सृजनात्मकता, नवप्रवर्तकता और बालक का संपूर्ण विकास हो। तो ऐसे में पाठ्यपुस्तक आधारित अधिगम और रटे हुए तथ्यों को जाँचने वाले परीक्षण, दोनों ही बेकार हैं। हमें मूल्यांकन और प्रतिपुष्टि को पुनः परिभाषित करने और उनके नए मानक ढूँढने की ज़रूरत है। विशिष्ट विषयों में शिक्षार्थियों की उपलब्धि का बड़े आराम से परीक्षण हो जाता है। उसके अलावा हमें आकलन में सीखने के प्रति अभिवृत्तियों, रुचि और स्वयं सीखने की क्षमता को भी शामिल करना होगा।

अभ्यास

- कक्षा 3 में आते-आते बच्चों में किन-किन भाषागत दक्षताओं का विकास हो जाना चाहिए?
- आकलन का आधार केवल पाठ्यपुस्तक में दी गई सूचनाओं को जाँचना मात्र नहीं होता है। इस बात से आप कितना सहमत हैं? स्पष्ट कीजिए।

शिक्षण के क्रम में आकलन

प्रगति-पत्र (रिपोर्ट कार्ड) तैयार करने से शिक्षक को अपने प्रत्येक विद्यार्थी के बारे में यह सोचने का मौका मिलता है कि उसने सत्र के दौरान क्या सीखा और किस क्षेत्र में उसको ज्यादा मेहनत करने की ज़रूरत है। ऐसे रिपोर्ट कार्ड को लिख पाने के लिए शिक्षक को प्रत्येक विद्यार्थी के बारे में सोचना होगा और इसीलिए रोज़मर्रा के शिक्षण के दौरान उस पर ध्यान देना होगा। इसके लिए विशिष्ट परीक्षाओं की ज़रूरत नहीं है। स्वयं सीखने वाली गतिविधियाँ बच्चों में निरंतर चलने वाले अवलोकनात्मक एवं गुणात्मक आकलन का आधार बनती हैं। अवलोकन के आधार पर रोज़ की दैनंदिनी रखने से निरंतर, सतत एवं व्यापक मूल्यांकन में मदद मिलती है। एक शिक्षक की साप्ताहिक डायरी से लिया गया अंश- “किरण को अपने काम में मज़ा आया। उसको वे किताबें फौरन पसंद आईं जो छोटी थीं और जिनमें जानकारी थी। वह कहता है कि उसे साफ और सादी भाषा पसंद है। तथ्यों को लिखते हुए वह अक्सर संक्षिप्त उत्तर लिखता है। उसका कहना है कि इससे वह चीज़ों को आसानी से समझ पाता है। उसे व्यावहारिक तरीका पसंद है।” इसी तरह विभिन्न स्तर पर बच्चों के काम और उनके बारे में लिखने से शिक्षार्थी और शिक्षक को उसके अधिगम की प्रगति का व्यवस्थित रिकार्ड मिल जाता है।

यह विश्वास कि आकलन से सीखने में आने वाली कठिनाइयों का पता लगना ही चाहिए ताकि उनका उपचार हो सके अक्सर बहुत ही अव्यावहारिक हो जाता है और यह शिक्षाशास्त्रीय प्रयास की ठोस समझ पर आधारित नहीं होता। अवधारणात्मक विकास से जुड़ी समस्याएँ पहचाने जाने के लिए औपचारिक परीक्षण का इंतज़ार नहीं कर सकतीं। पढ़ाने के क्रम के दौरान ही एक शिक्षक ऐसी समस्याओं से अवगत हो सकता है।

पाठ्यचर्या के वे क्षेत्र जो अंकों के लिए जाँचे नहीं जा सकते

पाठ्यचर्या के सभी विषय परीक्षा द्वारा नहीं जाँचे जा सकते; बल्कि ऐसा करना तो पाठ्यचर्या के उन

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

क्षेत्रों के सीखने की प्रकृति के विपरीत होगा। इनमें काम, स्वास्थ्य, योग, शारीरिक शिक्षा, संगीत एवं कला शामिल हैं। यद्यपि शारीरिक शिक्षा और योग के कौशल आधारित पक्षों का परीक्षण किया जा सकता है परन्तु स्वास्थ्य से जुड़े पक्षों को सतत और गुणात्मक आकलन की ज़रूरत होती है। वर्तमान में इन्हें पाठ्यचर्या में कम महत्व देने का चलन है। इन क्षेत्रों के लिए न ही पर्याप्त सामग्री उपलब्ध करवाई जाती है, और न ही पाठ्यचर्या के लिए ढंग से योजना बनाई जाती है और आगे बढ़ें तो इन विषयों को दिए गए समय को 'विशेष पढ़ाई' के लिए हमेशा बलिदान कर दिया जाता है। पाठ्यचर्या के इन भागों के साथ यह बहुत ही बड़ा समझौता है, जबकि इन भागों की गहरी शैक्षिक महत्ता और संभावनाएँ होती हैं।

'अंक' बिना दिए भी बच्चों का इन क्षेत्रों में विकास के लिए आकलन किया जा सकता है। भागीदारी, रुचि, और जुड़ाव तथा जिस स्तर तक क्षमताओं एवं कौशलों का विकास हुआ, ये कुछ सूचक हैं जिनके आधार पर शिक्षक यह समझ बना सकते हैं कि बच्चों को इन गतिविधियों से कितना फायदा हुआ है। बच्चों को अगर अपने अधिगम के बारे में खुद बताने के लिए कहा जाए तो उससे भी शिक्षकों में बच्चों की शैक्षिक उन्नति संबंधी अंतर्दृष्टि विकसित होगी और पाठ्यचर्या एवं शिक्षाशास्त्रीय सुधार करने के आधार मिलेंगे।

अभ्यास

- अंक प्रमाण पत्र की बजाय के आकलन की लिखित रिपोर्ट कार्ड द्वारा तैयार करने से बच्चे के सम्पूर्ण विकास व गति के बारे में अध्यापक को सोचने का मौका मिलता है। इसके लिए अध्यापक को किन-किन बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है तथा क्यों?
- वर्तमान पाठ्यचर्या में शारीरिक शिक्षा योग एवं अन्य कौशलात्मक विषयों को सम्मिलित करने का महत्त्व क्या है?
- इन विषयों में बिना अंक दिए कैसे आकलन किया जा सकता है?
- आकलन के लिए प्रश्न निर्माण करते समय अध्यापक को किन-किन बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है तथा क्यों?

आकलन की रूपरेखा और उसका संचालन

आकलन और परीक्षाओं को विश्वसनीय होना चाहिए, एवं अधिगम को मापने के वैध तरीकों पर आधारित होना चाहिए।

प्रश्न उठाना

एक लौह प्रगलन प्लांट आरंभ करने से पहले कौनसी चार बातें ध्यान में रखने की ज़रूरत होती है?

के स्थान पर

यदि एक उद्योगपति एक लौह प्रगलन प्लांट लगाना चाहता है तो वह किस स्थान का चुनाव करे और क्यों?

चिड़िया की चोंच का आकार अनुकूलन में किस प्रकार से सहायता देता है।

के स्थान पर

अपने पड़ोस में दिखने वाली साधारण चिड़िया की चोंच का चित्र बनाओ। उसकी चोंच के आधार पर वर्णित करो कि उसकी भोजन की आदतें क्या होंगी और तुम्हारे पड़ोस में उसे वैसा भोजन कहाँ मिल पाएगा?

जब तक परीक्षाएँ बच्चों की पाठ्यपुस्तकीय ज्ञान को याद करने की क्षमताओं का परीक्षण करती रहेंगी, तब तक पाठ्यचर्या को सीखने की तरफ मोड़ने के सभी प्रयास विफल होते रहेंगे। पहला बिंदु यह है कि ज्ञान—आधारित विषय क्षेत्रों में परीक्षाएँ ये समझ पाएँ कि बच्चों ने क्या सीखा और उस ज्ञान को समस्या सुलझाने और व्यवहार में लाने की उनकी क्षमता को जाँच पाएँ। इसके अलावा, परीक्षाएँ यह भी जाँचने में सक्षम होनी चाहिए कि विद्यार्थियों की सोचने की प्रक्रियाएँ कैसी हैं तथा यह पता लगा पाएँ कि क्या शिक्षार्थी ने यह सीखा कि जानकारी कहाँ मिलती है, उस जानकारी का इस्तेमाल कैसे करते हैं और उसका विश्लेषण और मूल्यांकन कैसे करते हैं।

आकलन के लिए जो प्रश्न निर्धारित किए जाते हैं उन्हें किताब में दी गई जानकारी से आगे बढ़ाने की ज़रूरत है। कितनी ही बार बच्चों का अधिगम इसलिए बहुत ही सीमित रह जाता है क्योंकि शिक्षक उन उत्तरों को स्वीकार नहीं करते जो कुंजियों में दिए गए उत्तरों से भिन्न होते हैं।

ऐसे प्रश्नों को भी इस्तेमाल करना चाहिए जिनका कोई एक उत्तर नहीं होता और जो बच्चों के सामने चुनौती पेश करते हैं। अच्छे प्रश्न और परीक्षा—पत्र बनाना भी एक कला है और शिक्षकों को ऐसे प्रश्न बनाने पर बल देने की ज़रूरत है। शिक्षकों की अच्छे प्रश्न बनाने की क्षमता और रुचि को बढ़ावा देने के लिए ज़िला या राज्य के स्तर पर प्रतियोगिताएँ की जा सकती हैं। सारे प्रश्न—पत्र कठिनाई की ऐसी रूपरेखा लिए हुए होने चाहिए कि सभी बच्चे सफलता के स्तर को अनुभव कर पाएँ और उत्तर देने एवं समस्या सुलझाने की क्षमता में आत्मविश्वास विकसित कर पाएँ।

खुली—पुस्तक परीक्षा—पत्र बनाना भी एक चुनौती है जिसे स्कूल के प्रत्येक स्तर के पाठ्यचर्या प्रयासों में शामिल करना चाहिए। लेकिन ऐसा करने के लिए अध्यापकों और प्रश्न—पत्र बनाने वालों से यह अपेक्षा होगी कि वे व्याख्या करने और अधिगम के व्यावहारिक पहलू पर ज्यादा जोर दें न कि किताब में दिए गए तर्क और तथ्यों पर। इस तरह के कई सफल उदाहरण हमारे पास मौजूद हैं कि ऐसी परीक्षाएँ बड़े स्तर पर आयोजित की जा सकती हैं और शिक्षक खुद ऐसी परीक्षाओं के परिणामों का नियमन कर सकते हैं और उन पर ऐसे नियमन के लिए भरोसा किया जा सकता है। इसीलिए, परियोजनाओं और प्रयोगशाला के काम के आकलन को भी और विश्वसनीय और पुख्ता बनाया जा सकता है।

यह ज़रूरी है कि जाँचे गए उत्तर वापिस मिलने पर बच्चे अपने उत्तरों को दोबारा लिखें और शिक्षक उन पर पुनर्विचार करें ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि बच्चों ने कुछ सीखा और ऐसी कठिन परीक्षा देने से उन्हें कोई लाभ हुआ।

स्पर्धा प्रोत्साहन तो देती है लेकिन वह प्रेरणा का आंतरिक रूप न होकर बाह्य रूप ही होता है। निश्चय ही इसे स्थापित करना और संचालित करना बड़ा आसान होता है इसीलिए शिक्षक और स्कूली व्यवस्थाएँ उत्कृष्टता की प्रेरणा को पोषण देने के लिए अक्सर इसका सहारा ले लेती हैं। स्कूल पूर्व—प्राथमिक स्तर से ही बच्चों को प्रथम, द्वितीय की श्रेणियों में बाँटने लगते हैं, जिससे उनमें स्पर्धा की भावना आत्मसात हो। इस तरह की प्रतियोगी प्रेरणा के अधिगम पर कई नकारात्मक प्रभाव हो सकते हैं; अक्सर प्रभाव बनाने के लिए सतही स्तर पर सीखना भर पर्याप्त होता है। समय के साथ—साथ बच्चे अपनी रुचि के अनुसार पहल करने की क्षमता खो देते हैं और इस प्रक्रिया में वे क्षेत्र जिनमें पाठ्यचर्या में 'अंक' नहीं दिए जाते उपेक्षित हो जाते हैं। इसका कक्षा की संस्कृति पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है, क्योंकि बच्चे व्यक्तिवादी बनते हैं और सामूहिक कार्य करने की क्षमता खो बैठते हैं। 'परीक्षा' को बिल्कुल असंगत महत्व दिया जाता है और उन पर अनावश्यक ध्यान केंद्रित किया जाता है, जिसमें अक्सर गोपनीयता और निरीक्षण की सख्त व्यवस्था की जाती है। माध्यमिक कक्षाओं तक तो इनके शारीरिक और मनोवैज्ञानिक प्रभाव आसानी से नहीं दिखते हैं लेकिन यह बच्चों में बेहद

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

तनाव को जन्म देता है जिससे वह बहुत जल्दी उत्तेजित होने की हालत में पहुँच जाते हैं। स्कूल और शिक्षकों को अपने आप से पूछने की ज़रूरत है कि क्या इस तरह के व्यवहारों से सच में बहुत ज्यादा लाभ होता है और अधिगम को दरअसल किस हद तक अंक देने और श्रेणीकृत करने की ज़रूरत है।

अभ्यास

- बच्चों में अधिगम को प्रोत्साहन देने के लिए प्रतिस्पर्धा की भावना को बढ़ावा नहीं दिया जाना चाहिए। क्यों?

स्व-आकलन और प्रतिपुष्टि

आकलन की भूमिका उस प्रगति को समझने की होती है जो शिक्षार्थी और शिक्षक निर्धारित लक्ष्यों की दिशा में करते हैं। और इस प्रक्रिया को बेहतर बनाने के लिए उसकी समीक्षा भी करते हैं। प्रतिपुष्टि पाने के ऐसे अवसर हमेशा उपलब्ध होने चाहिए जो प्रदर्शन को दोहराने व सुधारने की दिशा में ले जाएँ, परीक्षाओं व मूल्यांकन के भय का इस्तेमाल किए बिना पढ़ने की दिशा में प्रेरित करें।

विद्यार्थियों की मौजूदगी में की गई जाँच व सुधार कार्य उन्हें इस तरह की प्रतिपुष्टि देते हैं कि उन्होंने क्या सही किया, क्या गलत और क्यों? बच्चों से इस बारे में जानकारी लेना कि उन्होंने कोई उत्तर क्यों दिया, शिक्षक को लिखित उत्तर से आगे जाने में मदद देता है और बच्चों की सोच से जुड़ने का मौका देता है। ऐसी प्रक्रियाएँ परीक्षाओं के डरावने और निर्णायक गुण को भी दूर कर देती हैं और बच्चों को सक्षम बनाती हैं कि वह अपनी गलतियों को समझें, उन पर ध्यान दें और उनसे सीखें। कभी-कभी प्रधानाध्यापक यह कह कर एतराज उठाते हैं कि बच्चों की मौजूदगी में की गई जाँच में वस्तुपरकता नहीं आ पाती। वस्तुपरकता के लिए यह सरोकार बिल्कुल अनुचित है जो प्रतियोगी व्यवस्था से उपजता है और जो बच्चों के परीक्षण में विश्वास रखता है। वस्तुपरकता की दृष्टि से यह सरोकार उस मूल्यांकन के लिए भी अनुचित है जो शैक्षिक लक्ष्यों से सुसंगत हो।

न केवल अधिगम के परिणाम बल्कि अधिगम के अनुभवों का भी मूल्यांकन होना चाहिए। शिक्षार्थी बहुत खुशी से अपने अनुभवों की संपूर्णता पर टिप्पणी देते हैं। व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों स्तर के ऐसे अभ्यास बनाए जा सकते हैं जिनसे बच्चे अपने अधिगम का आकलन करने और उस पर चिंतन करने में सक्षम हो पाएँ। इस तरह के अनुभव उन्हें स्व-नियामन की क्षमताएँ भी देते हैं जो 'सीखने के लिए सीखने' की खातिर ज़रूरी होती है। ऐसी जानकारी शिक्षक के लिए भी बहुत मूल्यवान प्रतिपुष्टि होती है जिसका उपयोग अधिगम की पूरी व्यवस्था को बेहतर बनाने में किया जा सकता है।

बच्चों के साथ की गई प्रत्येक कक्षायी अंतःक्रिया की माँग होगी कि बच्चे अपने काम का खुद मूल्यांकन करें और उनसे यह चर्चा भी हो कि किसका परीक्षण किया जाना चाहिए और यह पता करने के क्या तरीके हैं कि क्षमताओं का विकास दरअसल हुआ कि नहीं। बहुत छोटे बच्चे भी इसका सही आकलन कर सकते हैं कि कौन से काम वे कर पाते हैं और कौन से नहीं। अध्यापन की भूमिका यह है कि वह प्रत्येक बच्चे को उसकी क्षमता के अनुसार सीखने के सर्वश्रेष्ठ मौके दे और इस तरह के अनुभव दे कि जिससे संज्ञानात्मक गुणों का विकास हो, शारीरिक कुशलक्षेम सुनिश्चित हो, खेल-कूद संबंधी गुणों का भी विकास हो और सौंदर्यबोध और भावनात्मकता भी विकसित हो।

यह ज़रूरी है कि रपट कार्ड बच्चों और माता पिता के सामने बच्चों के कई क्षेत्रों में विकास पर एक समावेशी और समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करे। शिक्षक प्रत्येक बच्चे के बारे में ऐसी बातें कह पाएँ जो बताएँ कि उस बालक/शिक्षार्थी पर व्यक्तिगत ध्यान दिया गया है, एक सकारात्मक आत्म छवि को मजबूत करती हो और उनके सामने ऐसे व्यक्तिगत उद्देश्य रख पाती हो जिनको लक्ष्य करते हुए वे काम करें। चाहे अंकों की सूचना दी जा रही हो या श्रेणियों की, शिक्षक के द्वारा दिया गुणात्मक कथन आकलन के समर्थन के लिए बहुत ज़रूरी है। केवल इसी तरह का रिश्ता बनाने के बाद एक शिक्षक विद्यार्थियों को प्रभावित कर सकता है और उनके अधिगम में योगदान दे सकता है। शिक्षा प्रत्येक बच्चे का आकलन करे, इसके अलावा प्रत्येक बच्चा स्वयं का भी आकलन कर सकता है और उस स्व-आकलन को रिपोर्ट कार्ड में शामिल करना चाहिए।

वर्तमान में, कई रिपोर्ट कार्डों में विषय क्षेत्रों पर जानकारी होती है लेकिन बच्चे के विकास के दूसरे पहलुओं पर बताने के लिए कुछ नहीं होता है; जैसे— स्वास्थ्य, शारीरिक कुशलता, खेलों में दक्षता, सामाजिक कौशल, कला और हस्तकला में दक्षता। बच्चों की शिक्षा और उनके विकास के इन पहलुओं पर दिए गए गुणात्मक कथन शैक्षिक सरोकारों का एक समग्र आकलन दे सकेंगे।

अभ्यास

- बच्चों के सीखने की गति एवं रुचि को सकारात्मक प्रतिपुष्टि द्वारा किस प्रकार से आगे बढ़ाया जा सकता है?
- कक्षा 5 के बच्चों के लिए भाषा की अभिव्यक्ति कौशल की जाँच करने के लिए एक सामूहिक अभ्यास बनाइए। साथ ही यह भी स्पष्ट कीजिए कि इस अभ्यास को करवाते समय शिक्षक कैसे बच्चे का स्तर जाँच पाएगा?

वे क्षेत्र जिनके बारे में नए सिरे से सोचने की ज़रूरत है

पाठ्यचर्या के ऐसे कई क्षेत्र हैं जिनका आकलन किया जा सकता है पर जिनके लिए हमारे पास विश्वसनीय और प्रभावी उपकरण नहीं हैं। इसमें वह अधिगम भी शामिल है जिसके लिए समूहों में काम होता है और नाट्य, काम और हस्तकला के क्षेत्रों का अधिगम भी शामिल है जहाँ कौशल एवं दक्षताएँ लंबे समय में विकसित हो पाती हैं और जिन्हें बहुत सावधानी से किए गए अवलोकन की ज़रूरत होती है।

सतत व समावेशी मूल्यांकन को ही एक सार्थक मूल्यांकन माना गया है। हालांकि इस पर भी सावधानीपूर्वक विचार करने की ज़रूरत है कि इसका प्रभावी उपयोग करने के लिए कब लागू करना है। अगर मूल्यांकन को सार्थक रूप से लागू करना है और उसके आकलन की विश्वसनीयता रखनी है तो ऐसा मूल्यांकन शिक्षकों से बहुत ज्यादा समय देने की मांग करता है तथा यह माँग भी करता है कि वह सावधानी और कुशलता से रिकॉर्ड रखे। अगर यह प्रक्रिया महज बच्चों के बोझ को बढ़ाए और सारी गतिविधियों को आकलन का ज़रिया बना दे और उन्हें शिक्षक की ताकत का अनुभव कराती रहे तो वह शिक्षा के प्रयोजन को ही विफल कर देती है। जब तक व्यवस्था ऐसे आकलन के लिए पर्याप्त रूप से तैयार नहीं है तब तक शिक्षकों के लिए यही बेहतर है कि वे आकलन के सीमित रूपों का ही उपयोग करें। लेकिन उसमें वे आयाम शामिल कर लें जिनसे आकलन सीखने के एक सार्थक दस्तावेज़ के रूप में उभर पाए।

अंततः आकलन में विश्वसनीयता को विकसित करने और बनाए रखने की ज़रूरत है जिससे वे प्रतिपुष्टिकरण की भूमिका को सार्थक रूप से निभाते रहें।

विभिन्न चरणों में आकलन

पूर्व प्राथमिक शिक्षा और प्राथमिक चरण की कक्षा 1 एवं 2 : इस स्तर पर आकलन में विभिन्न क्षेत्रों में बच्चों की गतिविधियों पर दिए गए गुणात्मक कथन होने चाहिए और उनके स्वास्थ्य और शारीरिक विकास का आकलन होना चाहिए। यह आकलन रोज़मर्रा की अंतःक्रियाओं के दौरान किए गए अवलोकनों पर आधारित होने चाहिए। किसी भी कारणवश बच्चों की लिखित या मौखिक परीक्षा नहीं होनी चाहिए।

प्राथमिक चरण की कक्षा 3 से 8 तक : यहाँ कई तरीकों का इस्तेमाल किया जा सकता है जिसमें मौखिक एवं लिखित परीक्षा और अवलोकन शामिल हैं। बच्चों को यह पता होना चाहिए कि उनका आकलन किया जा रहा है पर उसको उनकी शैक्षणिक प्रक्रिया के भाग की तरह प्रस्तुत करना चाहिए न कि डरावनी धमकी की तरह। इस चरण पर उपलब्धि के लिए दिए गए अंक और गुणात्मक कथन उन क्षेत्रों के लिए बहुत ज़रूरी हैं जिन पर ज्यादा ध्यान देने की ज़रूरत है। कक्षा 5 से बच्चों के स्व-मूल्यांकन को रिपोर्ट कार्ड में शामिल किया जा सकता है। बड़ी-बड़ी मासिक और वार्षिक परीक्षाओं की जगह समय समय पर छोटी-छोटी परीक्षाएँ होनी चाहिए। ऐसी परीक्षाएँ जिनमें परीक्षण का आधार मानदण्ड हो। कक्षा 7 से सत्रीय परीक्षाएँ शुरू होनी चाहिए जब बच्चे ज्यादा बड़े हिस्से पढ़ने के लिए मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार हों और उत्तरों पर काम करते हुए परीक्षा में कुछ घंटे बिताने लायक हो जाएँ। रिपोर्ट कार्ड में फिर से स्वास्थ्य और पोषण पर सामान्य टिप्पणियाँ देने के साथ-साथ शिक्षार्थी के समग्र विकास पर विशिष्ट टिप्पणियाँ हों और माता-पिता के लिए

। डी.एल.एड.(द्वितीय वर्ष)

सुझाव हों।

माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक चरणों में कक्षा 9 से 12 : पाठ्यचर्या के ज्ञान आधारित क्षेत्रों के लिए आकलन, परीक्षाओं, परियोजनाओं की रिपोर्ट पर आधारित हो सकता है और साथ में शिक्षार्थी का स्व-आकलन भी शामिल हो। बाकी विषयों का आकलन अवलोकन एवं स्व-मूल्यांकन द्वारा किया जाना चाहिए।

रिपोर्ट में विद्यार्थियों के विभिन्न कौशलों/ज्ञान के क्षेत्रों और प्रतिशतांकों के बारे में अधिक विश्लेषण हो। यह बच्चों को उन विषयों को समझने में मदद करेगा जिन पर उन्हें ध्यान देना चाहिए और उनके आगे के विकल्प चयन की प्रक्रिया के लिए एक आधार भी देगा।

अभ्यास

- एक अध्यापक के रूप में पूर्व प्राथमिक शिक्षा और प्राथमिक स्तर की कक्षा के विद्यार्थियों का आकलन करते समय एवं रिपोर्ट बनाते समय किन-किन को ध्यान में रखेंगे जिससे बच्चे के सम्पूर्ण विकास की तस्वीर सामने आ जाए।

प्राशिका मूल्यांकन

1. मूल्यांकन या आकलन समग्र होना चाहिए। इसमें सीखने-सिखाने से सम्बंधित हर पहलू शामिल होना चाहिए, न कि मात्र सीखने वाले।
2. मूल्यांकन से हमें शिक्षार्थी व शिक्षक की क्षमताएँ व कमजोरी दोनों समझने में मदद मिलनी चाहिए और तदनुसार शिक्षण सामग्री व कार्यक्रम के नियोजन में मदद मिलनी चाहिए।
3. मूल्यांकन ऐसा न हो कि शिक्षार्थी डर जाए। उसे अपने बचाव का पूरा अवसर मिलना चाहिए। मूल्यांकन पीड़ादायक नहीं, खुशनुमा और दोस्ताना प्रक्रिया होनी चाहिए।
4. एकमुश्त सालाना इन्तहान प्रणाली भयावह बन ही जाती है। समय-समय पर विभिन्न सामान्य गतिविधियाँ, सामूहिक चर्चा, घर पर करने के कार्य आदि मूल्यांकन के आधार बनने चाहिए।
5. मूल्यांकन का मकसद बच्चों को रोकना नहीं होना चाहिए। सतत मूल्यांकन पाठ्यक्रम में निहित फीडबैक का आधार बन सकता है।
6. बच्चे का मूल्यांकन हमेशा किसी बाहरी कसौटी के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए। मूल्यांकन का आधार उसका अपना विगत प्रदर्शन और पूरी कक्षा का प्रदर्शन होना चाहिए।
7. कई बच्चे किसी एक पहलू में 'कमजोर' होते हैं मगर हो सकता है कि वे किसी अन्य पहलू में मजबूत साबित हों। कोई बच्चा/बच्ची अगर समस्याएँ सुलझाने में सिद्धहस्त हो सकता/सकती है तो कोई अन्य चित्र बनाने या कहानी कहने में।
8. मूल्यांकन के लिए जो गतिविधियाँ चुनी जाएँ वे आमतौर पर कक्षा में की जाने वाली गतिविधियों से अलग तो हों, मगर उसी स्तर और उसी किस्म की हों।

अभ्यास

- सतत और सार्थक मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं?
- मूल्यांकन अध्यापक एवं विद्यार्थी दोनों के लिए किस प्रकार मददगार होता है? स्पष्ट कीजिए।

सीखने के प्रतिफल, कक्षा-6

सीखने-सिखाने की प्रक्रिया	सीखने की संप्राप्ति (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों (भिन्न रूप से सक्षम बच्चों सहित) को व्यक्तिगत, सामूहिक रूप से कार्य करने के अवसर और प्रोत्साहन दिया जाए ताकि उन्हें—</p> <ul style="list-style-type: none"> • अपनी भाषा में बातचीत तथा चर्चा करने के अवसर हों। • प्रयोग की जाने वाली भाषा की बारीकियों पर चर्चा के अवसर हों। • सक्रिय और जागरूक बनाने वाली रचनाएँ, अखबार, पत्रिकाएँ, फिल्म और ऑडियो-वीडियो सामग्री को देखने, सुनने, पढ़ने, लिखने और चर्चा करने के अवसर उपलब्ध हों। • समूह में कार्य करने और एक-दूसरे के कार्यों पर चर्चा करने, राय लेने-देने, प्रश्न करने की स्वतंत्रता हो। • हिंदी के साथ-साथ अपनी भाषा की सामग्री पढ़ने-लिखने की सुविधा (ब्रेल/सांकेतिक रूप में भी) और उन पर बातचीत की आजादी हो। • अपने परिवेश, समय और समाज से संबंधित रचनाओं को पढ़ने और उन पर चर्चा करने के अवसर हों • अपनी भाषा गढ़ते हुए लिखने संबंधी गतिविधियाँ आयोजित हों, जैसे-शब्द खेल। • हिंदी भाषा में संदर्भ के अनुसार भाषा विश्लेषण 	<p>बच्चे —</p> <p>LH601. विभिन्न प्रकार की ध्वनियों (जैसे- बारिश, हवा, रेल, बस, फेरीवाला आदि) को सुनने के अनुभव, किसी वस्तु के स्वाद आदि के अनुभव को अपने ढंग से मौखिक/सांकेतिक भाषा में प्रस्तुत करते हैं।</p> <p>LH602. सुनी, देखी गई बातों, जैसे- स्थानीय सामाजिक घटनाओं, कार्यक्रमों और गतिविधियों पर बेझिझक बात करते हैं और प्रश्न करते हैं।</p> <p>LH603. देखी, सुनी रचनाओं/घटनाओं/ मुद्दों पर बातचीत को अपने ढंग से आगे बढ़ाते हैं, जैसे- किसी कहानी को आगे बढ़ाना।</p> <p>LH604. रेडियो, टी.वी., अखबार, इंटरनेट में देखी/सुनी गई खबरों को अपने शब्दों में कहते हैं।</p> <p>LH605. विभिन्न अवसरों/संदर्भों में कही जा रही दूसरों की बातों को अपने ढंग से बताते हैं, जैसे-आँखों से न देख पाने वाले साथी का यात्रा- अनुभव।</p> <p>LH606. अपने परिवेश में मौजूद लोककथाओं और लोकगीतों के बारे में जानते हुए चर्चा करते हैं।</p> <p>LH607. अपने से भिन्न भाषा, खान-पान, रहन-सहन संबंधी विविधताओं पर बातचीत करते हैं।</p> <p>LH608. सरसरी तौर पर किसी पाठ्यवस्तु को पढ़कर उसकी विषयवस्तु का अनुमान लगाते हैं।</p> <p>LH609. किसी पाठ्यवस्तु की बारीकी से जाँच करते हुए उसमें किसी विशेष बिंदु को खोजते हैं, अनुमान लगाते हैं, निष्कर्ष निकालते हैं।</p> <p>LH610. हिंदी भाषा में विभिन्न प्रकार की सामग्री (समाचार, पत्र-पत्रिका, कहानी, जानकारीपरक सामग्री, इंटरनेट पर प्रकाशित होने वाली सामग्री आदि) को समझकर पढ़ते हैं और उसमें अपनी पसंद-नापसंद, राय, टिप्पणी देते हैं।</p>

<p>(व्याकरण, वाक्य संरचना, विराम चिह्न आदि) करने के अवसर हों।</p> <ul style="list-style-type: none"> • कल्पनाशीलता और सृजनशीलता को विकसित करने वाली गतिविधियों, जैसे- अभिनय, रोल-प्ले, कविता, पाठ, सृजनात्मक लेखन, विभिन्न स्थितियों में संवाद आदि के आयोजन हों और उनकी तैयारी से संबंधित स्क्रिप्ट, लेखन और रिपोर्ट लेखन के अवसर हों। • साहित्य और साहित्यिक तत्वों की समझ बढ़ाने के अवसर हों। • शब्दकोश का प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहन एवं सुलभ परिवेश हो। • सांस्कृतिक महत्व के अवसरों पर अवसरानुकूल लोकगीतों का संग्रह करने, उनकी गीतमय प्रस्तुति देने के अवसर हों। 	<p>LH611. भाषा की बारीकियों/व्यवस्था/ढंग पर ध्यान देते हुए उसकी सराहना करते हैं, जैसे-कविता में लय-तुक, वर्ण-आवृत्ति (छंद) तथा कहानी, निबंध में मुहावरे, लोककविता आदि।</p> <p>LH612. विभिन्न विधाओं में लिखी गई साहित्यिक सामग्री को उपयुक्त उतार-चढ़ाव और सही गति के साथ पढ़ते हैं।</p> <p>LH613. हिंदी भाषा में विविध प्रकार की रचनाओं को पढ़ते हैं।</p> <p>LH614. नए शब्दों के प्रति जिज्ञासा व्यक्त करते हैं और उनके अर्थ समझने के लिए शब्दकोश का प्रयोग करते हैं।</p> <p>LH615. विविध कलाओं; जैसे- हस्तकला, वास्तुकला, खेती-बाड़ी, नृत्यकला आदि से जुड़ी सामग्री में प्रयुक्त भाषा के प्रति जिज्ञासा व्यक्त करते हुए उनकी सराहना करते हैं।</p> <p>LH616. दूसरों के द्वारा अभिव्यक्त अनुभवों को जरूरत के अनुसार लिखना; जैसे सार्वजनिक स्थानों (जैसे-चौराहों नलों, बस अड्डे आदि) पर सुनी गई बातों को लिखना।</p> <p>LH617. हिंदी भाषा में विभिन्न प्रकार की सामग्री (समाचार, पत्र-पत्रिका, कहानी, जानकारी परक सामग्री, इंटरनेट पर प्रकाशित होने वाली सामग्री आदि) को समझकर-पढ़ते हैं और उसमें अपनी पसंद-नापसंद, टिप्पणी को लिखित या ब्रेल भाषा में व्यक्त करते हैं।</p> <p>LH618. विभिन्न विषयों, उद्देश्यों के लिए उपयुक्त विराम-चिह्नों का उपयोग करते हुए लिखते हैं।</p> <p>LH619. विभिन्न अवसरों/संदर्भों में कही जा रही दूसरों की बातों को अपने ढंग से लिखते हैं।</p> <p>LH620. विभिन्न संदर्भों में विभिन्न उद्देश्यों के लिए लिखते समय शब्दों, वाक्य संरचनाओं, मुहावरे आदि का उचित प्रयोग करते हैं।</p>
---	---

सीखने के प्रतिफल, कक्षा-7

सीखने-सिखाने की प्रक्रिया	सीखने की संप्राप्ति (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों (भिन्न रूप से सक्षम बच्चों सहित) को व्यक्तिगत, सामूहिक रूप से कार्य करने के अवसर और प्रोत्साहन दिया जाए ताकि उन्हें –</p>	<p>बच्चे—</p> <p>LH701. विविध प्रकार की रचनाओं को पढ़कर समूह में चर्चा करते हैं।</p>
<p>■ अपनी भाषा में बातचीत-चर्चा करने के अवसर हों।</p> <p>■ प्रयोग की जाने वाली भाषा की बारीकियों पर चर्चा के अवसर हों।</p>	<p>LH702. किसी सामग्री को पढ़ते हुए लेखक द्वारा रचना के परिप्रेक्ष्य में कहे गए विचार को समझकर और अपने अनुभवों के साथ उसकी संगति, सहमति या असहमति के संदर्भ में अपने विचार अभिव्यक्त करते हैं।</p>
<p>■ समूह में कार्य करने और एक-दूसरे के कार्यों पर चर्चा करने, राय लेने-देने, प्रश्न करने की स्वतंत्रता हो।</p>	<p>LH703. किसी चित्र या दृश्य को देखने के अनुभव को अपने ढंग से मौखिक/सांकेतिक भाषा में व्यक्त करते हैं।</p>
<p>■ हिंदी के साथ-साथ अपनी भाषा की सामग्री पढ़ने-लिखने (ब्रेल/सांकेतिक रूप में भी) और उन पर बातचीत की आजादी हो।</p>	<p>LH704. पढ़ी गई सामग्री पर चिंतन करते हुए बेहतर समझ के लिए प्रश्न पूछते परिचर्चा करते हैं।</p>
<p>■ अपने परिवेश, समय और समाज से संबंधित रचनाओं को पढ़ने और उन पर चर्चा करने के अवसर हों।</p>	<p>LH705. अपने परिवेश में मौजूद लोककथाओं और लोकगीतों के बारे में चर्चा करते हैं और उनकी सराहना करते हैं।</p>
<p>■ अपनी भाषा गढ़ते हुए लिखने संबंधी गतिविधियाँ हों; जैसे-शब्द खेल, अनौपचारिक पत्र, तुकबंदियाँ, पहेलियाँ, संस्मरण आदि।</p>	<p>LH706. विविध कलाओं जैसे-हस्तकला, वास्तुकला, खेती-बाड़ी, नृत्यकला और इनमें प्रयोग होने वाली भाषा के बारे में जिज्ञासा व्यक्त करते हैं, उन्हें समझने का प्रयास करते हैं।</p>
<p>■ सक्रिय और जागरूक बनाने वाली रचनाएँ, अखबार, पत्रिकाएँ, फिल्म और अन्य ऑडियो-वीडियो सामग्री को देखने, सुनने, पढ़ने और लिखकर अभिव्यक्त करने की गतिविधियाँ हों।</p>	<p>LH707. विभिन्न संवेदनशील मुद्दों/विषयों; जैसे-जाति, धर्म, रंग, जेंडर, रीति-रिवाजों के बारे में मौखिक रूप में अपनी तार्किक समझ अभिव्यक्त करते हैं।</p>
<p>■ कल्पनाशीलता और सृजनशीलता को विकसित करने वाली गतिविधियाँ ; जैसे-अभिनय, रोल-प्ले, कविता, पाठ, सृजनात्मक लेखन, विभिन्न स्थितियों में संवाद आदि के आयोजन हों और उनकी तैयारी से संबंधित स्क्रिप्ट लेखन और रिपोर्ट लेखन के अवसर हों।</p>	<p>LH708. सरसरी तौर पर किसी पाठ्यवस्तु को पढ़कर उसकी उपयोगिता के बारे में बताते हैं।</p> <p>LH709. किसी पाठ्यवस्तु की बारीकी से जाँच करते हुए उसमें किसी विशेष बिंदु को खोजते हैं।</p>
<p>■ विद्यालय/विभाग/कक्षा की पत्रिका/भित्ति पत्रिका निकालने के लिए प्रोत्साहन हो।</p>	<p>LH710. पढ़ी गई सामग्री पर चिंतन करते हुए बेहतर समझ के लिए प्रश्न पूछते हैं।</p> <p>LH711. विभिन्न पठन सामग्रियों में प्रयुक्त शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों के अर्थ समझते हुए उनकी सराहना करते हैं।</p> <p>LH712. कहानी, कविता आदि पढ़कर लेखन के विविध तरीकों और शैलियों को पहचानते हैं;</p>

	<p>जैसे—वर्णनात्मक, विवरणात्मक, भावात्मक, प्रकृति चित्रण आदि।</p> <p>LH713. किसी पाठ्यवस्तु को पढ़ने के दौरान समझने के लिए जरूरत पड़ने पर अपने किसी सहपाठी या शिक्षक की मदद लेकर उपयुक्त संदर्भ सामग्री; जैसे— शब्दकोश, मानचित्र, इंटरनेट या अन्य पुस्तकों की मदद लेते हैं।</p> <p>LH714. विविध कलाओं; जैसे— हस्तकला, वास्तुकला, खेती—बाड़ी, नृत्यकला आदि से जुड़ी सामग्री में प्रयुक्त भाषा के प्रति जिज्ञासा व्यक्त करते हुए उसकी सराहना करते हैं।</p> <p>LH715. भाषा की बारीकियों/व्यवस्था तथा नए शब्दों का प्रयोग करते हैं; जैसे— किसी कविता में प्रयुक्त शब्द विशेष, पदबंध का प्रयोग—आप बढ़ते हैं तो बढ़ते ही चले जाते हैं या जल—रेल जैसे प्रयोग।</p> <p>LH716. विभिन्न अवसरों/संदर्भों में कही जा रही दूसरों की बातों को अपने ढंग से लिखते हैं; जैसे — अपने गाँव की चौपाल की बातचीत या अपने मोहल्ले के लिए तरह तरह के कार्य करने वालों की बातचीत।</p> <p>LH717. हिंदी भाषा में विभिन्न प्रकार की सामग्री (समाचार, पत्र—पत्रिका, कहानी, जानकारीपरक सामग्री, इंटरनेट प्रकाशित होने वाली सामग्री आदि) को समझकर पढ़ते हैं और उसमें अपनी पसंद—नापसंद के पक्ष में लिखित या ब्रेल भाषा में अपने तर्क रखते हैं।</p> <p>LH718. अपने अनुभवों को अपनी भाषा शैली में लिखते हैं।</p> <p>LH719. विभिन्न विषयों और उद्देश्यों के लिए लिखते समय उपयुक्त शब्दों, वाक्य संरचनाओं, मुहावरों, लोकोक्तियों, विराम—चिह्नों एवं अन्य व्याकरणिक इकाइयों (जैसे— काल, क्रिया विशेषण, शब्द—युग्म आदि का प्रयोग करते हैं।</p> <p>LH720. विभिन्न संवेदनशील मुद्दों/विषयों; जैसे— जाति, धर्म, रंग, जेंडर, रीति—रिवाजों के बारे में लिखित रूप से तार्किक समझ अभिव्यक्त करते हैं।</p> <p>LH721. भित्ति पत्रिका/पत्रिका आदि के लिए तरह—तरह की सामग्री जुटाते हैं, लिखते हैं और उसका संपादन करते हैं।</p>
--	---

सीखने के प्रतिफल, कक्षा-8

सीखने-सिखाने की प्रक्रिया	सीखने की संप्राप्ति (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों (भिन्न रूप से सक्षम बच्चों सहित) को व्यक्तिगत, सामूहिक रूप से कार्य करने के अवसर और प्रोत्साहन दिया जाए ताकि उन्हें-</p> <ul style="list-style-type: none"> ■ अपनी भाषा में बातचीत, चर्चा तथा विश्लेषण करने के अवसर हों। ■ जीवन से जोड़कर विषय को समझने के अवसर हों। ■ प्रयोग की जाने वाली भाषा की बारीकियों पर चर्चा के अवसर हों। ■ समूह में कार्य करने और एक-दूसरे के कार्यों पर चर्चा करने, राय लेने-देने प्रश्न करने की स्वतंत्रता हो। ■ हिंदी के साथ-साथ अपनी भाषा की सामग्री पढ़ने-लिखने (ब्लॉक/सांकेतिक रूप में भी) और उन पर बातचीत की आजादी हो। ■ अपने परिवेश, समय और समाज से संबंधित रचनाओं को पढ़ने और उन पर चर्चा करने के अवसर हों। ■ अपनी भाषा गढ़ते हुए लिखने संबंधी गतिविधियाँ हों; जैसे-शब्द खेल, कविता, गीत, चुटकलें पत्र आदि। ■ सक्रिय और जागरूक बनाने वाली रचनाएँ, अखबार, पत्रिकाएँ, फिल्म और अन्य ऑडियो-वीडियो सामग्री को देखने, सुनने, पढ़ने और लिखकर अभिव्यक्त करने की गतिविधियाँ हों। ■ कल्पनाशीलता और सृजनशीलता को विकसित करने वाली गतिविधियाँ; जैसे-अभिनय, रोल-प्ले, कविता, पाठ, सृजनात्मक लेखन, विभिन्न स्थितियों 	<p>बच्चे -</p> <p>LH801- विभिन्न विषयों पर आधारित विविध प्रकार की रचनाओं को पढ़कर चर्चा करते हैं, जैसे- पाठ्यपुस्तक में किसी पक्षी के बारे में पढ़कर पक्षियों पर लिखी गई बातों को पढ़कर चर्चा करते हैं।</p> <p>LH802- हिंदी भाषा में विभिन्न प्रकार की सामग्री (समाचार, पत्र-पत्रिका, कहानी, जानकारी परक सामग्री, इंटरनेट, ब्लॉक पर छपने वाली सामग्री आदि) को समझकर पढ़ते हैं और उसमें अपनी पसंद-नापसंद, टिप्पणी, राय, निष्कर्ष आदि को मौखिक/सांकेतिक भाषा में अभिव्यक्त करते हैं।</p> <p>LH803- पढ़ी गई सामग्री पर चिंतन करते हुए समझ के लिए प्रश्न पूछते हैं।</p> <p>LH804- अपने परिवेश में मौजूद लोककथाओं और लोकगीतों के बारे में बताते/सुनाते हैं।</p> <p>LH805- पढ़कर अपरिचित परिस्थितियों और घटनाओं की कल्पना करते हैं और उन पर अपने मन में बनने वाली छवियों और विचारों के बारे में मौखिक/सांकेतिक भाषा में बताते हैं।</p> <p>LH806- विभिन्न संवेदनशील मुद्दों/विषयों; जैसे-जाति, धर्म, रंग, जेंडर, रीति-रिवाजों के बारे में अपने मित्रों, अध्यापकों या परिवार से प्रश्न करते हैं; जैसे- अपने मोहल्ले के लोगों से त्योहार मनाने के तरीके पर बातचीत करना।</p> <p>LH807- किसी रचना को पढ़कर उसके सामाजिक मूल्यों पर चर्चा करते हैं। उसके कारण जानने की कोशिश करते हैं; जैसे- अपने आस-पास रहने वाले परिवारों और उनके रहन-सहन पर सोचते हुए प्रश्न करते हैं-रामू काका की बेटी स्कूल क्यों नहीं जाती?</p> <p>LH808- विभिन्न प्रकार की सामग्री, जैसे कहानी, कविता, लेख, रिपोतार्ज, संस्मरण, निबंध, व्यंग्य आदि को पढ़ते हुए अथवा पाठ्यवस्तु की बारीकी से जाँच करते हुए उसका अनुमान लगाते हैं, विश्लेषण करते हैं, विशेष बिंदु को खोजते हैं।</p> <p>LH809- पढ़ी गई सामग्री पर चिंतन करते हुए बेहतर समझ के लिए प्रश्न पूछते हैं।</p> <p>LH810- विभिन्न पठन सामग्रियों में प्रयुक्त शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों को समझते हुए उनकी सराहना करते हैं।</p> <p>LH811- कहानी, कविता आदि पढ़कर लेखन के विविध तरीकों और शैलियों को पहचानते हैं; जैसे- वर्णनात्मक, विवरणात्मक, भावात्मक, प्रकृति चित्रण आदि।</p>

<p>में संवाद आदि के आयोजन हों और उनकी तैयारी से संबंधित स्क्रिप्ट लेखन और रिपोर्ट लेखन के अवसर हों।</p>	<p>LH812- विभिन्न पठन सामग्रियों को पढ़ते हुए उनके शिल्प की सराहना करते हैं और अपने स्तरानुकूल मौखिक, लिखित, ब्रेल/सांकेतिक रूप में उसके बारे में अपने विचार व्यक्त करते हैं।</p> <p>LH813- किसी पाठ्यवस्तु को पढ़ने के दौरान समझने के लिए जरूरत पड़ने पर अपने किसी सहपाठी या शिक्षक की मदद लेकर उपयुक्त संदर्भ सामग्री; जैसे-शब्दकोश, विश्वकोश, मानचित्र, इंटरनेट या अन्य पुस्तकों की मदद लेते हैं।</p> <p>LH814- अपने पाठक और लिखने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अपनी बात को प्रभावी तरीके से लिखते हैं।</p> <p>LH815- पढ़कर अपरिचित परिस्थितियों और घटनाओं की कल्पना करते हैं और उन पर अपने मन में बननेवाली छवियों और विचारों के बारे में लिखित या ब्रेल भाषा में अभिव्यक्ति करते हैं।</p> <p>LH816- भाषा की बारीकियों/व्यवस्था का लिखित प्रयोग करते हैं; जैसे-कविता के शब्दों को बदलकर अर्थ और लय को समझना।</p> <p>LH817- विभिन्न अवसरों/संदर्भों में कही जा रही दूसरों की बातों को अपने ढंग से लिखते हैं; जैसे-स्कूल के किसी कार्यक्रम की रिपोर्ट बनाना या फिर अपने गाँव के मेले के दुकानदारों से बातचीत।</p> <p>LH818- अपने अनुभवों को अपनी भाषा शैली में लिखते हैं। लेखन के विविध तरीकों और शैलियों का प्रयोग करते हैं; जैसे-विभिन्न तरीकों से (कहानी, कविता, निबंध आदि) कोई अनुभव लिखना।</p> <p>LH819- दैनिक जीवन से अलग किसी घटना/स्थिति पर विभिन्न तरीके से सृजनात्मक ढंग से लिखते हैं; जैसे-सोशल मीडिया पर, नोटबुक पर या संपादक के नाम पत्र आदि।</p> <p>LH820- विविध कलाओं, जैसे- हस्तकला, वास्तुकला, खेती-बाड़ी, नृत्यकला और इनमें प्रयोग होने वाली भाषा (रजिस्टर) का सृजनात्मक प्रयोग करते हैं, जैसे- कला के बीज बोना, मनमोहक मुद्राएँ, रस की अनुभूति।</p> <p>LH821- अपने पाठक और लिखने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अपनी बात को प्रभावी तरीके से लिखते हैं।</p> <p>LH822- अभिव्यक्ति की विविध शैलियों/रूपों को पहचानते हैं, स्वयं लिखते हैं; जैसे- कविता, कहानी, निबंध आदि।</p> <p>LH823- पढ़कर अपरिचित परिस्थितियों और घटनाओं की कल्पना करते हैं और उन पर अपने मन में बननेवाली छवियों और विचारों के बारे में लिखित/ ब्रेल भाषा में अभिव्यक्ति करते हैं।</p>
---	--



शिव मंदिर, पाली, कोरबा

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर